चारों धामकी झाँकी

लेखक-

विश्वेश्वरदयाल पाठक

मिलनेका पता-

गीताप्रेस, गोरखपुर

मुद्रक तथा प्रकाशक
घनश्यामदास जालान
गीताप्रेस गोरखपुर

मूल्य १।)

श्रीहरि

निवेदन

यह पुस्तक प्रेसमें कई वर्षोंसे छपकर पड़ी हुई थी, जो अब प्रकाशित की जा रही है। प्रकाशनमें इतनी देर क्यों हुई? इसके सम्बन्धमें कुछ निवेदन किया जा रहा है। आजसे लगभग दो वर्ष पहले हम लोगोंको भारतवर्षके बहुत से तीर्थोंमें भ्रमण करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इसके पहलेसे ही यह पुस्तक छप गयी थी। तीर्थोंसे लौटनेपर जब यह पुनः पढ़ी गयी तो इसमें अनेकों स्थलोंपर विशेष संशोधन एवं परिवर्तनकी आवश्यकता मालूम हुई। साथ ही कई दृष्टियोंसे इसमें त्रुटियाँ दिखायी पड़ीं। फलतः एक बार यह विचार हो गया कि यह पुस्तक प्रकाशित न की जाय। परन्तु दूसरी कठिनाई सामने यह थी कि इसका प्रकाशन स्वीकृत हो चुका था, जिसकी सूचना लेखकको दे दी गयी थी। इसके अलावे, जैसा कि पहले बता चुके हैं पूरी पुस्तक छप भी गयी थी। लेखक महोदयकी बड़ी अभिलाषा थी कि पुस्तक शीघ्र प्रकाशित हो। इन सब बातोंपर विचार करके यह संस्करण प्रकाशित करनेको बाध्य होना पड़ा। यद्यपि पुस्तक छप चुकी थी, तो भी

इसमें कई स्थलोंपर यथासम्भव सुधार किया गया। अनेकों स्थानोंपर चिप्पी छापकर लगायी गया। कई छपे पन्ने निकाल दिये गये और उनकी जगह नये पन्ने छापकर जोड़े गये तथा हाथसे भी कुछ अशुद्धियाँ बनवायी गयीं। इस प्रकार कुछ सुधार किया गया है। फिर भी इसमें अनेक भूलें रह गयीं। विवशताके कारण हम उन भूलोंके लिये क्षमा प्रार्थना करते हैं।

इस पुस्तकमें लेखकने अपनी यात्राका क्रम दिया है, किन्तु वह सबके लिये उपयोगी नहीं जान पड़ता। यात्रियोंको खूब समझ-बूझकर अपनी यात्राका क्रम बनाना चाहिये।

दीपावली
सं० १९९८

प्रकाशक

श्रीहरि

विषय-सूची

1

हृदयोद्गारः

भ्रातस्तव गुणान् स्मृत्वा लोचने साश्रुणी मम ।
अस्माद्धेतोर्गुणौघस्ते शक्यते नानुवर्णितुम् ॥ १ ॥
मणिं विना यथा सर्पो विना पक्षं विहङ्गम ।
मीनो जलं विना बन्धो त्वां विना च तथास्म्यहम् ॥ २ ॥
तीर्थयात्रां कारयेयं मातरं च समन्तत ।
तवासीद्धार्दिकी वाञ्छा प्रथमं बन्धुसत्तम ॥ ३ ॥
दुःखिता जननीं भ्रातस्तव वाञ्छानुसारत ।
पावनीं तीर्थयात्रां हि भारतीयामचीकरम् ॥ ४ ॥
भवता सदृशो बन्धुर्दुर्लभो जगतीतले ।
अतो विश्वेश्वरं प्रार्थो भवामि करुणालयम् ॥ ५ ॥
अस्यां सत्तीर्थयात्रायां किञ्चित् पुण्यं भवेद् यदि ।
सुभ्रातुरात्मन शान्तिं कुर्यात्तस्मै समर्पितम् ॥ ६ ॥

—लेखकस्य

भूमिका

उन परम पिता परमात्माको कोटिश धन्यवाद है जिनकी असीम कृपासे मेरे हृदयमें भारतवर्षके पवित्र तीर्थस्थानोंका विवरण लिखनेकी प्रेरणा हुई है।

स्वर्गीय बघुवर जमुनाप्रसादजीकी यह कामना थी कि पूजनीया माजीको भारतवर्षके समस्त तीर्थोंकी यात्रा कराएँ, और उन्होंने उसका श्रीगणेश भी कर दिया था, किन्तु दुःख है कि सवत् १९८२ में अकस्मात् उनकी मृत्यु हो जानेके कारण वह शुभ विचार भी उनके साथ ही चला गया। उनके प्रारम्भ किये हुए इस कार्यको पूर्ण करनेके लिये सवत् १९८३ म मैंने तीर्थाटन करना प्रारम्भ कर दिया, और सवत् १९९१ में केवल श्रीबद्रीनारायणकी यात्रा शेष रह गयी थी। अब वह भी पूजनीया माँजी आदिके साथ आनन्दपूर्वक समाप्त हो गयी है। उन पवित्र तीर्थोंमें जाकर हमें अनेक शिक्षाएँ मिलती हैं। यदि हम उन शिक्षाओंको ग्रहण न करें तो तीर्थयात्रा करनेसे अधिक लाभ नहीं हो सकता।

भारतवर्षमें ऐसे नर-नारी विरले ही होंगे जिन्होंने चार धामोंका नाम न सुना हो और जो उनकी यात्रा करनेके लिये उत्सुक न हों। इन चार धामोंकी यात्रा कर लेनेपर भारतवर्षके प्राय सभी मुख्य तीर्थस्थानोंकी यात्रा हो जाती है।

'तीर्थ' शब्दका अर्थ है तारनेवाला। जिन स्थानोंसे ब्रह्मा, विष्णु, महादेव अथवा अन्यान्य देवताओंका सम्बन्ध है अथवा जहाँ बहुत से ऋषि मुनि एवं ब्रह्मनिष्ठ महात्माओंने रहकर तपस्या की है वे ही स्थान तीर्थरूपसे प्रसिद्ध हो गये हैं। भारतवर्षमें तीर्थयात्राका बड़ा माहात्म्य है। उन महापुरुषोंने तपस्या करके उन स्थानोंको इतना पवित्र कर दिया है कि आज भारतवर्षके कोने-कोनेसे आर्य-जनता नाना प्रकारके कष्ट सहन करती हुई वहाँ पहुँचती है और भगवान्‌का दर्शन पाकर आनन्दित होती है।

अयोध्यामें भगवान् रामचन्द्रका राज्याभिषेक करनेके लिये वसिष्ठजीने भारतवर्षके समस्त तीर्थोंका जल मँगवाया था। भगवान्‌को वनवास होनेपर भी वह जल सुरक्षित रखा रहा। जब भरतजी चित्रकूट गये तब उसे साथ लेते गये। किन्तु जब मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् राम अयोध्या लौटनेको उद्यत न हुए तो भरतजीने वहाँ बैठे हुए ऋषि मुनियोंसे पूछा कि उस परम पुनीत जलको कहाँ रखा जाय? और फिर अत्रिमुनिके आदेशानुसार उसे एक प्राचीन कुण्डमें डाल दिया। वही कुण्ड आजकल 'भरतकूप' के नामसे विख्यात है। चित्रकूट जानेवाले यात्री भरतकूपमें स्नान, आचमन एवं मार्जनादि करते हैं। भरतकूपके पवित्र जलमें स्नान करनेका फल सर्वतीर्थ स्नानके सदृश माना जाता है। यदि तीर्थोंका जल साधारण माना गया होता तो भरतजी उसे रखनेके लिये क्यों ऋषि मुनियोंसे आज्ञा लेते और महामुनि वसिष्ठजी भी उसे राज्याभिषेकके लिये क्यों मँगाते। अयोध्याजीके कूपों और सरयूमें क्या जलका अभाव था?

ऐसा कौन भारतवासी होगा जिसने श्रवणकुमारका नाम न सुना हो। उन्होंने काठकी कावर बनाकर उसमें अपने अन्धे माता-पिताको बैठाकर नंगे पाव भारतवर्षकी तीर्थयात्रा करायी थी।

महाभारतमें लिखा है कि जब कौरव और पाण्डवोंका युद्ध होना निश्चित हो गया और भगवान् कृष्णने भी अर्जुनका सारथी होना स्वीकार कर लिया तब बलदेवजीने किसीका पक्ष ग्रहण करना स्वीकार नहीं किया। और उस बन्धुवधको देखना भी उचित न समझकर वे द्वारकासे चल दिये तथा युद्धकी समाप्तितक भारतवर्षके प्रसिद्ध-प्रसिद्ध तीर्थस्थानोंकी ही यात्रा करते रहे।

महाभारतके पश्चात् द्वारकावासी यादवोंने भी अपना अन्तकाल उपस्थित होनेपर भगवान् कृष्णके आदेशानुसार प्रभासक्षेत्रकी यात्रा की थी। अभी थोड़ा समय हुआ समर्थ गुरु रामदासने भी नंगे पाँव चलकर भारतवर्षके समस्त तीर्थोंकी यात्रा की थी। इन उदाहरणोंसे यह निश्चय होता है कि तीर्थ कोई साधारण स्थान नहीं हैं, और न तीर्थजल ही साधारण जल है। तीर्थयात्रा यदि विधिवत् की जाय तो वह एक उच्च-कोटिका तप है।

तीर्थयात्रा करनेवाले यात्रियोंका भगवत्-प्रेम बढ़ता है, उन्हें ब्रह्मचर्यसे रहनेका सुअवसर प्राप्त होता है, एक बार भोजन किया जाता है, सत्यभाषणकी अभिलाषा होती है और झूठ बोलनेपर चित्तमें स्वय ही घृणा उत्पन्न होती है तथा स्थान-स्थानपर भगवच्चर्चा और भगवत्कथा श्रवण करनेको मिलते हैं। उसे जगह-जगह भगवद्विग्रहोंके दर्शनोंका सौभाग्य होता है, गंगादि पुनीत

नदियोंका स्नान मिलता है, बड़े-बड़े पुनीत स्थानोंपर पूर्वजोंके लिये श्राद्ध और तर्पण करनेका सौभाग्य प्राप्त होता है तथा बड़े-बड़े विशाल और प्राचीन देवमन्दिरों एवं पावन सरोवरोंके दर्शन और उनमें स्नान करनेसे उसे जो आनन्द प्राप्त होता है उसे वह आजीवन विस्मृत नहीं होता । जब जब उस भावका उदय होता है तभी-तभी उन स्थानोंका चित्र हृदयके सामने अंकित हो जाता है, जिससे चित्त अत्यन्त पवित्र और प्रफुल्लित हो उठता है । तीर्थयात्रा करनेपर उसके धनका कुछ भाग दुःखी एवं दीन व्यक्तियोंकी सेवामें लग जाता है तथा देश देशान्तरके नर-नारियोंके दर्शनोंके साथ साथ देशभ्रमण भी हो जाता है ।

भगवान् आकाशके समान सर्वत्र समान भावसे व्याप्त हैं । किन्तु जिस प्रकार सूर्यका प्रतिबिम्ब स्वच्छ जलके पात्रोंमें ही दृग्गोचर होता है उसी प्रकार तीर्थस्थानोंमें ही भगवान्की विशेष अभिव्यक्ति होती है । यह संसार समुद्ररूप है, इसे तरनेके लिये हमारे पूर्ववर्ती ऋषि-मुनियोंने इन तीर्थस्थानोंमें ही सहस्रों वर्ष तपस्या की थी और यहाँ तपस्या करके ही वे त्रिकालज्ञ हुए थे । यहाँ रहकर उन्होंने अपना उद्धार तो किया ही, साथ ही हमलोगोंके लिये भी अनेकों धर्मग्रन्थोंकी रचना की, जो आज हमारे लिये भव सागरसे तरनेके लिये नौकारूप हो रहे हैं ।

तीर्थयात्रा करनेवाले यात्रियोंका पहला कर्त्तव्य यह है कि वे जिस जिस भी छोटे या बड़े तीर्थस्थानपर जायँ वहाँ उपवास कर किसी विद्वान् ब्राह्मण या तीर्थगुरुद्वारा तीर्थविधि करें और यदि

उनके माता पिता स्वर्गवासी हो गये हों तो उनके लिये श्राद्ध, तर्पण एव पिण्डदानादि करें। इसके पश्चात् अपनी शक्तिके अनुसार ब्राह्मणोंको भोजन कराकर फिर स्वय बचा हुआ प्रसाद पावें।

जगन्नाथ, रामेश्वर ओर द्वारका इन तीन धामोंकी यात्रा रेलका मार्ग होनेके कारण कठिन नहीं हे। स्टेशनोंके पास ही देवमन्दिर हैं। इन तीनों धामोंके अतिरिक्त इनके मार्गमें जो अन्य तीर्थस्थान मिलते हैं उन सबकी यात्रा डेढ महीनेमें आनन्दपूर्वक हो जाती हे।

श्रीबद्रीनारायणकी यात्रा भी अब पहलेके समान कठिन नहीं हे। इसका सारा श्रेय श्री १०८ बाबा काली कमलीवालोंको है। बाबाजीने सवत् १९४१ में यात्रा की थी। उन्होंने यात्रासे लौटकर वहाँके मार्गके दु खोंको बड़े-बडे धनी व्यक्तियोंपर प्रकट किया। उनके प्रभावसे उत्तराखण्डके मार्ग बनने लगे। वहाँ जगह-जगह धर्मशालाएँ बनायी गयीं ओर पोसालें बैठाये गये। उत्तराखण्डके दु ख दूर करनेवाले इन पूज्य बाबाजीका सवत् १९५३ में स्वर्गवास हो गया। उनके पश्चात् बाबा रामनाथजी काली कमलीवालोंके हाथसे उत्तराखण्डका भली प्रकार प्रबन्ध होता रहा। सवत् १९८२ में ये भी परलोक सिधार गये। तबसे उत्तराखण्डका प्रबन्ध श्रीमनीरामजीके हाथमें है। अब सन् १८६० के सोसाइटीज ऐक्टके अनुसार सन् १९२८ ई० को पचायती क्षेत्र ह्वीकेशकी रजिस्ट्री कराकर बाबाजीने एक ट्रस्ट कायम कर दिया है।

इस प्रकार अब उत्तराखण्डकी यात्रा भी विशेष कठिन नहीं रही। इसका विशेष विवरण इस पुस्तकके बदरी-केदारखण्डको पढ़नेसे विदित होगा। पैदल यात्रियोंको मार्ग चलकर शीतल जल नहीं पीना चाहिये और भूख रखकर भोजन करना चाहिये। साथमें एक कम्बल, एक लोटा, एक लाठी, एक जोड़ा ढीला बूट (कपड़ेका फीतेदार जूता) और कुछ मोम-बत्तियाँ भी रखनी चाहिये तथा अपनी प्रकृतिके अनुसार कुछ ओषधि भी रख लेनी चाहिये। यात्री भोजनका सामान और बर्तन आदि प्रत्येक चट्टीपर मिल जाते हैं।

लेखकने जिस क्रमसे तीर्थयात्रा की है उसे उसी प्रकार लिखकर पाठकोंकी सेवामें समर्पित किया गया है। उत्तराखण्डका विवरण लिखते समय वहाँ जो-जो सुविधाएँ हो गयी हैं उनकी जानकारीके लिये यह बात भी लिख दी गयी है कि सज्जनोंने किस किस प्रकार धन लगाया है। जिस समय मैंने हृषीकेशमें बाबाजीसे भेंट की तो उन्होंने मुझे यात्रामें मिलनेवाली चट्टियोंकी एक सूची और एक पुस्तक यात्राके विवरणकी दी, जिससे मुझे वहाँकी यात्रामें बड़ी सहायता मिली। इनके सिवा अपने कर्मचारियोंके लिये एक पत्र भी दिया जो उत्तराखण्डकी यात्रामें सब जगहके कार्यकर्ताओंके लिये होता है। इसके लिये मैं पूज्य बाबाजीका बड़ा कृतज्ञ हूँ। इस ग्रन्थके अवलोकन करनेपर पाठकोंको मालूम होगा कि कहाँपर ठहरनेके लिये कितनी दूरपर धर्मशाला है, कैसे-कैसे देवमन्दिर हैं, उनका क्या प्रबन्ध है, वहाँ भोजनकी

क्या क्या वस्तु मिल सकती है, तीर्थस्थानोंपर कैसे-कैसे सरोवर हैं और प्रत्येक तीर्थकी यात्राका क्या माहात्म्य है? इस पुस्तकमें चारों धाम, सातों पुरी और बारहों ज्योतिर्लिङ्गोंकी यात्राका वर्णन है अतः यह यात्रियोंके लिये कुछ उपयोगी हो सकती है। मेरी अल्पज्ञताके कारण त्रुटियोंका रहना तो बहुत स्वाभाविक है, तथापि यदि इसके अवलोकनद्वारा किन्हीं किन्हीं पाठकोंको भी उन पवित्र स्थानोंके दर्शनोंकी अभिलाषा उत्पन्न हुई तो मैं अपनी इस सेवाको सफल समझूँगा।

विनीत,

लेखक

यात्राके नियम

१—यात्रीको जिस दिन यात्रा आरम्भ करनी हो उससे दो दिन पहले ही उसे यात्रामें उपयोगी आवश्यकीय वस्तुओंका संग्रह कर लेना चाहिये और श्रीगणपति एवं गौरीका विधिवत् पूजन कर तथा वृद्धजनोंको प्रणाम कर शुभ मुहूर्तमें अपने गृहसे तीर्थयात्राको प्रस्थान करना चाहिये।

२—तीर्थाटनके समय यात्रीको ब्रह्मचर्यसे रहना चाहिये, मिथ्या भाषणका सर्वथा त्याग कर देना चाहिये। यदि कोई अपरिचित यात्री भी विपत्तिमें पड़ा दिखायी दे तो उसकी सहायता करनी चाहिये और सभी निषिद्ध कर्मोंका विधिवत् परित्याग कर देना चाहिये।

३—यात्रामें अपरिचित व्यक्तिके हाथका भोजन कभी नहीं पाना चाहिये। देवदर्शनके लिये जाते समय अपना सामान किसी विश्वसनीय गृहस्वामीको अथवा उत्तरदायित्वपूर्ण सेवकको सौंप जाना चाहिये।

४—तीर्थस्थानोंमें गीता, रामायण आदि सद्ग्रन्थोंका पाठ करना चाहिये और प्रत्येक तीर्थस्थानसे कुछ शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

५—अपने विश्रामस्थानपर भोजन बनता हुआ छोड़कर कहीं नहीं जाना चाहिये और ऐसे पदार्थ भोजन करने चाहिये जो शीघ्र पच जानेवाले हों। चारों धामोंमें कम-से-कम तीन-तीन रात्रि निवास करना चाहिये, अन्य तीर्थस्थानोंमें अपनी रुचिके अनुसार कम भी ठहर सकते हैं।

[illegible] ।

हाकान्त ।



पञ्चमुख महादेव

ॐ तत्सत्

चारों धामकी झाँकी

मंगलाचरण

अचिन्त्याव्यक्तरूपाय निर्गुणाय गुणात्मने ।
समस्तजगदाधारमूर्तये ब्रह्मणे नमः ॥
जय गणेश मंगलकरन, प्रणवौं बारम्बार ।
हरहु अमंगल लखि शरण, जय जय उमाकुमार ॥
तीर्थयात्रा ग्रन्थ यह आनन्दको दातार ।
पढ़ि पढ़ि रुचि सों नारि नर पावें मोद अपार ॥

जगन्नाथखण्ड

बटेश्वर

बटेश्वर व्रजमण्डलकी चौरासी कोसकी परिक्रमाके अन्तर्गत है। शास्त्रोंमें इसे महाराज शूरसेनकी पुरी बतलाया है। किसी समय यह नगर संस्कृतविद्याका केन्द्र था, इसलिये लोग इसे छोटी काशी कहकर भी पुकारते थे।

बटेश्वर आनेके लिये यात्रियोंको शिकोहाबादमें, जो ईस्ट इण्डियन रेलवेका जङ्क्शन स्टेशन है, उतरना चाहिये। स्टेशनके पास ही एक धर्मशाला और एक सराय है। वहाँसे दो मीलपर शिकोहाबाद बस्ती है। यह जिला मैनपुरीके अन्तर्गत है। यहाँ तहसील, एक अस्पताल, एक हाई स्कूल तथा एक गोशाला और अन्नसत्र भी है। जिन साधु महात्माओंको बटेश्वर आनेमें आर्थिक कठिनाई होती है वह यहाँ आनेपर दूर हो जाती है। इसके सिवा कोई यात्री जी० आई० पी० रेलवेके बाह स्टेशनपर और कोई होलीपुरा स्टेशनपर भी उतरते हैं। बटेश्वर आनेके लिये यात्रियोंको इन्हीं तीन स्टेशनोंमेंसे किसीपर उतरना चाहिये। शिकोहाबादकी तरह बाह और होलीपुरामें भी यात्रियोंके ठहरनेके लिये धर्मशाला-दिकी सुविधा है। बटेश्वरमें कार्तिक मासमें एक बहुत बड़ा मेला लगता है। उस समय यहाँ लाखों यात्री एकत्रित हो जाते हैं।

शिकोहाबादसे बटेश्वर १३ मील है और बाह से ५ मील। बाह उतरनेवाले यात्रियोंको बीचमें कोई नदी नहा मिलती और शिकोहाबाद होकर आनेवाले यात्रियोंको बीचमें यमुनाका पुल पार करना होता है। शिकोहाबाद और बाह दोनों स्टेशनोंपर यात्रियोंको इक्का, ताँगा और बैलगाड़ी आदि सवारियाँ मिल सकती हैं, जिनका किराया समयानुसार घटता-बढ़ता रहता है। इस प्रकार यात्री आनन्दपूर्वक बटेश्वर पहुँच जाते हैं।

बटेश्वरमें यात्रियोंके ठहरनेके लिये एक पक्की धर्मशाला है तथा और भी कई स्थान हैं। अधिकांश यात्री देवमन्दिरोंमें निवास करते हैं। यहाँ आकर वे पतितपावनी श्रीयमुनाजीमें स्नान करके श्रीबटेश्वरनाथ शिवका दर्शन करते हैं।

बटेश्वरमें देवमन्दिरोंके दर्शन इस प्रकार करने चाहिये। पहले श्रीगोकुलनाथघाटके ऊपर श्रीगोकुलनाथजीके मन्दिरमें जाना चाहिये। उसमें श्रीगोकुलनाथजीकी श्याम वर्ण मनोहर मूर्तिके दर्शन होते हैं। यहापर राग-भोगके लिये ३००) रुपया सालकी जमींदारीकी आमदनी है और पञ्चायती बोर्डद्वारा मन्दिरका प्रबन्ध होता है। इस मन्दिरसे आगे दो कुञ्ज हैं। ये कुञ्जें बटेश्वरसे एक मीलकी दूरीपर हैं। पहले इनमें यहाँ आनेवाले साधु-सन्यासी ठहरा करते थे।

कुञ्जोंसे आगे श्मशानघाट है, इसके ऊपर पञ्चमुखी महादेवका मन्दिर है। इस मन्दिरके भीतर संगमरमरके पञ्चमुखी शिवलिङ्गके [illegible]। इससे आगे एक तिद्वारी मिलती [illegible]

यह यात्रियोंकी सुविधाके लिये बनायी गयी थी। अब भी मेलेके दिनोंमें यह उन्हींके काममें आती है।

निद्वारोंके आगे दो शिवमन्दिर हैं। इन मन्दिरोंकी ऊँचाई ५० फुट अनुमान है। नीचे पक्की सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। इन दोनों घाटोंको रानीघाट कहते हैं। महाराज मदानरकी महारानी इन्हीं घाटोंपर स्नान किया करती थीं। दूसरे घाटपर एक छोटे-से मन्दिरमें हनुमान्‌जीकी प्रतिमा है। वटेश्वरकी बस्तीके लोग वटेश्वरनाथका दर्शन करके यहाँ विश्राम करते हैं। पहले यहा पुराणोंकी कथा भी हुआ करती थी। किन्तु अब कथा तो बन्द हो गयी है, विश्रामकी परिपाटी चली जा रही है।

हनुमानजीसे आगे शिव-पार्वतीका मन्दिर है। ऐसी मनोहर मूर्तियोंके दर्शन सम्भवत दूसरी जगह नहीं मिलेंगे। यहाँ मनुष्याकार शिव-पार्वतीकी छवि देखते ही बनती है। श्रीशिव पार्वती का दर्शन करके आगे चलनेपर श्रीगंगाजीका मन्दिर मिलता है। इस समय वर्तमान मन्दिर यमुनाकी बाढ़ आ जानेके कारण गिर गया है।

इससे आगे श्रीवटेश्वरनाथके मन्दिरका फाटक मिलता है। यह मन्दिर बाहर चारों ओर दिवारसे घिरा हुआ है। इसके तीन बड़े-बड़े द्वार हैं। द्वारोंके सम्मुख एक बरगदका वृक्ष है। जिसके चारों ओर एक पक्का चबूतरा बना हुआ है। यहा एक धूना रहता है। प्राचीन कालमें जो वटेश्वरनाथका मुख्य पुजारी होता था वह यहाँ बैठा रहकर यात्रियोंको प्रसादके रूपमें धूनीकी भस्म दिया करता था। श्रीवटेश्वरनाथके मन्दिरमें दो दरवाजे हैं। ए

द्वारसे होकर यात्री प्रवेश करते हैं और दूसरेमें होकर बाहर निकलते हैं।

कार्तिक शुक्ल १५ के दिन यहा इतनी भीड होती है कि आगरा जिलेके स्वयसेवक, वटेश्वरकी सेवासमिति एव डि० बो० आगराका प्रबन्ध, सरकारी सिपाहियोंकी निगरानी और अन्यान्य स्वयसेवकोंकी सेवा होते हुए भी श्रीवटेश्वरनाथपर यमुनाजल एव बिल्वपत्रादि चढाना कठिन हो जाता है। भगवान्पर इतने पुष्प चढाये जाते हैं कि वे उनमें सर्वथा छिप जाते हैं।

वटेश्वरनाथके मन्दिरके चारों ओर वटमे और मन्दिरके भीतर-बाहर बहुतसे घण्टे लटकाये हुए हैं। कहते हैं, वटेश्वरनाथकी यात्रा करनेपर जिन यात्रियोंकी कोई कामना पूरी हो जाती है वे ही दूसरे साल आकर भगवान्को घण्टा समर्पण करते हैं।

वटेश्वरनाथमन्दिरकी वार्षिक आय प्राय सात हजार रुपया है। यहा श्रावणके सोमवारोंको मेला लगते हैं जिनमें हजारों मनुष्योंकी भीड़ हो जाती है। उन दिनोंमे भगवान्को बिल्वपत्र समर्पण करनेके लिये यहा बहुत-से शिव-भक्त बाहरसे आकर एक वक्त भोजन करते हुए पूरे श्रावण मास भी निवास करते हैं। इसके अतिरिक्त शिवरात्रि, गगा-दशहरा आदि मुख्य-मुख्य पर्वोपर भी आस-पासकी जनता बडे भक्ति भावसे वटेश्वर आती है। इस कारण उन तिथियोंपर वटेश्वरमें कई मेले लगते हैं। मुख्यत मार्ग-शीर्ष कृष्ण २ को जो श्रीवटेश्वरनाथकी झाँकी होती है वह तो

देखनेकी ही चीज है, कहनेकी नहीं। इसलिये मराठे यहाँ कार्तिकी पूर्णिमाके स्नानके पश्चात् भी रहे रहते हैं।

इसके पश्चात् क्रमशः रेणीघाट, विश्रामघाट, सूर्यघाट, यतिघाट, गौघाट और नगदघाट होते हुए विहारघाटपर आते हैं। यहाँ एक शिवमन्दिर है। उसमें भगवान् विष्णुके अवतारोंके भी दर्शन होते हैं। इससे आगे बड़े बिहारीजीका मंदिर है। इस मंदिरके सामने एक पक्का कुआँ है और उसके पास ही एक नीमका वृक्ष है। बिहारीजीके फाटकमें प्रवेश करनेपर एक लम्बा चौड़ा पक्का आँगन मिलता है। उसमें अनेकों सुगन्धित पुष्पों और फलोंके वृक्ष लगे हुए हैं। इसके दक्षिणकी ओर एक तिद्वारी है। यहाँ विश्राम करनेपर चित्तको बड़ा शांति मिलती है।

आँगनसे एक गजकी ऊँचाईपर सभामण्डपमें प्रवेश होता है। पहले इस मण्डपमें नित्यप्रति भगवद्गुणगान हुआ करता था, पुराणोंकी कथाएँ होती थीं, परन्तु अब यह देखनेको नहीं मिलता। ठीक सामने श्रीराधाकृष्णकी बड़ी मनोहर मूर्तियाँ हैं। यहाँके राग भोगका प्रबन्ध चमरोलीके लालाजीके हाथमें है। पहले यहाँ एक पुजारी और एक भण्डारी रहा करते थे किंतु अब केवल पुजारीजी ही सब काम कर लेते हैं।

इस मंदिरके नीचे भण्डार-गृह है। सचमुच यह स्थान बड़ा ही रमणीक है और एक वेदविद्यालय स्थापित होनेके योग्य है।

बिहारीजीके मंदिरके आगे नाऊगाकर दक्षिणाका बनवाया हुआ नाऊगाकर शिवजीका बड़ा सुंदर मंदिर है। यह स्थान जिस

समय बना होगा एक देखनेकी चीज रही होगी। मन्दिरके नीचे नाऊशकरघाट है, यहाँपर मृतक व्यक्तियोंके पिण्ड-कर्मादि हुआ करते हैं। इसी मन्दिरमें सहस्र-दीपकका एक स्तूप बना हुआ है। उसपर पहले यहाँ सहस्र दीपक जला करते थे।

इससे आगे तुलसीघाट, गोपालेश्वरघाट, गौघाट, सेनीघाट और महाराष्ट्रघाटके पश्चात् यज्ञ-स्थान आता है। यहाँ किसी समय एक वाजपेय यज्ञ हुआ था। उसकी भस्म अभीतक मिलती है।

यज्ञस्थानके आगे एक मिट्टीके टीलेपर बारह भुजावाली भगवती-के दर्शन होते हैं। यहांसे आगे अनुमान एक मील चलनेपर जैनियोंका तीर्थस्थान मिलता है। यहाँपर छोटे-बड़े कई मन्दिर हैं। सन् १९१६ मे जैनियोंने मिलकर एक बड़ा सुन्दर मन्दिर बनवाया है और उसके राग भोगका भी समुचित प्रबन्ध कर दिया है।

इससे कुछ आगे चलनेपर बस्तीके बाहर भगवती शीतलादेवी-का मन्दिर है। यहाँ और भी कई छोटे-छोटे मन्दिर हैं। यह मन्दिर भी मिट्टीके टीलेपर ही है। चैत्र और आश्विनके नवरात्रोंके अवसरपर यहाँ नौ दिनतक वटेश्वर बस्तीके नर-नारी सैकड़ोंकी संख्यामें आते रहते हैं। पहले यहाँ बलिदान भी होता था, किन्तु अब यह घृणित प्रथा बंद-सी हो रही है।

शीतलादेवीके आगे वनमें दूसरे वटेश्वर महादेवका दर्शन होता है और फिर श्रीहनुमान्‌जीके दर्शन होते हैं। ये कस करार-के हनुमान्‌जी कहकर पुकारे जाते हैं और एक मिट्टीके टीलेपर विराजमान हैं।

यह तो वटेश्वर बस्तीके आस पासके देवस्थान हैं। इनके अतिरिक्त वटेश्वरकी परिक्रमामें, जो कार्तिक शुक्ल ७ को आरम्भ होता है, और भी बहुत से तीर्थस्थान मिलते हैं। वटेश्वरमें जो प्राचीन गुफाएँ और गोसाईं लोगोंकी इमारतें आदि हैं वे इस बातकी सूचना देती हैं कि यह एक प्राचीन तपोभूमि है और किसी समय संस्कृत विद्याका केन्द्रस्थान रहा है, यहाँकी प्रधान संस्थाएँ चतुर्वेदी जमुनाप्रसाद डिसपेंसरी, हिन्दी पाठशाला और चतुर्वेदी जमुनाप्रसाद वाचनालय हैं। कुछ दिनसे डाकखाना और मवेशीगृह भी खुल गये हैं। गवर्नमेण्टने वटेश्वरके जंगलमें बबूर, शीशम और वट आदिके वृक्ष लगाकर उसकी रक्षाके लिये बस्तीके बाहर एक मकान बनाया है। उसमें जंगलके कर्मचारी रहा करते हैं। बस्तीके बीचमें महाराज भदावरका किला (हवेली) है, जो इस समय जीर्ण हो चला है। पहले भदावरराज्यकी राजधानी वटेश्वर ही थी, किन्तु अब नौगाँवमें है। महाभारतके समय जब कौरव-पाण्डवों में युद्ध आरम्भ हुआ तब बलभद्रजीने किसीका पक्ष नहीं लिया। वे तीर्थयात्रा करते हुए वटेश्वर आये थे और कुछ समय यहाँ विश्राम किये थे। यह कथा वटेश्वरमाहात्म्यमें आयी है।

आजकल जहाँ वटेश्वरकी बस्ती है वहाँ पहले यमुनाजी बहती थीं। महाराज बदनसिंहने यमुनाका प्रवाह काटकर पूर्वसे पश्चिमकी ओर कर दिया है। ऐसा करनेसे वटेश्वर यमुनाके बीचमें

आ गया है। अब यमुनाजी मानो वटेश्वरनाथकी परिक्रमा करती हुई बहती हैं।

अहो! एक समय वह था जब कि वटेश्वरमें संस्कृत पढ़नेके लिये दूर-दूरसे विद्यार्थी आया करते थे। प्रातः और सायंकालमें जब समस्त देवालयोंमें शंखध्वनि और नगाड़ोंका घोष होता था तो आस-पासके गाँववाले भी नेत्र मूँदकर पाँच मिनटके लिये ध्यानावस्थित हो जाते थे। उस समय वटेश्वरमें निवास करना प्रत्येक व्यक्ति अपना सौभाग्य समझता था। किन्तु अब देवमन्दिरोंको सूना देखकर और महाराज भदावरके किलेके खँडहरोंपर दृष्टि डालकर वटेश्वरकी पतितावस्थाका ध्यान आते ही शोक और आत्मग्लानिकी सीमा नहीं रहती।

माहात्म्य—एक बार श्रीअत्रिमुनिके प्रार्थना करनेपर भगवान् शंकर बोले—हे मुने! वटेश्वरका क्षेत्रफल दो योजन अर्थात् १६ मील या ८ कोस है। वहाँ आदिदेव भगवान् वटेश्वरनाथ विराजमान हैं। उस तीर्थके निकट अनिंदिता सूर्यकन्या यमुनाजी बह रही हैं, जिनके दर्शनमात्रसे सम्पूर्ण पापसमूह तत्काल नष्ट हो जाते हैं। जो लोग वहाँ निवास करते हैं वे लोकमें सर्वत्र सम्मानित होते हैं। हे विप्रेन्द्र! जो प्राणी तीन दिन व्रत करके वहाँ निवास करते हैं वे कलियुगमें कृतार्थ हो जाते हैं। तथा जो लोग भक्तिभावसे श्रद्धापूर्वक मेरी पूजा करते हैं उनके पूजनमात्रसे मैं निःसन्देह सन्तुष्ट हो जाता हूँ।

ब्रह्मावर्त

बटेश्वरनाथका दर्शन और यमुनास्नान करके यात्री भगवान्का स्मरण करते हुए ब्रह्मावर्त अर्थात् बिठूरकी यात्रा करते हैं। उन्हें शिकोहाबाद E I R से या G I P रेलवेके बाह स्टेशनसे आगरा होकर कानपुर आना होता है।

कानपुर आकर यात्री बिठूर स्टेशनका टिकट लेते हैं। जो B B & C I रेलवेकी आगरा-कानपुर लाइनपर है। शिकोहाबादसे कानपुर १२३ मील है और कानपुरसे बिठूर २० मील। बिठूर पहुँचकर यात्रीलोग प्रायः स्टेशनके निकटवाली धर्मशालामें ठहर जाते हैं। इसके सिवा तीर्थपुजारियोंके निजी गृह भी हैं, जो यात्रियोंके लिये ही खाली रहते हैं। देहात होनेके कारण यहाँ ठहरनेका कोई कष्ट नहीं है।

बिठूर श्रीभागीरथीके तटपर बसा हुआ है। यहाँ ब्रह्मघाटपर स्नान करनेका विशेष महत्त्व है। ब्रह्मघाटपर एक फुट ऊँचा लोहेकी एक कील गड़ी हुई है। उसका अभिप्राय यह बतलाया जाता है कि मनुजीने सरस्वती और दृषद्वती नदीके बीच इस भागको ही ब्रह्मावर्त माना है। यहाँ ब्रह्माजीकी उत्पत्तिका आदिस्थान है। यहीं भगवान् विष्णुकी नाभिसे कमल उत्पन्न हुआ था और उस कमलसे ब्रह्माजीकी उत्पत्ति हुई थी। इस प्रकार यह जगत्की उत्पत्तिका आदिस्थान बतलाया जाता है और इन सब घटनाओंकी स्मृतिके

लिये ही यहाँ कील गाड़ दी गयी है। यात्री इस कीलका पूजन करते हैं। इसी स्थानपर पुराणप्रसिद्ध मधु और कैटभका भगवान् विष्णुके साथ युद्ध हुआ था और यहीं उनके मेदसे जलके ऊपर सर्वप्रथम मेदिनीकी उत्पत्ति हुई थी। इस स्थानपर ब्रह्माजीने सहस्रों वर्ष तप किया था। यहाँ एक बहुत बड़ा यज्ञ भी हुआ था, जिसका भस्म आज भी पण्डलोग यात्रियोंको दिखलाते हैं।

ब्रह्मावर्त ऐतिहासिक स्थान भी है, पेशवाओंका गद्दीके अंतिम उत्तराधिकारी तथा सन् १८५७ के सिपाही विद्रोहके सुप्रसिद्ध नेता श्रीनानासाहब यहीं रहा करते थे। उनके जूनापाडा महलके खँडहर आज भी उनकी स्मृति दिलाते हैं।

ब्रह्मघाटके अतिरिक्त अहल्याबाई और बाजीराव पेशवाके बनवाये हुए घाट और मन्दिर आदि भी श्रीभागीरथीकी शोभा बढ़ा रहे हैं। कुछ दिन हुए स्वामी श्रीविशुद्धानन्द सरस्वतीने इन मंदिरोंका जीर्णोद्धार कराया था।

कहते हैं जिस समय प्रजावर्गके अपवादको सुनकर भगवान् रामने जगज्जननी माता जानकीजीको वनमें निर्वासित कर दिया था उस समय श्रीलक्ष्मणजी उन्हें यहीं छोड़ गये थे। यहीं जानकी-नन्दन कुश और लवके साथ भगवान् रामकी सेनाका युद्ध हुआ था और यहीं पतिप्राणा श्रीजनकदुलारीने अपने पातिव्रत्यको अक्षुण्ण प्रमाणित करनेके लिये पृथ्वीमें प्रवेश किया था। इस स्थानके दर्शन करनेपर अतीत कालकी ये सभी स्मृतियाँ जाग्रत् हो जाती हैं।

बिठूरसे कुछ दूरीपर परिहर नामका एक स्थान है। यहीं महर्षि वाल्मीकिकी तपोभूमि बतलायी जाती है। इसी जगह उन्होंने

महर्षियोंके उपदेशसे तपस्या कर एक व्याध होते हुए भी 'महर्षि' पद प्राप्त किया था तथा रामायणकी रचना कर आदिकविकी उपाधि प्राप्त की थी। पास ही [illegible] नामका एक स्थान है। वहाँ एक प्राचीन कूप है। कहते हैं कि अपनी पूर्वावस्थामें वाल्मीकि जी इस कूपमें छिपकर ही यात्रियोंको लूटा करते थे।

बिठूरके पास जगह-जगह गोलेके समान कभी-कभी अब भी युद्धभूमिमें छोड़े हुए बाणोंकी नोक मिला करती है। यहाँ पर सीताकुण्ड और सीतानाला है व अब भी भगवती जानकीकी स्मृति मिलती है। इस प्रकार यहाँ आनेपर मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र-जीका चौदह सालका पुराना किन्तु नित्य नया चरित्र आँखोंके सामने नाचने लगता है।

अभी अधिक समय नहीं हुआ इसी स्थानपर वाल्मीकिकी प्रतिकृति [illegible] आततायियोंने नष्ट कर दिया था। भगवती सीताके वनवास और पुत्रप्रवेश तथा सीता स्त्रीकी करुण कथाको स्मरण करके एक सम्बन्ध या मंदिर आश्रमको ऐसा भ्रष्ट [illegible] देखकर ऐसा कौन सहृदय होगा जिसके नयन चार न भर आवें।

महाभारतमें लिखा है कि ब्रह्मावर्तका राजा गङ्गामें मरनेके बाद चन्द्रलोकमें निवास होता है और यहाँ विधिवत् स्नानदान करनेसे दिव्यज्ञानकी प्राप्ति होती है। मन्दिर और घाटके सिवा यहाँ समय समयपर तपस्या करनेवाले महात्माओंकी बनाई हुई गुफाएँ और यज्ञ-वेदियाँ भी देखनेमें आती हैं तथा [illegible] और संस्कृतकी कुछ पाठशालाओंके अतिरिक्त डाकघर भी है। इस जगह फलादिको छोड़कर भोजनकी और सब प्रकारका सामान मिल जाता है।

नैमिषारण्य

त्रितापहारिणी श्रीभागीरथीका स्नान और त्रिकालदर्शी महर्षि वाल्मीकिकी जन्मभूमि ब्रह्मावर्त (बिठूर) का दर्शन करके यात्री नैमिषारण्यकी यात्रा करते हैं। नैमिषारण्य जानेके लिये यात्रियोंको बिठूरसे कानपुर और लखनऊ होकर बालामऊ जंक्शनपर आना होता है। यहाँसे जो गाड़ी सीतापुरको जाती है उसपर नामसार स्टेशन है। यह नामसार नैमिषारण्यका ही अपभ्रंश है। कानपुरसे नैमिषारण्य १०३ मील है। यह ईस्ट इण्डियन रेलवेकी एक ब्रांचलाइनपर स्थित है। उन्नावसे नैमिषारण्यको एक गाड़ी सीधी भी जाती है। यात्री अपनी रुचि और सुविधाके अनुसार यात्रा कर सकते हैं।

नामसार स्टेशनसे तीर्थ प्रायः एक मीलकी दूरीपर है। यहाँ ठहरनेके लिये धर्मशालाएँ और तीर्थपुजारियोंके स्थान हैं। नैमिषारण्य-

में माना गया है। यात्री पहले गोमतीमें स्नान करके चक्रतीर्थमें जाते हैं। यही यहाँका मुख्य तीर्थ है। यह एक पक्का कुण्ड है। इसका घेरा प्राय सवा सौ गज है।

चक्रतीर्थके चारों ओर पत्थरकी सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। एक बार चक्रतीर्थके जलमें तूफान आया था। कहते हैं, उस समय जिन जिन यात्रियोंने भय त्यागकर उसमें स्नान किया उन सभीके सारे शारीरिक रोग निर्मूल हो गये। अब भी सालमें एक बार वह समय आता है जब कि चक्रतीर्थमें स्नान करनेसे मनुष्य रोगमुक्त हो जाता है।

चक्रतीर्थको गर्भभित्ति जालदार दीवार बनवाकर घेरा दिया है। उसके छिद्रोंसे जल बाहर निकलता रहता है। यात्री लोग इसी जलमें स्नान एवं तीर्थविधि करते हैं। चक्रतीर्थके तटपर कई देवमन्दिर हैं, जो उसकी रमणीयताको और भी बढ़ा रहे हैं।

नैमिषारण्यके विषयमें ऐसी गाथा आती है कि एक बार कलिका प्रादुर्भाव देखकर बहुत से महर्षियोंने विष्णुभगवान्से प्रार्थना की कि भगवन्! अब भूलोकमें कलियुग आनेवाला है। अतः हमें कोई ऐसा स्थान बतलाइये जहाँपर निवास करनेसे कलिके पापका हमपर प्रभाव न हो। तब भगवान्ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर अपना सुदर्शनचक्र चलाया और कहा कि जिस स्थानमें यह चक्र गिरेगा वह कलिके दोषोंसे रक्षित रहेगा और उसके निवासियोंपर भी कलिका प्रभाव न होगा। वह चक्र नैमिषारण्यमें गिरा। चक्रतीर्थ उसीकी स्मृति है। इसमें अगाध जल है। इससे जो जल निकलता है उसे

नर्मदा और गोदावरी कहकर पुकारते हैं। एक बार चक्रतीर्थमें कूदकर स्नान करनेवाले कितने ही यात्रियोंका पता नहीं लगा था। इसलिये अब उसमें लोहेके तवे डाल दिये गये हैं।

चक्रतीर्थमें स्नान करके यात्री भगवती ललितादेवीका दर्शन करते हैं। देवीजीका मन्दिर चक्रतीर्थसे थोड़ी ही दूर है। इन्हीं भगवतीकी स्तुतिमें पुराणोक्त ललितासहस्रनाम है। भगवतीका दर्शन मन्दिरके बाहरसे ही होता है। इसके पश्चात् एक मन्दिरमें श्रीसूतजी महाराजकी गद्दीके दर्शन होते हैं। यहाँपर सूतजी बैठकर अठासी हजार महर्षियोंको पुराणकी कथा सुनाया करते थे।

नैमिषारण्यसे ७ मीलकी दूरीपर हत्याहरण नामका सरोवर है। मनुष्योंसे जो कायिक, वाचिक, मानसिक पाप होते हैं उनकी निवृत्तिके लिये उन्हें यहाँ आकर स्नान और तीर्थविधि करनी चाहिये। नैमिषारण्यके अधिकांश यात्री इस पावन सरोवरमें स्नान करनेके लिये जाते हैं।

नैमिषारण्यमें पंचप्रयाग नामका सरोवर है। उसके निकट अक्षयवट है। पण्डेलोग इसका यात्रियोंको कल्पवृक्षके नामसे भी परिचय कराते हैं। यहाँपर टीलेवाले सुप्रसिद्ध हनुमानजी भी दर्शनीय हैं। यह बड़ा सुंदर और विशाल प्रतिमा है। यहाँ पुजारीलोग अपना कार्य सिद्धिके लिये नियमित पाठ-पूजन किया करते हैं।

इनके सिवा नैमिषारण्यकी यात्रा करनेवालोंको जिनके दर्शन करने चाहिये उन स्थानोंका क्रमशः इस प्रकार वर्णन किया जा सकता है—

१–मनु और शतरूपाका तपस्यास्थान–यहाँ दो चबूतरे बने हुए हैं, जहाँ उन्होंने तपस्या करके वरलाभ किया था।

२–जानकीकुण्ड–कहते हैं, श्रीजानकीजीने जब नैमिषारण्यकी यात्रा की थी तब इस कुण्डका निर्माण कराया था।

३–श्रीशुकदेवजीकी गद्दी–इस स्थानपर रहकर श्रीशुकदेवजीने विश्राम की थी।

४–काशी–इस स्थानपर एक सरोवरके तटपर 'श्रीविश्वनाथ' और 'अन्नपूर्णाजी' के दर्शन होते हैं।

५–दशाश्वमेध–यह एक टीलेपर मन्दिर बना हुआ है जिसमें पञ्चदेवोंके दर्शन होते हैं।

इनके सिवा मार्कण्डेय तथा माण्डव्य ऋषिके आश्रम तथा और भी बहुत से पवित्र स्थानोंके दर्शन होते हैं। एक समय था जब यहाँ अठासी सहस्र मुनिजन निवास करते थे। इस समय भी यद्यपि उन मुनिजनोंके दर्शन तो नहीं होते, तो भी नैमिषारण्य एक तपोभूमि है। इसके दर्शनसे ही हृदय पवित्र होता है और भगवद्भजनमें प्रवृत्ति होती है। यहाँ ऐसे भी बहुत से सरोवर हैं जिनका अब केवल नाम ही शेष रह गया है, यथा–व्याससरोवर, गंगोत्रीसरोवर एवं पुष्करसरोवरादि, यहाँ प्रत्येक वर्ष जो राजा-महाराजा एवं सेठ साहूकार यात्रार्थ आते हैं उनका कर्तव्य है कि उनका जीर्णोद्धार कराकर पुण्य एवं यशके भागी बनें।

नैमिषारण्यकी परिक्रमामें और भी बहुत से तीर्थ मिलते हैं। व्रजके समान नैमिषारण्यकी भी चौरासी कोसकी परिक्रमा है।

एक दूसरी परिक्रमा ३।। मीलकी भी है। उपर्युक्त तीर्थ प्राय इसी परिक्रमामें हैं। नैमिषारण्यकी बड़ी परिक्रमा फाल्गुनकी अमावस्याको प्रारम्भ होकर फाल्गुन शुक्ल १५ को नैमिषारण्यमें ही समाप्त होती है। इस यात्रामें भी यात्रियोंको भोजनादिकी सब प्रकार सुविधा रहती है।

कहते हैं, भगवान् रामचन्द्रजीने वसिष्ठजीकी आज्ञासे यहीं आकर एक अश्वमेध यज्ञ किया था। ब्रह्मावर्तकी भाँति यहाँके तीर्थपुरोहित भी यज्ञ-स्थानपर भस्म निकलनेके चिह्न दिखलाते हैं। द्वापरयुगमें पाण्डवोंने वनवासके समय अपना बहुत-सा काल यहीं व्यतीत किया था। एक टीलेपर भगवान् श्रीकृष्ण और पाण्डवोंकी मूर्तियोंके दर्शन होते हैं। यह टीला पाण्डवोंके नामसे ही विख्यात है।

इस प्रकार सिद्ध होता है कि किसी समय यह स्थान बहुत एकान्त तपोवन था। किंतु इस समय जो नीमसार बस्ती है वह तो सुन्दर सुन्दर भवनोंसे सुशोभित हो रही है। व्यापारियोंने अपना कारबार फैलाकर इसे गल्लेकी एक अच्छी मण्डी बना लिया है। यहाँपर संस्कृत और हिन्दीकी पाठशालाएँ, डाकखाना और अन्नक्षेत्र भी है। फलादिको छोड़कर भोजनकी शेष सब वस्तुएँ यहाँ मिल जाती हैं। विवेकी यात्रीगण नैमिषारण्यमें आकर प्राचीन ऋषियोंकी आदर्श दिनचर्या और उनके सात्त्विक जीवनका स्मरण कर उनका ध्यान करते हुए अपनी श्रद्धाञ्जलि समर्पण करते हैं।

मिश्रिख

नैमिषारण्यमें गोमती और चक्रतीर्थपर स्नान कर तीर्थकी परिक्रमा करके यात्रालोग महात्मा दधीचि ऋषिकी तपोभूमि मिश्रिख की यात्रा करते हैं। 'मिश्रिख'का वर्तमान नाम 'मिसरिख' है। यह नीमसारसे ६ मील आगे दूसरा स्टेशन है। स्टेशनसे आध मीलपर तीर्थ है। यहाँ यात्रियोंके ठहरनेके लिये धर्मशाला है तथा और भी स्थान ऐसे रहते हैं जिनमें तीर्थपुजारी यात्रियोंको ठहराते हैं। इस पवित्र स्थानपर दधीचि ऋषिने तप किया था और नियमके लिये बाणगंगा नामका सरोवर निर्माण किया था। वही पीछे दधीचिकुण्डके नामसे विख्यात हुआ। इस सरोवरका जीर्णोद्धार महाराज विक्रमादित्यने कराया था। यह चारों ओरसे पक्की दीवारसे घिरा हुआ है और इसमें स्नानादि तीर्थविधि करनेके लिये बड़ा सुन्दर पक्का घाट बना हुआ है। सरोवरके बीचमें बाणगंगा नामका एक पक्का कूप है। यात्री तैरकर वहाँ जाते हैं और उस कूपके जलका आचमन करते हैं। दधीचिकुण्डके तटपर दो पुराने बरगदके वृक्ष हैं। ध्यानपूर्वक देखनेसे ये वृक्ष बहुत पुराने मालूम होते हैं। यहाँके तीर्थपुजारियोंका कथन है कि जब राजसूययज्ञ करके महाराज युधिष्ठिर यहाँ आये थे तब उन्होंने इन वृक्षोंको लगाया था।

महर्षि दधीचिकी अद्भुत उदारता पुराणोंमें प्रसिद्ध है। इसकी कथा इस प्रकार है कि जिस समय इन्द्र और वृत्रासुरका संग्राम हुआ तो इन्द्रको वृत्रासुरपर विजय प्राप्त करनेका कोई उपाय न सूझा। उनके पास ऐसा कोई शस्त्र नहीं था जिससे वे वृत्रका वध करके देवताओंपर आयी हुई आपत्तिको निवृत्त कर सकें। अतः अपनी

विजयका कोई उपाय न देखकर वे समस्त देवताओंके साथ भगवान् विष्णुके पास गये। विष्णुभगवान्‌ने कहा कि इसका उपाय आपलोग ब्रह्माजीसे पूछें। वे जैसा बतावेंगे वैसा करनेसे आपलोगोंकी अवश्य विजय होगी।

तब सब देवगण क्षीरसागरसे ब्रह्मलोकको गये और ब्रह्माजीको अपनी विपद् सुनायी। ब्रह्माजीने कहा कि इस समय नैमिषारण्य और मिश्रिखके बीच वनमें दधीचि ऋषि तपस्या कर रहे हैं। यदि उनके शरीरकी अस्थियोंसे कोई शस्त्र बनाया जाय तो उससे वृत्रासुरका वध हो सकता है।

तब समस्त देवगण ब्रह्मलोकसे दधीचि मुनिके आश्रममें आये और उन्हें अपना सारा वृत्तान्त सुनाकर अपने शरणागतोंकी रक्षाका उपाय करनेकी प्रार्थना की। मुनि इस पाञ्चभौतिक नश्वर देहके मोहसे ऊपर उठ चुके थे। उन्होंने किसी प्रकारकी आनाकानी न करके प्रसन्नतासे देवताओंके हितके लिये अपना शरीर बलिदान करना स्वीकार कर लिया। वे बोले—'देवगण! यह शरीर तो नाशवान् है। यदि इससे आपलोगोंका हितसाधन हो जाय तो बड़े आनन्दकी बात है। परन्तु मेरा एक सकल्प है। मैं भारतवर्षके समस्त तीर्थोंमें स्नान करनेका निश्चय कर चुका हूँ। इसका कोई उपाय हो सके तो मैं अपना शरीर आपलोगोंको प्रसन्नतासे समर्पण कर सकता हूँ। तब देवताओंने समस्त तीर्थोंका जल लाकर मिश्रिखके सरोवरमें डाल दिया। इसीसे इस तीर्थका नाम मिश्रिख हुआ जो 'मिश्रित' शब्दका अपभ्रंश जान पड़ता है। उस सरोवरमें स्नानकर दधीचि मुनिने योगधारणासे अपने प्राणोंको त्याग दिया। तब

देवताओंने उनका अस्थियाँ लेकर विश्वकर्मासे उनका एक वज्र बनवाया और उससे इन्द्रने वृत्रासुरका वध करके असुरोंपर विजय प्राप्त की। उसी समय दधीचि ऋषिके त्यागसे सन्तुष्ट होकर देवताओंने यह वर दिया कि जो पुरुष इस क्षेत्रमें आकर इस सरोवरमें स्नान करेगा उसे समस्त तीर्थोंके स्नानका फल प्राप्त होगा।

यहाँ कुण्डके तटपर दधीचि ऋषिकी स्मृतिमें एक पुराना मन्दिर बना हुआ है। जिसमें उनकी प्रतिमाके दर्शन होते हैं। उसके सिवा एक पञ्चप्रयागतीर्थ है। कहते हैं जिस समय देवगण समस्त तीर्थोंको मिश्रिखमें लानेके लिये गये उस समय उन्होंने प्रयागोंसे भी चलनेके लिये प्रार्थना की। परन्तु उन्होंने उनकी प्रार्थना स्वीकार नहीं की। इसलिये देवताओंने यहाँ नकली पञ्चप्रयागोंकी रचना की। इनके सिवा मिश्रिख तीर्थकी परिक्रमामें विष्णुपद तीर्थ, यज्ञवाराह तीर्थ, ब्रह्मक्षत्र तीर्थ और सिद्धेश्वर तीर्थ आदि स्थानोंका दर्शन भी अवश्य करना चाहिये।

कहते हैं दधीचि मुनिकी अस्थियोंसे बने हुए वज्रसे वृत्रासुरका वध करनेके अनन्तर देवताओंने इस स्थानपर एक यज्ञ किया था, जिसका भस्म कहीं-कहीं अब भी मिलता है। इस स्थानकी जलवायु बहुत अच्छी है। यह भी गल्लेकी एक अच्छी मंडी है। यहाँ संस्कृतपाठशाला, औषधालय, डाकघर और अवैतनिक मिडिल इंग्लिश स्कूल भी है। भोजनादिकी प्रायः सभी सामग्री सुलभ है। जिस स्थानपर दधीचि मुनिने देहत्याग किया था उसका ऐसा माहात्म्य है कि यहाँपर जिन पितरोंका पिण्डदान किया जाता है उन्हें अनन्त कालके लिये तृप्ति प्राप्त होती है।

गोकर्णनाथ

मिश्रिखके पश्चात् यात्रियोंको गोकर्णनाथकी यात्रा करनी चाहिये। मिश्रिखसे गोलागोकर्णनाथ स्टेशन ६७ मील है। वहाँ जानेके लिये सीतापुरसे गाड़ी बदलनी पड़ती है। सीतापुरतक ईस्ट इण्डियन रेल्वे है और वहाँसे रुहेलखण्ड कमायूँ रेल्वे जो शाहजहाँपुरको जाती है उसीपर गोलागोकर्णनाथ स्टेशन पड़ता है।

श्रीगोकर्णनाथ महादेवजीका मन्दिर स्टेशनसे आध मीलकी दूरीपर है। यहाँपर धर्मशालाएँ हैं। उनमें यात्री सुविधापूर्वक ठहर सकते हैं। कहते हैं एक बार त्रेतायुगमें रावणने कैलास पर्वतपर निराहार रहकर श्रीमहादेवजीकी तपस्या की। तब उसकी तपस्यामें प्रसन्न होकर कैलासपति भगवान् शंकरने उसे वर माँगनेको कहा।

रावणने हाथ जोड़कर स्तवन करते हुए भगवान् शंकरसे प्रार्थना की कि मुझे लंकासे यहाँ आनेमें बड़ा कष्ट होता है। अतः आप कैलासको त्यागकर लंकामें निवास करें। तब शिवजीने उसे दो शिवलिंग देकर कहा कि तुम इन्हें ले जाकर लंकामें स्थापित

कर लो, किंतु देखो, मार्गमें पृथ्वीपर मत रखना। यदि ऐसा होगा तो ये यहीं स्थापित हो जायँगे फिर उठाये नहीं जा सकेंगे।

रावण उन दोनों शिवलिंगोंको एक काँवरमें रखकर लंकाको ले चला। मार्गमें उसे लघुशंकासे निवृत्त होनेकी आवश्यकता हुई। ऐसी स्थितिमें वह बड़ा दुविधामें पड़ा। भगवान्‌वश इसी समय उसे सामनेसे एक भक्त आते दिखायी दिये। उन्हें सारा हाल सुनाकर उस काँवरको उनके कंधेपर रख लघुशंकासे निवृत्त होनेके लिये बैठ गया। किंतु वह भक्त उसके भारको अधिक देरतक वहन न कर सके और रावणके निवृत्त होनेसे पहले ही उन्हें उसे पृथ्वीपर रख देना पड़ा। बस, वे शिवलिंग वहीं स्थापित हो गये और पीछे गोकर्णनाथ एवं बैजनाथके नामसे प्रसिद्ध हुए। श्रीगोकर्णनाथको 'चन्द्रभाल महादेव' भी कहते हैं।

यहाँ यात्रीलोग शिवगंगा नामक पवित्र सरोवरमें स्नान करके शिवमन्दिरमें जाते हैं। पूजनका सब सामान यहीं मिल जाता है। शिवरात्रिके अवसरपर और चैत्रके महीनेमें यहाँ लाखों यात्रियोंकी भीड़ हो जाती है। उस समय बिल्वपत्र और पुष्पादिके द्वारा सर्वथा आच्छादित हो जानेके कारण भगवान् चन्द्रभालके दर्शन होने कठिन हो जाते हैं।

इस विषयमें एक बड़ी सुन्दर गाथा प्रसिद्ध है। कुछ ही दिन हुए देवीसहाय नामक एक सज्जन श्रीशंकरके दर्शनोंके लिये आये। देवीसहायजी नेत्रहीन थे परन्तु उनके हृदयमें जो शिवभक्तिकी ज्योति जगमगा रही थी उसने विवश करके उन्हें शिव-दर्शनके

लिये भेज दिया। भीड़ बहुत अधिक थी, इसलिये आधी राततक उन्हें भगवान्‌के समीप पहुँचनेका अवसर न मिला। अन्तमें जब मन्दिरका द्वार बंद किया जाने लगा तो उन्होंने पुजारीसे दर्शन करानेकी प्रार्थना की। पुजारीने उनकी बात सुनी-अनसुनी करके फाटक बंद कर दिया। तब वे लाचार होकर मन्दिरकी परिक्रमा करने लगे। परिक्रमा करते समय भी उनका चित्त शिव-दर्शनके लिये अत्यन्त लालायित था। वे प्रत्येक परिक्रमाकी समाप्तिपर एक पद रचकर भगवान्‌की प्रार्थना करते थे। इस प्रकार एक सौ एक परिक्रमाएँ पूर्ण हुईं। उनके पश्चात् जिस समय वे अत्यन्त आर्तभावसे भगवान्‌की स्तुति कर रहे थे उसी समय सहसा मन्दिरका द्वार खुल गया और उसके साथ ही उनके नेत्र भी खुल गये। तब उन्होंने बड़े प्रेमसे भगवान्‌का पूजन किया और अपने निर्मल भक्ति भावसे पुजारीको भी मुग्ध कर दिया। पुजारीने अपने अपराधकी क्षमा माँगी और एक सच्चे भक्तके दर्शनसे अपनेको कृतार्थ समझा। भक्तवर देवीसहायजीने शेवमनोरञ्जनी नामक एक बड़ा ही भक्तिरसपूर्ण ग्रन्थ लिखा है जो शिवभक्तोंके लिये बहुत ही उपादेय है।

यहाँ जो बस्ती है उसका नाम गोलागोकर्णनाथ है। इसे गोकर्णक्षेत्र भी कहते हैं। यह पवित्र स्थान पहाड़ियों और शालके वृक्षोंसे घिरा हुआ है। यहाँ बहुत-से साधु-महात्मा निरन्तर निवास किया करते हैं। यहाँकी यात्रा करनेसे मनुष्यकी समस्त कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं तथा शिवगङ्गामें स्नान करनेसे उसे दिव्य ज्ञान प्राप्त होता है—ऐसा यहाँका माहात्म्य है।

अयोध्या

गोकर्णक्षेत्रकी परिक्रमा करके यात्रियोंको भगवान्‌की जन्मभूमि श्रीअयोध्यापुरीकी यात्रा करनी चाहिये। गोकर्णनाथसे अयोध्या ११५ मील है। जानेका मार्ग सीतापुरतक आर० के० आर० से और वहाँसे छोटी लाइन बी० एन्० डब्ल्यू० रेलवेद्वारा चौकाघाट, मनकापुर होते हुए लकड़मंडीघाट पार करके है।

बड़ी लाइनके अयोध्यास्टेशनके निकट थोड़ी दूरपर शहजादपुरके श्रीमहादेवप्रसादकी धर्मशाला है। यह धर्मशाला अयोध्याकी सब धर्मशालाओंसे बड़ी, स्वच्छ और हवादार है। धर्मशालाके पीछे बगीचा है और आँगनमें भी वृक्षोंकी हरियाली रहती है। किन्तु जबसे अयोध्याका छोटा स्टेशन बंद हुआ है और लाइनके इस ओर

दूसरा स्टेशन बना है तबसे यह धर्मशाला और उस ओरकी बस्ती प्राय ऊजड हो गयी है। इसलिये अब इसका उपयोग उसी समय होता है जब विशेष अवसरोंपर अयोध्यामें अधिक भीड़ होती है। फिर भी यदि कोई यात्री स्वच्छ और हवादार स्थानमें रहना चाहें तो उनके लिये अयोध्यामे यही स्थान सबसे अच्छा है।

अयोध्यास्टेशनपर इक्के, ताँगे, बैलगाड़ी आदि सवारियाँ हर समय मिल जाती हैं। स्टेशनसे बस्ती अनुमानत एक मीलकी दूरीपर है। अयोध्यामें स्वर्गद्वारघाटपर हाथरसकी किसी माहेश्वरीदेवीकी बनवायी हुई एक छोटी सी धर्मशाला है। किन्तु यह साफ और सुन्दर तथा इसका प्रबन्ध भी अच्छा है।

दूसरी धर्मशाला नयेघाटकी सडकपर है। यह सरयूके निकट है और है भी बड़ी। किन्तु पुरानी होनेके कारण साफ नहीं रहती। इसमे ऊपर भी स्थान है, परन्तु वह सर्वसाधारणको नहा मिलता। इनके सिवा यहाँ और भी कई छोटी-छोटी धर्मशालाएँ हैं, परन्तु सरयूतटपर कोई ऐसी बड़ी धर्मशाला नहीं है कि जिसमें यात्रियोंको सब प्रकारकी सुविधा हो।

यात्रियोंको सबसे पहले स्वर्गद्वारघाटपर स्नान करके सरयूका पूजन और तीर्थ-विधि करनी चाहिये। इस घाटपर रामनवमीके दिन तो इतनी भीड़ होती है कि स्नान करना भी कठिन हो जाता है। इसके ऊपरकी ओर पास ही नागेश्वरनाथ शिवका सुप्रसिद्ध मन्दिर है। अयोध्या आकर यात्री सबसे पहले श्रीनागेश्वरनाथका ही दर्शन-

पूजा करते हैं । और फिर भगवान् श्रीरामचन्द्रजीकी परमपवित्र स्मृतिको जाग्रत् करनेवाले अन्यान्य स्थानोंको जाते हैं । उनमें सबसे पहले यहाँके तीर्थपुरोहित राम-जन्मस्थानका दर्शन कराते हैं । कहते हैं कि राम-जन्मस्थानका दर्शन करनेपर जीवको चौरासी लाख योनियोंमें जन्म लेनेपर भी उनमें होनेवाले कष्ट नहीं होते । राम-जन्मस्थानके पास उससे मिली हुई किसी मुगल-सम्राट्की बनवायी हुई मसजिद है । यह मसजिद जन्मस्थानके प्राचीन भवनको तोड़कर उसके स्थानपर बनायी गयी है । जन्मस्थानके छोटे-से मन्दिरमें भगवान्की बाल्यावस्थाकी छोटी-छोटी मूर्तियोंके दर्शन होते हैं ।

अहा ! भगवान्ने इसी स्थानपर जन्म लेकर नाना प्रकारकी मनोरम बाललीलाएँ की थीं । इसके पास ही सामनेकी ओर भगवान्की छठीका स्थान है । यह उत्सव जन्मके छठे दिन मनाया जाता है । इस स्थानमें पत्थरके बने हुए कुछ पात्र और बर्तन आदि हैं । कहते हैं, यहाँ माता कौसल्याजी रसोई बनाया करती थीं । प्राचीन कालमें बड़े-बड़े महाराजाओंके यहाँ भी पाकशास्त्रके अनुसार भोजन बनानेका कार्य गृहदेवियाँ ही किया करती थीं ।

राम-जन्मस्थानका दर्शन करके यात्रीलोग हनुमानगढ़ीको जाते हैं । हनुमानगढ़ीका दर्शन दूरसे ही होने लगता है । यह स्थान किलेके प्राय

सौ गज ऊँचे पर्वतको चौरस खोदकर बनाया गया है। महाराज रामचन्द्र-जीके समयमें यहाँपर श्रीहनुमान्‌जीका निवासस्थान था। इसलिये उनकी पवित्र स्मृतिमें उसी स्थानपर हनुमानगढ़ी बनायी गयी है। अयोध्या-में यही सबसे प्रधान स्थान है। गढ़ीके अधिकारमें बहुत-सी जमीन और जायदाद है। यदि किसीको धर्मशाला कुआँ, बगीचा अथवा कोई और सार्वजनिक स्थान बनाना हो तो उसके लिये गढ़ीके महन्तसे प्रसन्नतापूर्वक भूमि मिल सकती है।

गढ़ीके द्वारके आगे प्रसाद बेचनेवालोंका एक बाजार है, यहाँ मिष्टान्नके सिवा पुष्पादिक पूजनका सामान भी मिल जाता है। इस जगह बन्दरोंका बहुत जोर है। यदि प्रसादको छिपाकर न रक्खा जाय तो वे हाथमेंसे भी छीन ले जाते हैं। सड़कसे पचासों सीढ़ियाँ चढ़नेके बाद गढ़ीका मुख्य द्वार आता है। भीतर आँगनमें श्रीहनुमान्‌जीके दर्शन होते हैं। पाठकोंने सर्वत्र खड़े हुए ही हनुमान्‌-जीकी प्रतिमाएँ देखी होंगी। किंतु यहाँ हनुमानगढ़ीमें विश्राम करती हुई मूर्तिके दर्शन होते हैं। यहाँ प्रत्येक मंगलवार और मुख्यतः रामनवमी आदि विशेष उत्सवोंपर दर्शनार्थियोंकी इतनी भीड़ होती है कि दर्शन मिलना कठिन हो जाता है। मूर्ति भी पुष्पोंद्वारा सर्वथा छिप जाती है। मन्दिरकी परिक्रमामें बहुत कीचड़ हो जाता है। यहाँ सर्वदा पूजन एवं पाठादि होता रहता है। अयोध्यामें यह बात सर्वत्र सुननेमें आती है कि इस पुरीमें रहकर श्रीगोसाईंजीकृत हनुमानचालीसाके नित्यप्रति नियमानुसार सौ पाठ करते रहनेसे इकतालीस दिनमें अभीष्ट सिद्धि हो जाती है। इसीसे यहाँ धनी व्यक्तियोंकी ओरसे भी पण्डितोंद्वारा पुरश्चरण होते रहते हैं।

मंदिरके आगे जगमोहन और आँगनके इधर-उधर साधुओंके रहनेके स्थान हैं। यहाँपर साधुओंको नित्य भोजन दिया जाता है। अयोध्याकी सड़कोंमें दखनेपर हनुमानगढ़ी एक किलेके समान दिखायी देता है।

हनुमानगढ़ीके पीछे एक दमनीका वन है। इसमें अधिक वृक्ष दमनीके ही हैं। यह वन बहुत लम्बा चौड़ा है। यहाँ प्रातः और सायंकालम नियत समयपर हनुमानगढ़ीके महन्तकी ओरसे वानरोंको यथेच्छरूपसे पानीमें भीगे हुए चने खिलाये जाते हैं। उस समयका वानरी सेनाका दृश्य देखने ही योग्य होता है।

स्वर्गद्वारघाटका स्नान और राम जन्मस्थान तथा हनुमानगढ़ीका दर्शन करनेके पश्चात् यात्रीगण अपनी इच्छानुसार अन्य स्थानोंका दर्शन कर सकते हैं। भगवान्की जन्मभूमि अयोध्यापुरीमें ऐसे बहुत से स्मृतिचिह्न हैं जो हृदयमें प्रभुके प्रति श्रद्धा-भाव और भक्ति उत्पन्न कर देते हैं। अब हम उनमेंसे कुछका संक्षेपमें परिचय देते हैं।

कनकभवन—महाराज टीकमगढ़ने लाखों रुपया खर्च करके यह अति सुन्दर और राजभवनके समान विशाल मन्दिर बनवाया है। महाराजने इसके दैनिक खर्चके लिये भी रायसे सन्तोषजनक प्रबन्ध कर दिया है। इस मंदिरमें नित्यप्रति कुछ-न-कुछ उत्सव होता रहता है। इसमें साधु संन्यासियोंके लिये अन्नक्षेत्र भी है। जगमोहनके भीतर भगवान् राम और भगवती सीताजीकी बड़ी मनोहर झाँकी है। सामने ही एक बहुत लम्बा-चौड़ा सभामण्डप

(दालान) है, जिसमें सकड़ों मनुष्य सुविधापूर्वक बैठ सकते हैं। दालानमें संगमरमरकी शिलाके ऊपर एक लेख है, जिसमें मन्दिरकी स्थापनाका संक्षिप्त इतिहास दिया हुआ है। मन्दिरके बाहर एक कोट है, जिसमें पुष्पवाटिका लगायी हुई है और एक विश्राम-स्थान भी है। इस मन्दिरको बनवाकर टीकमगढ़नरेशने अपने धनका सार्थक किया है और इससे उनके सुयशको भी स्थायी कर दिया है।

कोपभवन—यह वह स्थान है जहाँ कुटिला दासी मन्थराके बहकानेसे महारानी कैकेयीने महाराज दशरथसे भगवान् रामके लिये वनवास और भरतके लिये राज्याभिषेक—ये दो वर माँगे थे। यहाँ मूर्तियोंद्वारा इस घटनाको प्रदर्शित किया गया है। इसी मन्दिरके दूसरे भागमें भगवानके चौबीसों अवतारोंके दर्शन होते हैं।

सीतारसोई—इस स्थानपर भगवती सीताजी रसोई बनाया करती थीं। यहाँ एक ओर श्रीसीतारामकी झाँकी है और दूसरे स्थानपर महारानियोंसहित महाराज दशरथके दर्शन होते हैं। इसी स्थानपर एक तहखानेमें कुछ सीढ़ियाँ उतरकर सीतारसोईके दर्शन होते हैं। यहाँ चूल्हा, चकला और बेलन रक्खे हुए हैं तथा पास ही श्रीसीताजी, लक्ष्मीजी और वशिष्ठजीके दर्शन होते हैं।

राजमहल—इस स्थानपर एक मन्दिरमें श्रीरामचन्द्रजी, सीताजी, लक्ष्मणजी, भरतजी, शत्रुघ्नजी और महामुनि वशिष्ठजीकी चरणपादुकाओंके दर्शन हैं।

रत्नसिंहासन—यहाँ श्रीराम, सीता और लक्ष्मणजीके दर्शन होते हैं। कहा जाता है कि राज्यारोहणके समय भगवान् यहीं विराजमान हुए थे।

आनन्दभवन—यहाँ महारानी कौसल्याकी गोदमें रामचन्द्रजी, कैकेयीकी गोदमें भरतजी और सुमित्राजीकी गोदमें लक्ष्मणजी एवं शत्रुघ्नजीके दर्शन होते हैं। इस स्थानपर उनकी बाललीलाओंका अवलोकन करनेके लिये काकभुशुण्डिजी आया करते थे। यहाँ उनकी भी मूर्तिके दर्शन होते हैं।

रामकचहरी—इस स्थानपर भगवान् रामचन्द्रजीका न्यायालय था। यहाँ बैठकर उन्होंने श्रीसीताजीके विषयमें लोकापवाद सुना था। इस मन्दिरमें बहुत-सी शालग्रामशिलाएँ हैं तथा श्रीसीताराम आदि अन्यान्य देवताओंके भी दर्शन होते हैं।

नन्दिग्राम—यह अयोध्यासे चौदह मीलकी दूरीपर है। राम-वनगमनके समय जब भरतजी भगवान्‌का राज्याभिषेक करनेकी इच्छासे चित्रकूट गये थे, उस समय जब भगवान्‌ने उनका प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया तो वे उनकी चरणपादुका ले आये थे और उसे राज्यासनपर स्थापितकर स्वयं कठोर तपस्या करते हुए उनकी आज्ञा लेकर राज्यका भी प्रबन्ध करते थे। भगवान् रामके आनेतक उन्होंने भी अयोध्यामें प्रवेश नहीं किया और वे बारह वर्षतक नन्दिग्राममें ही रहकर तपस्या करते रहे। इस प्रकार महाराज भरतने जिस भ्रातृप्रेमका अनुपम आदर्श रखकर भारतका मुख उज्ज्वल किया है, उसकी कथा अब यहीं भी स्मरण होता है?

नन्दिग्राममें भरतजीके संस्मरणस्वरूप भरतमन्दिर और भरतकुण्ड आदि कई स्थान हैं ।

लक्ष्मणकिला—स्वर्गद्वारसे थोड़ा दूर लक्ष्मणघाटपर मिट्टीका एक ऊँचा टीला है । उसके ऊपर लक्ष्मणजीका मन्दिर है । अयोध्या आकर लक्ष्मणजीके दर्शन अवश्य करने चाहिये । इस स्थानपर लक्ष्मणजी प्रत्यक्ष फल देते हैं । यहाँ सरयू-किनारे लक्ष्मणघाटपर कोई असत्य नहीं बोलता । यदि कोई बोलता है तो उसे अवश्य दण्ड मिलता है । यहाँकी अदालतें भी बड़े-बड़े मामले लक्ष्मणजीके ऊपर रखकर छुट्टी पा जाती हैं । जिस प्रकार पुरीमें लोकनाथकी शपथ खानेसे वहाँके निवासी भयभीत होते हैं उसी प्रकार अयोध्यामें लक्ष्मणजीकी शपथसे लोग घबड़ाते हैं ।

मणिपर्वत—इस स्थानपर श्रीसीताजी झूलनोत्सव मनाया करती थीं । इस समय भी श्रावणमासमें अयोध्याके झूलनोत्सवका आरम्भ इसी स्थानसे होता है ।

गुप्तारघाट—यह स्थान अयोध्यासे सात मील और फैजाबादसे तीन मीलकी दूरीपर है । यहाँसे भगवान् रामचन्द्र साकेतधाम सिधारे थे । तथा इसी स्थानपर लक्ष्मणजीने योगधारणाद्वारा शरीर-त्याग किया था । सच तो यह है कि जितना प्रेम भरतजीका श्रीरामचन्द्रजीमें था उतना ही श्रीरामचन्द्रजीका लक्ष्मणजीके प्रति था । इसीसे लक्ष्मणजीके स्वधामगमन करते ही उन्होंने भी समस्त अयोध्यावासियोंको अपने महाप्रस्थानकी सूचना दे दी और उन सबके सहित दिव्य विमानोंपर आरूढ़ हो सके

प्रवेश किया। गुप्तारघाट इसी घटनाकी स्मृति दिलाता है। उस समयका दृश्य चित्तके सामने आते ही ऐसा कौन सहृदय होगा जो विचलित न हो! भगवान्की स्मृतिके साथ उस समयकी भी स्मृति जाग्रत् हो उठती है। अहा! 'रामराज्य' यह शब्द कैसे शान्तिमय समयकी याद दिलाता है। एक बार देवर्षि नारदने उस दिव्य कालका वर्णन करते हुए वीणामें गाया था कि आपके रामराज्यमें प्रजावर्ग दैहिक, दैविक और भौतिक इन तीनों तापोंसे पीडित नहीं है। ऋतुओंने अपनी मर्यादा छोड़ दी है, सब ऋतुओंमें सब प्रकारके फल फूल लगे हैं। प्रजाजनको किसी प्रकारका कष्ट नहीं है। पिताके सामने पुत्रकी मृत्यु नहीं होती। लोग धन धान्यसे सम्पन्न हैं। स्थान स्थानपर कूप, वाटिकाएँ, पौसाले और अन्नक्षेत्र खुले रहनेके कारण यात्रियों-को किसी प्रकारका कष्ट नहीं होता। जगह-जगह चिकित्सालय खुले हुए हैं तथा सेवाकार्यके लिये स्वयंसेवकलोग घूमते रहते हैं। 'राज्यमें कोई शक्तिशाली व्यक्ति किसीको कष्ट तो नहीं दे रहा है'—इस बातको जाननेके लिये बहुत से गुप्तचर घूमते रहते हैं। तथा राज्यकी ओरसे ऋषि मुनियोंके लिये यज्ञसामग्री पहुँचानेका भी समुचित प्रबन्ध है।

गुप्तारघाटपर सरयूमें गंगाजीके समान वेग है। यहाँ इसकी कई धाराएँ हो गयी हैं जिन्हें लोग सहस्रधारा कहकर पुकारते हैं। इस घाटपर श्रीगुप्तहरि भगवान्का मन्दिर है तथा घाट और मन्दिर बहुत लागत लगाकर बनाये गये हैं। यह स्थान बड़ा ही दर्शनीय है।

सूर्यकुण्ड—यह कुण्ड सूर्यवंशी राजाओंकी स्मृतिमें बनाया गया है। यह बहुत बड़ा सरोवर है। इसके तीन ओर पक्के घाट बने हुए हैं। यह रामघाटसे चार मीलकी दूरीपर है। सड़क पक्की है। सरोवरके तटपर सूर्यभगवान्‌का मन्दिर है।

बाबा रघुनाथदासकी छावनी—इस स्थानपर बहुतसे वैष्णव संतजन निवास करते हैं। उन्हें स्थानकी ओरसे भोजनादि भी दिया जाता है। बाबा रघुनाथदासजी एक प्रसिद्ध महात्मा हो गये हैं। अपने पूर्वाश्रममें वे चौकीदारीकी नौकरी करते थे। उन्हें श्रीरामायणजीकी कथा सुननेका बहुत चाव था। एक दिन उत्तरकाण्डका वह प्रसङ्ग हो रहा था जब कि भगवान् पुष्पक विमानपर बैठकर अयोध्या पधारे थे और उनके आगमनकी सूचना पाकर समस्त पुरवासी नर नारियोंके सहित राजमाताएँ और गुरु वसिष्ठजी भी अत्यन्त व्यग्र होकर नगरके बाहर एकत्रित हो गये थे। इस प्रसंगको सुनते सुनते रघुनाथदासजी ऐसे तल्लीन हो गये कि उन्हें देहानुसन्धानतक न रहा और वे मानो प्रत्यक्ष ही वह सब लीलाएँ देखने लगे। यह समय भी उनकी नौकरीका ही था, परन्तु वे तो किसी दूसरे ही लोकमें विचर रहे थे। अतः भक्तभयहारी श्रीभगवान्‌को अपनी आन रखनी पड़ी और उन्होंने रघुनाथदासका रूप धारणकर उनकी जगह ड्यूटी बजायी। जब रघुनाथदासको चेत हुआ और अपनी नौकरीका समय बीत जानेका पता लगा तो वे वर्दी पहनकर नियत स्थानपर पहुँचे। वहाँ लोगोंसे सारा हाल जानकर उनका हृदय प्रभुके प्रति कृतज्ञतासे

द्रवीभूत हो गया और वे नौकरी छोड़कर राम-भजनमें लग गये। तदनन्तर वे अयोध्याके एक बहुत प्रसिद्ध संत हुए और उनका स्थान सैकड़ों साधुओंका निवासस्थान हो गया। कहते हैं जिस समय उन्होंने देह त्याग किया था उस समय अयोध्याके बहुत-से नर-नारी और महात्माओंने उनकी चिताकी भस्म मस्तकपर धारण की थी और उनकी स्मृतिमें उपवास भी किया था।

बाबा मनीरामकी छावनी—यह स्थान बाबा रघुनाथदासजीके स्थानकी अपेक्षा भी बड़ा है। प्रायः दो बीघा भूमिपर टीनसे छाया हुआ पक्का स्थान है। उसमें बहुत-से महात्माओंके दर्शन होते हैं। बाबा मनीरामजी भी बहुत प्रसिद्ध महात्मा थे।

बाबा माधोदासका अखाड़ा—इस अखाड़ेपर नानकपन्थी साधुओंका अधिकार है। यहाँ नित्यप्रति अधिकतर नानकपन्थी साधुओंको ही भोजन कराया जाता है। इनके सिवा दिगम्बरी अखाड़ा, नरसिंहदासकी छावनी, मौनीजीकी छावनी आदि और भी बहुत से स्थान हैं। सौ-सौ, पचास-पचास साधुओंको भोजन करानेवाली तो बीसियों संस्थाएँ हैं। इन स्थानोंपर सर्वदा भण्डारे और श्रीसीतारामकी मधुर ध्वनि हुआ करती है।

तुलसीचौरा—यह वह स्थान है जहाँ रहकर श्रीगोसाईं तुलसीदासजीने रामचरितमानसकी रचना की थी। यह एक ऊँचा चौड़ा चबूतरा है। इसके एक ओर एक कुटी है। इस स्थानपर श्रीरामायणजीकी कथा प्रायः होती रहती है।

महाराज रामचन्द्र जब रावणको विजयकर पुष्पक विमानसे अयोध्या पधारे थे तब उनके साथ हनुमान्, अंगद आदि मुख्य सेनापति भी आये थे। भगवान्‌ने उनके निवासके लिये बड़े बड़े सुन्दर महल बनाये थे। आजकल उन महलोंका तो कहीं पता नहीं लगता, किन्तु उनके रहनेके टीले अब भी प्रसिद्ध हैं और उनकी स्मृतिमें विभीषणकुण्ड, सुग्रीवकुण्ड, सीताकुण्ड, अग्निकुण्ड आदि कई सरोवर बने हुए हैं। संसारमें यशस्वी पुरुषोंका नाम कभी नहीं मिटता, किसी-न किसी रूपमें उनकी स्मृति बनी ही रहती है।

काशीकी भाँति अयोध्यामें भी भारतवर्षके राजा महाराजाओंके मन्दिर और पक्के निवासगृह बने हुए हैं। यहाँके स्वर्गीय महाराज ददुआजीका महल भी देखने योग्य है। इसमें 'अयोध्याराज्य-लाइब्रेरी' नामक एक पुस्तकालय है, जिसमें प्रायः सब प्रकारकी नयी और पुरानी पुस्तकोंका संग्रह है। अयोध्यामें संस्कृत विद्याका भी अच्छा प्रचार है। यहाँका सबसे बड़ा विद्यालय 'बड़े स्थान' के नामसे प्रसिद्ध है। और भी बहुत-सी छोटी-बड़ी पाठशालाएँ हैं, जिनमें प्रायः एक सहस्र विद्यार्थी अध्ययन करते हैं।

अयोध्याकी परिक्रमा—इस परिक्रमामें और भी बहुत-से देवस्थान मिलते हैं। यह कार्तिक महीनेमें होती है, जिसमें बाहरके यात्रियोंके अतिरिक्त बहुत-से अयोध्यावासी भी सम्मिलित होते हैं। उस समय अयोध्याके सारे मार्ग यात्रियोंसे भर जाते हैं। लोग लाखोंकी संख्यामें सीतारामकी ध्वनि करके आकाशको गुञ्जायमान कर देते हैं। वाल्मीकिरामायणके अनुसार अयोध्याका

सीमा बारह योजन लम्बी और तीन योजन चौड़ी मानी गयी है। अब भी किसी किसी स्थानपर कुआँ आदि खोदनेके समय जो लम्बी और पुरानी लम्बी चौड़ी ईंटें मिलती हैं वे पुरानी अयोध्याका परिचय देती हैं। अयोध्याकी वनयात्रा भी होती है। परन्तु इसमें समय अधिक लगता है, इसलिये अधिकांश यात्री इसमें सम्मिलित नहीं होते। वनयात्रामें पारनवन, हिमवन, जोगवन, पुष्करवन आदि मिलते हैं। अयोध्यासे सात मीलकी दूरीपर सरयूके किनारे वह स्थान भी है जहाँ भरतजीने महाराज दशरथका अन्त्येष्टि कर्म किया था।

अयोध्यामें प्रायः पन्द्रह सहस्र तो वैष्णव ही रहते हैं। यहाँपर ऐसा कोई विरला ही घर होगा जिसमें ठाकुरद्वारा न हो। अयोध्या मोक्षपुरियोंमें है। इसलिये यह भी मोक्षपुरी मानी गयी है। काशीकी भाँति यहाँ भी कितने ही श्रद्धालु पुरुष अपना अन्तिम जीवन व्यतीत करनेके लिये निवास करते हैं। यहाँपर श्रीराम अस्पताल, मिडिल स्कूल, अन्नक्षेत्र और संस्कृतकी कितनी ही पाठशालाएँ हैं। यहाँकी जलवायु बहुत अच्छी है। अब तो काशीपुरीकी भाँति अयोध्याकी भी उन्नति हो रही है और म्युनिसिपैलिटीने यहाँ बिजली लगानेका प्रबन्ध किया है।

माहात्म्य—महाभारतके वनपर्वमें लिखा है कि अयोध्याकी यात्रा और गुप्तारघाटपर स्नान करनेवाले यात्री सब प्रकारके पापोंसे मुक्त होकर अन्तमें स्वर्गको जाते हैं तथा जिन भाग्यवानोंका यहाँ देहान्त होता है उन्हें मोक्ष प्राप्त होता है।

जौनपुर

इस प्रकार भगवान रामचन्द्रकी जन्मभूमि अयोध्याके दर्शन करके यात्रियोंको जौनपुर आना चाहिये। जौनपुरका प्राचीन नाम यमदग्निपुर है। यह अपभ्रंश होते-होते यमदग्निपुरसे यमनपुर और अब जौनपुर हो गया है। काशी और अयोध्याके मध्यमें होनेके कारण यहाँ साधु-सन्यासी बराबर आते-जाते रहते हैं। गंगासागरकी यात्राके समय तो यह देश दशान्तरके महात्माओंका अच्छा खासा पड़ाव हो जाता है। यहाँकी परिपाटीके अनुसार उनके सत्कारके लिये बाजारमें चन्दा हो जाता है।

अयोध्यासे जौनपुर पचास मील है। यह ई० आई० आर० और बी० एन० डब्ल्यू० आर० का जङ्क्शन स्टेशन है। शहर स्टेशनसे मिला हुआ है फिर भी यहाँ तांगे इक्का आदि सवारियोंकी किसी भी समय कमी नहीं रहती।

यात्रियोंके ठहरनेके लिये गोमतीतटपर कृष्णकुटीर नामकी एक सुन्दर और पक्की धर्मशाला है। उस धर्मशालामें सौ सौ यात्री बड़ी सुविधापूर्वक ठहर सकते हैं। इसका प्रबन्ध एक कमेटी-द्वारा होता है।

जौनपुरके मुख्य मुख्य स्थानोंका विवरण इस प्रकार है—

हनुमानघाट—यह धर्मशालाके सामने ही है। यहाँ श्रीमहावीरजीका मन्दिर है। इस मंदिरके पास पीपलके वृक्षकी

छाया रहती है। यह स्थान बड़ा रमणीय है। बरसातके दिनोंमें यहाँ बड़ी भीड़ हो जाती है। घाटपर पुरुषमात्र और पूजनकी सामग्री एक मार्गमें मिल जाती है। हनुमान्‌जीके पास एक शिवजीका भी मन्दिर है। यहाँ श्रीसत्यनारायणजीका भी एक बड़ा सुन्दर मन्दिर है। मन्दिरके सामने एक छोटी धर्मशाला भी है जिसमें इन यात्रियोंके ठहरनेकी जगह है। सत्यनारायणजीके मन्दिरके आगे बिहारीजीका मन्दिर है। इसमें भगवान् कृष्णकी बड़ी मनोहर झाँकी है।

गूलरघाट—यहाँ श्रीरामकृष्णका एक सुन्दर और सुविशाल मन्दिर है। उसमें साधु महात्मा और गृहस्थ-यात्रियोंके ठहरनेके लिये भी पर्याप्त स्थान है। इस मन्दिरके भूतपूर्व महन्त बाबा गंगादासजी अपनी साधुसेवाके लिये प्रसिद्ध थे। इस समय भी मन्दिरके राग-भोगादिका समुचित प्रबन्ध है।

अचलाघाट—यह स्थान बाबा नारायणदास नानकपन्थीका है, परंतु यहाँ सभी सम्प्रदायके साधुओंका सत्कार होता है और उन्हें भोजन भी कराया जाता है। अभी हालमें इस घाटका जीर्णोद्धार कराया गया है। घाट इतना बड़ा है कि सौ-सौ मनुष्य बड़े आनन्दसे स्नान कर सकते हैं। घाटके ऊपर किसी स्थानीय देवीकी बनवायी हुई एक छोटी-सी धर्मशाला है।

यमदग्नि-आश्रम—अपभ्रंश होते-होते आजकल इसका नाम 'जमैथा' पड़ गया है। यहाँसे तीन मीलकी दूरीपर गोमतीतटपर एक आश्रम है। यहाँ अभी अधिक समय नहीं हुआ, एक परमहंस बाबा रहते थे उन्होंने कभी किसीसे कोई याचना नहीं की। वे

बहुधा जगलके निर्जन और निराश्रय स्थानोंमे कुटी बनाकर रहा करते थे । इन्होंने यमदग्नि-आश्रममें योगाग्निद्वारा शरीर-त्याग किया था । जिस प्रकार सती स्त्रियां अपने शरीरसे ही अग्नि प्रकट करके भस्म हो जाती हैं उसी प्रकार उन्होंने भी अपने शरीरको योगाग्निसे भस्म किया था । जिस समय उनका शरीर जल रहा था पुलिसने जमेथाके लोगोंका यह अभियोग लगाकर पकड़ लिया कि महात्माजीके पास धन था । उसे लेकर उन्होंने इन्हें जला दिया है । जमेथा-निवासियोंने अपनेको निर्दोष सिद्ध करना चाहा परन्तु जब पुलिसने उनकी बात न सुनी तो उन्होंने कहा कि यदि बाबाजीके शरीरकी अग्नि गंगाजल डालनेसे शान्त हो जाय तो हमें अपराधी समझा जाय । पुलिसने जलते हुए शरीरपर गंगाजल छिड़वाया, परन्तु इससे वह अग्नि शान्त न हुई । इससे उन्होंने ग्रामवासियोंको निर्दोष जानकर छोड़ दिया । परमहंसजीके निर्वाण-दिवस कार्तिक कृ० २ को यहाँ एक मेला होता है । उस समय सहस्रों स्त्री-पुरुष उनकी समाधिपर श्रद्धाञ्जलि समर्पण करते हैं ।

उल्लेनाथ-आश्रम—यह स्थान बाबा उल्लेनाथका है । इन्होंने यहाँ बीस वर्ष तपस्या की थी । हमारी यात्राके समय ये योगिराज जीवित थे, परन्तु अब इन्होंने भी स्वेच्छापूर्वक अपना शरीर त्याग दिया है । इन्होंने एक गुफा बनवायी है । उनका अधिक समय इसी गुफाके भीतर व्यतीत होता था । इन महात्माने भी किसीसे याचना नहीं की । यह स्थान एकान्त होनेके कारण बड़ा शान्तिप्रद है ।

यौकियादेवी—यह एक सुप्रसिद्ध सिद्ध पीठ है। यहाँ प्रतिदिन आस पासके सैकड़ों नर नारी आते हैं, सोमवारको दिन तथा प्रत्येक पूर्णिमा और अन्यान्य पर्वोंपर तो यहां पूरा मेला-सा लग जाता है।

यह भगवतीका मंदिर है। इसके पास ही प्रसाद और पुष्पमालादिकी दूकान हैं। मन्दिरसे मिला हुआ एक सरोवर है। उसके तटपर एक श्रीरामकृष्णका भी मंदिर है तथा पास ही एक पक्की धर्मशाला है।

सूर्यघाट—यह गोमतीजीके ऊपर एक पक्का घाट है। इसपर बहुतसे देवालय हैं। पर्वतिथियोंपर आस-पासकी जनता अधिकतर इसी घाटपर स्नान करती है।

रामघाट—यह श्मशानभूमि है।

जिस समय जौनपुरका नाम यमदग्निपुरसे यवनपुर हुआ था उस समय यहां यवनोंका राज्य था। उन्होंने यहांके कई बड़े बड़े देवालयोंको विध्वंस करके एक बड़ा मसजिद बनवायी है जो आकाशसे बातें करती है। उनमें लगे हुए मूर्तियोंके खण्ड अब भी दृष्टिगोचर होते हैं।

गोमतीके तटपर पठानसम्राट् फीरोजशाहका किला है। इसके भीतर जो पुराना इमारत बना हुए हैं वे अभीतक बहुत-कुछ सुरक्षित है। इस किलेपर बाहर भीतर एक प्रकारके वृक्षोंका बन-सा खड़ा हो गया है। इसकी रक्षाके लिये गवर्नमेण्टकी ओरसे एक आदमी किलेमें नियुक्त है।

यहांपर गोमतीजीपर एक पत्थरका पुल देखने योग्य है। इस पुलको सिकन्दरशाहने बनवाया था। पुलके ऊपर दूकानें

बनी हुई हैं। इनसे इस पुलकी शोभा और भी बढ़ गयी है। पुलके उस पार एक पुस्तकालय है, जो प्रात दस बजेसे सायकालके छ बजेतक खुला रहता है।

साँपनाथ—यह मन्दिर जौनपुरसे पाँच मील दूर है। इस स्थानपर साँपनाथ महादेवके दर्शन होते हैं। पास ही एक सरोवर है। शिवरात्रि और श्रावणके महीनेमें यहा हजारो स्त्री पुरुष आते हैं। यह एक वनखण्डमे है। पहले यहा कोई मंदिर नहीं था। अभी थोडा समय हुआ एक पागल साधुने शिवलिंगको उखाड़कर फेंकना चाहा था। किन्तु जब पन्द्रह फुट जमीन खोदनेपर भी उसका पता न मिला तो लोगोंमे बडा आन्दोलन हुआ और वहाँ एक पक्का मंदिर बनवा दिया गया।

सन् १९८७ में मछलीशहरके पास एक टीलेको खोदनेपर एक पक्का शिवालय निकला है। उस टीलेपर वृक्षादि थे। अभीतक उसकी खोदाई हो रही है। उस मन्दिरको देखनेके लिये सहस्रों मनुष्य आते हैं। इसी प्रकार इस भूमिमे समय-समयपर बहुत से प्राचीन देवालय और महलोंके खण्डहर मिलते रहते हैं।

यह वही स्थान है जहाँ किसी समय तपोमूर्ति महर्षि यमदग्नि रहते थे। एक बार उन्होंने अपनी धर्मपत्नी रेणुकाके किसी आचरणसे रुष्ट होकर अपने पुत्रोंको उसका वध करनेकी आज्ञा दी। किंतु उनका साहस मातृ-वध-जैसा पाप करनेको न हुआ। तब उन्होंने अपने सबसे छोटे पुत्र परशुरामजीको भाइयोंसहित माता रेणुकाका मस्तक काटनेकी आज्ञा दी। परशुरामजी पिताके तपोबलसे परिचित थे, अत उन्होंने उनकी आज्ञाका पालन करनेमें किसी

प्रकारकी आनाकानी न की। उनकी ऐसी अद्भुत पितृभक्ति देखकर यमदग्निजी बहुत प्रसन्न हुए और उनसे वर माँगनेको कहा। तब उन्होंने यही वर माँगा कि उनकी माता और भाई फिर जीवित हो जायँ। मुनिवरके प्रसादसे ऐसा ही हुआ और उन्हें परशुरामके इस कठोर कृत्यका भी कुछ ज्ञान न हुआ।

एक बार भारतसम्राट् सहस्रार्जुन अपनी सेनाके सहित यमदग्निके आश्रममें आ पहुँचा। ऋषिने कामधेनुके प्रसादसे समस्त सेनाके सहित सम्राट्का यथोचित आतिथ्यसत्कार किया। कामधेनुका ऐसा प्रभाव देखकर सहस्रार्जुन बलात्कारसे उसे हर ले गया। परन्तु वह पीछे स्वयं मुनिवरके आश्रमपर आ गयी। इस घटनाके कुछ काल पश्चात् परशुरामजीकी अनुपस्थितिमें घात लगनेपर सहस्रार्जुनके पुत्र यमदग्नि मुनिका सिर काटकर कामधेनुको ले आये। पतिदेवको इस प्रकार मारे जाते देखकर माता रेणुका रोने लगी और उसने अत्यन्त आर्त होकर इकीस बार परशुरामको पुकारा। परशुरामजीके आनेपर जब सारा समाचार विदित हुआ तो उन्होंने प्रतिज्ञा करके इकीस बारमें पृथ्वीके प्रायः सभी क्षत्रियोंको मार डाला और उनका राज्य ब्राह्मणोंको दान कर दिया।

जौनपुर जिलेका केन्द्रस्थान है। यहाँ अनाथालय, गोशाला, सरकारी चिकित्सालय, महिलाचिकित्सालय, संस्कृतविद्यालय, कन्यापाठशाला और हाईस्कूल आदि बहुत-सी संस्थाएँ हैं। यहाँका जलवायु अच्छा है। तथा कुँओंके जलकी अपेक्षा गोमतीका जल अधिक स्वास्थ्यप्रद है।

प्रयाग

यमदग्निपुर अर्थात् जानपुरके पश्चात् यात्रियोंको तीर्थराज प्रयागके दर्शन करने चाहिये। यह जौनपुरसे ७१ मील है। और ईस्ट इण्डियन रेल्वेका बहुत बड़ा जकशन है। इस पवित्र तीर्थका दर्शन करनेके लिये यहाँ प्रतिवर्ष देश देशान्तरके लाखों यात्री आते हैं। कुम्भपर्वके अवसरपर तो यहाँकी भीड़का अनुमान करना भी कठिन हो जाता है। उस समय पुलिसके अतिरिक्त स्थानीय तथा बाहरसे आये हुए सहस्रों स्वय-सेवक भी मेलेके प्रबन्धमें सहयोग देकर जनताकी सेवा करते हैं।

प्रयाग बहुत बड़ा नगर है। सन् १९३१ तक यह सयुक्त-प्रांतकी राजधानी था। अब प्रांतीय गवर्नरका दफ्तर लखनऊ चला गया है। इसकी जन-सख्या दो लाखसे कुछ कम है। यहाँसे भिन्न भिन्न सभी दिशाओंको रेल्वे लाइनें और पक्की सड़कें गयी हैं। प्रयागके स्टेशन और रेल्वे-लाइनोंका विवरण सक्षेपमें इस प्रकार दिया जा सकता है।

१ **इलाहाबाद जकशन**—यह ईस्ट इण्डियन रेल्वेका बहुत बड़ा स्टेशन है। यहाँ जी० आई० पी० रेल्वेकी भी एक शाखा

आती है। यहाँसे विभिन्न दिशाओंमें दिल्ली, झाँसी, जबलपुर कलकत्ता, बनारस और लखनऊ आदि कई स्थानोंको गाड़ियाँ जाती हैं।

२ **नैनी**—यह स्टेशन इलाहाबाद जंक्शनसे चार मील दूर यमुनाके उस पार है। कलकत्ता, जबलपुर और झाँसी जानेवाली गाड़ियाँ इसी स्टेशनपर होकर जाती हैं।

३ **प्रयाग**—इलाहाबाद जंक्शनसे फैजाबाद या [ई० आई० आर०] द्वारा बनारस जाते समय दो मीलपर पहला स्टेशन प्रयाग है। इससे आगे गंगाजीके उस पार फाफामऊ स्टेशन है।

४ **प्रयागघाट**—गंगास्नानको जानेके लिये प्रयाग स्टेशनसे एक शाख दारागंजतक आयी है। यह गाड़ी केवल मेलेके समय चलायी जाती है। इसके स्टेशनका नाम प्रयागघाट है।

५ **त्रिवेणी-संगम-स्टेशन**—सन् १९३० से संगमके समीप बाँध-के पास ई० आई० आर० ने यह छोटा सा स्टेशन खोला है। यह लाइन इलाहाबाद जंक्शनसे आता है। यह स्टेशन भी मेलेके ही समय काममें लिया जाता है।

६ **इलाहाबाद सिटी**—यह शहरके मध्यमें बी० एन० डब्ल्यू० आर० का स्टेशन है। यहासे काशी, गोरखपुर या कटिहार आदि स्थानोंको जानेवाले यात्री जा सकते हैं।

७ **ऐंजटनगंज**—यह इलाहाबाद सिटीसे ३ मीलकी दूरीपर दूसरा स्टेशन है। इससे दारागंजकी बस्ती मिली हुई है।

८ झूसी–यह गगाजीके उस पार ऐजटनिजसे अगला स्टेशन है

यात्रियोंके ठहरनेके लिये यहाँ बहुत-सी धर्मशालाएँ हैं तथा पण्डेलोगोंके भी बहुत से मकान हैं । एक धर्मशाला प्रयागस्टेशनके निकट है, दूसरी इलाहाबाद जक्शनके पास है । यह बिहारीलाल कुञ्जलाल मिर्जापुरवालोंकी बनवायी हुई है । बहुत सुन्दर और साफ है । इस धर्मशालामें नीचे ओर ऊपर पानीके नल लगे हुए हैं तथा यात्रियोंकी सुविधाका सब प्रकार ध्यान रखा जाता है । प्रयागराजकी यात्रामें आये हुए अधिक यात्री इसी धर्मशालामें ठहरते हैं ।

तीसरी धर्मशाला मुट्ठीगजमें है । यह गोमती बीबीकी बनवायी हुई है । यह भी बड़ी साफ और पाँच सौ यात्रियोंके [illegible] योग्य हे । चौथी दारागजमे है तथा पाँचवीं सुदा[illegible], निकट है । इसी प्रकार ओर भी कई धर्मशालाएँ हैं । मुट्ठीगजमें [illegible] गोकुलदास तेजपालकी धर्मशाला है उसमें साधुओंको [illegible] दिया जाता है ।

यात्रीलोग इन्हींमें अपनी-अपनी सुविधाके अनुसार [illegible] हैं । प्राचीन कालमें इस पवित्र तीर्थका नाम [illegible] ब्रह्माजीने एक बहुत बड़ा यज्ञ किया था । तबसे [illegible] हुआ । अकबरने इसका नाम इलाहाबाद [illegible] नगर अधिकतर इसी नामसे परिचित है । [illegible] दर्शनीय स्थानोंका वर्णन करते हैं ।

त्रिवेणी–जिसमें पुण्यसलिला जाह्नवी और पुण्यप्रदा कालिन्दी प्रत्यक्ष तथा सरस्वतीजीका अप्रत्यक्ष सम्मिलन है, उन तिरिसतरलवाहिनी धाराओंका नाम त्रिवेणी है। सबसे पहले *यात्रियोंको त्रिवेणीमें स्नान करना चाहिये।* त्रिवेणीके तटपर तीर्थगुरुओंके झण्डे फहराते हैं। उन झण्डोंके ऊपर निशान बने हुए हैं। जिसके द्वारा यात्रियोंको अपने अपने पण्डोंकी पहचान करनेमें कोई असुविधा नहीं होती।

संगमका स्थान नदियोंके प्रवाहके अनुसार बदलता रहता है। जिस समय जहाँ भी श्याम और श्वेत सलिलका संगम होता है वहीं तटपर तीर्थपुजारियोंके तख्त पड़े रहते हैं। यहाँ यात्रियोंको चन्दन, रोली, भस्म, यज्ञोपवीत आदि सामग्री सुविधासे मिल जाती है। अन्य तीर्थोंकी अपेक्षा प्रयागमें मुण्डन करानेका विशेष माहात्म्य है, जैसा कि कहा है—

> राजा वा राजपुत्रो वा लक्ष्मीपतिरेव वा।
> प्रयागे वपनं कुर्यात्सर्वथैव कदाचन॥

अर्थात् राजा हो, राजकुमार हो अथवा स्वयं विष्णु ही हों, प्रयागमें अवश्य मुण्डन करावे, भले ही दूसरे क्षेत्रमें न करावे। इसलिये त्रिवेणी तटपर नाइयोंका भी एक दल रहता है। यात्रियोंको मुण्डन कराकर ठीक संगममें स्नान करना चाहिये। संगमस्थानमें किनारेपर प्रायः दलदल हो जाता है। इसलिये यात्रियोंको नौकामें बैठकर स्नान करना होता है। स्नानके पश्चात् तीर्थविधि करनी चाहिये। यहाँ अन्य तीर्थोंके समान पिण्डदान तो किया ही जाता

है, उसके अतिरिक्त वेणीदानका भी विशेष माहात्म्य है । प्रयाग तीर्थराज है । इसकी महिमा अकथनीय है । पुराणोंमें तीर्थराजकी महिमाका मुक्तकण्ठसे वर्णन किया गया है । प्रयागके तीन भाग हैं । (१) प्रयाग—गंगा-यमुनाके मध्यका भाग, (२) अलर्कपुर या अरैल—यमुनाके पश्चिमतटका भाग और (३) प्रतिष्ठानपुर या झूसी—गंगाके दक्षिणतटका भाग । यह प्रजापतिक्षेत्र कहलाता है । इसमें माघ मासमें स्नान और कल्पवास करनेका अनन्त फल होता है ।

अक्षयवट—त्रिवेणीजीका स्नान और पितरोंका तर्पण करके यात्रियोंको अक्षयवटका दर्शन करना चाहिये । अक्षयवटके दर्शन किलेके भीतर होते हैं । यह किला अकबरका बनवाया हुआ है । आजकल इसमें स्थानीय छावनीकी बारकें बनी हुई हैं । यहीं किसी समय मुगलसम्राटोंके अन्तःपुर थे । उनसे आजकल शस्त्रागारका काम लिया जाता है । इस किलेके भीतर यात्री केवल अक्षयवटका ही दर्शन कर सकते हैं । अन्य स्थानोंमें सर्वसाधारणको जानेकी आज्ञा नहीं है । अक्षयवटकी स्थिति एक गुफाके भीतर है । इसे पातालपुरीका मन्दिर कहते हैं । यह प्रयागका बहुत प्राचीन स्थान है । शास्त्रोंमें अक्षयवटकी बहुत महिमा कही है और यह बतलाया है कि प्रलयकालमें भी इसका उच्छेद नहीं होता । यह वट वृक्षका एक ठूँठ-सा है । बहुत लोगोंका अनुमान है कि किलेके किसी गुप्त स्थानमें असल अक्षयवट है । वर्तमान अक्षयवट जिस अँधेरी गुफाके भीतर है उसमें और भी बहुत सी मूर्तियाँ हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं—धर्मराज,

अन्नपूर्णा, सङ्कटमोचन, महालक्ष्मी, आदिगणेश, वाल्मुकुन्द, शूल टङ्केश्वर महादेव, गौरीशंकर, दण्डपाणि भैरव, ललितादेवी, गंगाजी, स्वामिकार्तिकेय, नृसिंहभगवान्, दत्तात्रेय, सूर्यनारायण, अनसूया देवी, पवनदेव, वरुण, मार्कण्डेयऋषि, अग्निदेव, दूधनाथ, दुर्वासा और गोरखनाथ आदि।

यह स्थान पृथ्वीके गर्भमें क्यों और कब बनाया गया इसका कोई सन्तोषजनक प्रमाण नहीं मिलता। यहींपर सम्राट् अशोकका बनवाया हुआ एक साढ़े उनतीस फुट ऊँचा स्तम्भ है। उसपर लेख खुदा हुआ है जो पढ़नेमें नहीं आता। किलेके भीतर ही दूरके समाचार जाननेके लिये लगाये हुए बेतारके तारके छः बहुत ऊँचे खम्भे हैं, जो बहुत दूरसे दिखायी देते हैं।

भरद्वाज आश्रम—यहाँ महर्षि भरद्वाजने रहकर तपस्या की थी। श्रीरामचन्द्रजीके वनको चले जानेपर जब उनसे मिलनेके लिये भरतजी सारी सेनाके सहित जा रहे थे तो इसी आश्रममें महर्षि भरद्वाजने अपने तपके प्रभावसे उनका बड़ा अपूर्व स्वागत किया था। उस समय यह आश्रम एक वनखण्डमें था। यहींपर श्रीभरद्वाजके स्थापित किये हुए भारद्वाज शिवके दर्शन होते हैं।

भरद्वाज-आश्रमके निकट एक पक्की गुफा बनी हुई है, उसमें अगस्त्य मुनिके और सप्तर्षियोंके दर्शन होते हैं। इस गुफासे बाहर आकर एक मन्दिरमें वाल्मीकिजी, शेषजी और ब्रह्मा ना आदिके दर्शन होते हैं। पहले इस आश्रमके समीप होकर ही श्रीगंगाजी बहती थीं। परन्तु अब जबसे बाँध बना है तबसे वे बहुत दूर हो

गयी हैं। यह आश्रम अब भी बहुत रमणीक है, उस समय तो इसकी शोभा और भी अपूर्व होगी। यह स्थान गोसाइयोंके हाथमें है।

वासुकि–यह नागराज वासुकिका मन्दिर है। यह बस्ती मुहल्लेमें एक ऊँचे टीलेके ऊपर बना हुआ है। इसे नागपुरके भोसला महाराजने बनवाया था। वासुकिदेवकी मूर्ति बहुत विशाल और काले पत्थरकी है। यह दूरसे सजीव-सी जान पड़ती है। कहते हैं, एक बार किसी राजाको वासुकि नागने स्वप्नमें दर्शन देकर कहा था कि मेरी मूर्ति गंगाजीके गर्भमें है, उसे निकालकर स्थापित करो। तब राजाने मूर्तिको निकलवाकर मन्दिरकी प्रतिष्ठा करायी। यह स्थान गंगातटपर एकान्तमें होनेके कारण बहुत रमणीक जान पड़ता है। मन्दिरके सामने पक्का घाट है। इसे प्रयाग-निवासी श्रीमनोहरदासजी खत्रीने बनवाया था। यह घाट गंगाकी बाढ़ आनेके कारण एक ओरसे गिर गया है। यदि इसका जीर्णोद्धार न हुआ तो सम्भव है शीघ्र ही लुप्त हो जाय। प्रयागमें गंगाजीके तटपर केवल यही एक पक्का घाट है।

वेणीमाधव–आदिवेणीमाधवजीकी जलमयी प्रतिमा त्रिवेणी-संगममें है। उसके अतिरिक्त एक वेणीमाधव दारागंजमें हैं और दूसरे यमुनाजीके उस पार हैं। दारागंजके वेणीमाधव यहाँके प्रधान देव हैं। यहाँ मन्दिरके भीतर प्रवेश करनेपर आँगनमेंसे ही भगवान्‌के दर्शन होने लगते हैं। श्रीलक्ष्मीजीके सहित भगवान्‌की भव्य छवि बहुत ही दर्शनीय है। दूसरे वेणीमाधव जो यमुनापार हैं उनके दर्शनार्थ नौकामें जाना पड़ता है। नौका करके उस पार

पहुँचकर यात्री आनन्दसे इस मन्दिरके दर्शन करते हैं । यह मन्दिर एक टीलेके ऊपर है । कई सीढ़ियाँ चढ़नेके पश्चात् भगवान्‌के दर्शन होते हैं । परिक्रमाके लिये चारों ओर खुला हुआ मैदान है । मन्दिरके निकट ठहरनेके लिये आश्रम भी है । यह स्थान इतना रमणीक है कि यात्रियोंका चित्त उठनेको नहीं होता । भगवान्‌का दर्शन लक्ष्मीनारायणकी प्रतिमाके समान ही है । यात्री भक्तिपूर्वक पूजन करके भगवान् और वेणीजी (लक्ष्मीजी) को वस्त्राभूषणादि समर्पण करते हैं ।

सोमेश्वरनाथ—त्रिवेणीमाधवके पास गंगाजीके दाहिने तटपर सोमेश्वरनाथ महादेवका मन्दिर है । यह मन्दिर एक टीलेके ऊपर है । इसमें शिवलिंगके अतिरिक्त पंचदेवोंकी भी प्रतिमाएँ हैं । शिवरात्रिके अवसरपर यहाँ बहुत भीड़ होती है ।

सरस्वतीजी—यमुनाके इस पार किलेके नीचे एक कुण्डमें जलके रूपमें सरस्वतीजीका दर्शन होता है । शास्त्रका कथन है कि गंगा-यमुनाके संगमस्थानपर सरस्वतीजी भी उनमें मिल गयी हैं । इसीसे गंगा-यमुनाका संगम तो प्रत्यक्ष प्रतीत होता है और सरस्वतीजी अन्तःसलिला हैं अर्थात् इनका संगम भीतर-ही-भीतर हुआ है । इसीसे तीन पुनीत नदियोंका संगम होनेके कारण इसका नाम 'त्रिवेणी' हुआ है ।

हनुमान्‌जी—सरस्वतीजीके पश्चात् दारागंजकी ओर आते समय मार्गमें हनुमान्‌जीके दर्शन होते हैं । हनुमान्‌जीकी इतनी बड़ी प्रतिमा सम्भवतः अन्यत्र देखनेमें नहीं आयेगी । मूर्ति धरातलसे

नीचे पृथ्वीपर शयन किये हुए हैं। उनके चारों ओर लोहेकी छड़ोंका कटघरा बना हुआ है। बाहरसे ही लोग पुष्पादि चढ़ाते हैं। यह स्थान पृथ्वी खोदकर बनाया हुआ प्रतीत होता है, अथवा गंगाजीके रेतीसे दब गया है। इनके सिवा यमुनाके दाहिने तटपर शूल-टङ्केश्वर और वाम तटपर मनकामेश्वर महादेव हैं। यात्रियोंको इनका भी दर्शन करना चाहिये।

झूसी—गंगाजीके उस पार झूसी है। यह झूसीका किला अथवा पुरानी झूसीके नामसे प्रसिद्ध है। इसे ही ऐलतीर्थ भी कहते हैं। इसे चन्द्रवंशीय महाराज पुरूरवाने बनवाया था। पुरूरवाके पिता राजा इल महादेवजीके शापसे स्त्री हो गये थे। उस समय उनका नाम इला हुआ। उनके गर्भसे बुधद्वारा पुरूरवाका जन्म हुआ, इसलिये ये 'ऐल' कहलाये। इन्होंने झूसीको अपनी राजधानी बनाया था। उस समय इसका नाम प्रतिष्ठानपुर था। इस स्थानको जितना ही खोजके साथ देखा जाय उतनी ही नवीन बातें ज्ञात होंगी। यहाँ अनन्त कालसे बड़े-बड़े महात्मा तप करते आये हैं। आज भी यहाँ सैकड़ों वर्षकी आयुवाले साधु महात्मा तप करते बतलाये जाते हैं। संयोगवश किसी भाग्यशालीको कभी-कभी उनके दर्शन हो जाया करते हैं। नौकाद्वारा गंगाजीके उस पार जानेपर थोड़ी दूर चलकर इस स्थानके दर्शन होते हैं। यहाँ बत्तीस सीढ़ियाँ चढ़नेपर एक कुटी और सामने एक कूप मिलता है। उसके ऊपर फिर इकतीस सीढ़ियाँ पार करनेपर एक कुटी और पक्की गुफा है। इसके ऊपर सोलह सीढ़ियाँ और हैं। यहाँसे गंगाजीका मनोहर दृश्य देखने योग्य होता है। इसके नीचे उतरनेपर एक

पक्का दालान है। यहाँपर रहनेके लिये एक सुंदर गृह भी बना हुआ है। सामने एक छोटी-सी वाटिका है। जिसमें केला, अनार, नीबू, नीम और सुगन्धित पुष्पोंके वृक्ष हैं। बीचमें एक पक्का कूप है, जिसपर 'परमहंसकूप' लिखा हुआ है।

इस स्थानके पास एक गुफाका द्वार है, उसमें उन्नीस सीढ़ियाँ उतरनेपर महावीरजीका दर्शन होता है। यहाँ अँधेरा होनेके कारण दीपकके बिना दर्शन होनेमें कठिनाई पड़ती है। महावीरजीके सामने गंगाजीकी ओर एक सुरंग है। इसके दोनों ओर गुफाएँ हैं। ये गुफाएँ कितनी लम्बी हैं इसका पता नहीं। कोई भी यात्री इन गुफाओंमें प्रवेश करते नहीं देखा गया। इन गुफाओंके आगे गंगाजीकी ओर एक द्वार है, जहाँसे भागीरथीका दर्शन होता है। ऐसी गुफाओंमें संसारसे अत्यन्त विरक्त महात्मा लोग ही रह सकते हैं। उन एकान्तवासी योगियोंकी दृष्टिमें तो संसारका चक्रवर्ती राज्य भी अत्यन्त तुच्छ है। ये गुफाएँ प्राचीन कालके ऐसे ही आदर्श योगियोंका स्मरण दिलाती हैं। इस किलेमें ऐसे ही बहुत-से स्थान देखने योग्य हैं। यहाँसे बाहर निकलनेके लिये फिर ऊपर ही जाना होता है।

समुद्रकूप—किलेसे बाहर ऊँचे टीलेपर एक फाटक है। उसमें यात्रीलोग समुद्रकूपका दर्शन करनेके लिये प्रवेश करते हैं। इस स्थानके भीतर भी बगीचा लगा हुआ है। सामने एक पक्का और बड़ा कूप है। जिसके ऊपर लोहेके मोटे मोटे सीकचोंका जाल लगा हुआ है। उसका नाम समुद्रकूप है। यहाँ एक काठके तख्तेपर समुद्रकूपकी महिमामें कई श्लोक लिखे हुए हैं।

समुद्रकूपके विषयमें कहा जाता है कि ब्रह्माजीने जब यज्ञ किया था तो यज्ञसे बचे हुए सातों समुद्रके जलको इसी कूपमें छोड़ दिया था। इसके विषयमें दूसरी किंवदन्ती यह भी है कि यहाँ सम्राट् समुद्रगुप्तने दो अश्वमेध यज्ञ किये थे और उन दोनोंकी स्मृति स्थिर रहनेके लिये पत्थरके दो घोड़े स्थापित किये थे। किंतु अब वे दोनों घोड़े लखनऊके अजायबघरमें भेज दिये गये बतलाये जाते हैं। समुद्रकूपका सम्बन्ध सम्भवतः इन दोनों ही घटनाओंसे है। इस स्थानपर काम और क्रोधको जीतकर तीन दिन रहनेसे चित्त शुद्ध हो जाता है और अश्वमेध यज्ञका फल प्राप्त होता है। ऐसा इसका माहात्म्य है। इस स्थानपर एक वृद्ध महन्त रहते हैं और उनके सेवकोंके अतिरिक्त आगन्तुक साधु-महात्मा ठहरे रहते हैं। यहाँ कई स्थान अलग-अलग बने हुए हैं। उनके बीचमें किसी रानीका बनवाया हुआ एक सुन्दर और पक्का मन्दिर है। यहा समुद्रकूपके अतिरिक्त एक कूप और है, जिसका जल नित्यके व्यवहारमें लाया जाता है। इसके नीचे गंगातटपर आनेके लिये पक्की सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। बीचमें एक गुफा है जिसमें साक्षीगोपाल और हनुमान्‌जीके दर्शन होते हैं। यह गुफा बहुत प्राचीन बतलायी जाती है।

हंसतीर्थ—समुद्रकूपसे प्रायः आधे मील पश्चिममें श्रीगंगाजीके तीरपर यह प्रसिद्ध स्थान है। यह स्थान बिलकुल सहस्रदल कमलके आधारपर बनाया गया है। इसमें त्रिकुटी, अन्तःकरण, भ्रमरगुफा ... मेरुदण्ड आदि सभी स्थानोंको बड़े क्रमसे बनाया ... योगका ही चित्र है।

सम्भवतः अन्यत्र नहीं होगा । इसके पास पास ही एक कूप है जिसे हंसकूप कहते हैं । इस स्थानको भागलपुरके एक प्रतिष्ठित जमींदारने बनवाया था । ये पीछे संन्यासी हो गये थे । उनका नाम स्वामी आत्मानन्दजी था, सम्भवतः इसी कारण यह स्थान भी हंसतीर्थ कहलाता ।

सन्ध्यावट—हंसतीर्थके पीछेकी ओर एक बहुत बड़ा प्राचीन वटवृक्ष है । इसके नीचे सन्ध्योपासना करनेसे सन्ध्यालोपका दोष छूट जाता है । यह हंसतीर्थके महन्तजीके ही अधिकारमें है ।

दशाश्वमेधेश्वर महादेव—झूसीसे चलकर रेलवेका पुल पार करनेपर दारागंजमें सबसे पहले दशाश्वमेधेश्वर शंकरका मन्दिर मिलता है । यहाँ ब्रह्माजीने दश अश्वमेध यज्ञ किये थे । स्थान दर्शनीय है ।

शिवकुटी—गंगाजीके दूसरे पुलके पास कोटितीर्थ नामका प्रसिद्ध स्थान है । इसे अब 'शिवकुटी' कहते हैं । यहाँ श्रावण मासमें गंगास्नान करके महादेवजीका पूजन करनेका बड़ा माहात्म्य है । इस समय यहाँ मेला भी लगता है । यहाँ एक मन्दिरमें बहुतसे महादेव हैं । इसे महादेवजीकी कचहरी कहते हैं । यह स्थान बहुत ही रमणीक है ।

इसके सिवा प्रयागके आसपास और भी बहुतसे तीर्थस्थान हैं । उनमेंसे बहुतसे तीर्थ तो अब उच्छिन्न हो गये हैं । उनके पुनरुद्धारकी आवश्यकता है । प्रयागकी पञ्चकोशी परिक्रमा करनेपर उन सबके दर्शन हो जाते हैं । प्रयागकी परिक्रमाकी प्रणाली बहुत

दिनोंसे लुप्त हो गया थी। अब पूज्य ब्रह्मचारी प्रभुदत्तजीने बहुत छान-बीन करके उसका पुनरुद्धार किया है। तीर्थयात्रियोंको यथासम्भव तीर्थराजकी परिक्रमा अवश्य करना चाहिये। पूरी परिक्रमा बारह दिनमें बड़े आनन्दसे हो सकती है, यदि कोई जल्दी करना चाहे तो जल्दी भी कर सकता है। सामूहिक परिक्रमाके लिये सबसे उत्तम समय चैत्र कृष्णा तृतीयासे अमावास्यातक है। वैयक्तिकरूपसे अपनी सुविधाके अनुसार किसी भी समय कर सकते हैं।

अब थोड़ा-सा वर्णन प्रयागके ऐतिहासिक एवं अन्य दर्शनीय स्थानोंका किया जाता है—

किला-ऐतिहासिक स्थानोंमें किला सबसे अधिक प्रसिद्ध है। इसका संक्षिप्त परिचय ऊपर अक्षयवटके प्रसंगमें दिया जा चुका है। बहुत लोगोंका मत है कि यह महाराज अशोकका बनवाया हुआ है। कोई इसे गुप्त सम्राटोंका बनवाया हुआ बतलाते हैं। अकबरका बनवाया हुआ तो इस समय प्रसिद्ध ही है। सम्भव है, इसे महाराज अशोकने ही बनवाया हो और पीछेके सम्राटोंने केवल इसका जीर्णोद्धार ही कराया हो।

अकबरका बाँध-किलेकी रक्षाके लिये अकबरने एक बाँध बनवाया था। इसके कारण गंगाजीके प्रवाहमें बहुत परिवर्तन हो गया है। इसीके कारण भरद्वाज-आश्रम जो पहले गंगाजीके तीरपर था अब उससे बहुत दूर हो गया है। इस बाँधके कारण प्रयाग भी बहुत सुरक्षित हो गया है। अब उसे बड़ी-से-बड़ी बाढ़से भी भय

खुशरूबाग—यह बाग अकबरके पुत्र बादशाह जहाँगीरने अपने पुत्र खुशरूकी स्मृतिमें बनवाया था। यह चारों ओरसे बहुत ऊँची प्राचीरसे घिरा हुआ है। बागके भीतर सुन्दर सड़कें, फुव्वारियाँ और भाँति भाँतिके वृक्ष हैं। इसमें तीन मकबरे हैं। पहला मक़बरा सुल्तान खुशरूका है तथा उसके पश्चिमकी ओर दो मक़बरे उसकी मा और बहनके हैं। कहते हैं, इलाहाबादके क़िलेसे जो सामान बचा था उसीसे यह बाग बनवाया गया था।

हाईकोर्ट—प्रयागके राजकीय स्थानोंमें हाइकोर्ट सबसे प्रधान है, यह कानपुररोडपर है और सफेद पत्थरका बहुत ही सुन्दर बना हुआ है। इस प्रान्तके सारे मुकदमोंकी अपील यहीं होती है। जज-लोग ऊपरके कमरोंमें बैठते हैं तथा नीचेके कमरोंमें दफ्तर है। यह नया ही बनाया गया है। पुराने हाईकोर्टके पास शिक्षाविभाग-के सबसे बड़े अधिकारी डाइरेक्टर आफ पब्लिक इन्स्ट्रक्शनका दफ्तर है।

पार्क—प्रयागमें कई सुन्दर सुन्दर पार्क हैं। उनमें अल्फ्रेड पार्क, मिण्टोपार्क, पुरुषोत्तमपार्क, मातीपार्क और मुहम्मदअलीपार्क इत्यादि प्रसिद्ध हैं। इन पार्कोंसे नगरका जलवायु बहुत शुद्ध रहता है और जनताको प्रातः और सायंकालमें शुद्धवायुसेवन एवं चित्त बहलानेकी सुविधा रहती है। यहाँकी सार्वजनिक सभाएँ प्राय पुरुषोत्तमपार्कमें ही होती हैं।

आनन्दभवन—यह बहुत बड़ा और सुन्दर भवन स्वर्गीय प० मोतीलाल नेहरूने अपने रहनेके लिये बनवाया था। इसके पास

ही उनका एक पुराना भवन है। उसे अपनी आयुके उत्तरकालमें उन्होंने राष्ट्रीय महासभाको दान कर दिया था। तबसे उसे 'स्वराज्य-भवन' कहते हैं। ये दोनों ही भवन दर्शनीय हैं। भरद्वाज-आश्रमका दर्शन करते समय इन्हें भी देखा जा सकता है।

प्रयागविश्वविद्यालय—प्रयागका विश्वविद्यालय भारतवर्षकी एक प्रसिद्ध संस्था है। सन् १९२० से पूर्व इसका विस्तार समस्त युक्तप्रान्त और राजपूतानामें भी था। परन्तु तबसे इसका संकोच करके केवल इलाहाबाद नगरतक ही कर दिया है। इसमें कई विषयोंकी ऊँची-से-ऊँची शिक्षा दी जाती है। इसकी शिक्षापद्धति प्रान्तभरमें प्रसिद्ध है। इसमें प्रायः २००० छात्र विविध प्रकारकी उच्च शिक्षा प्राप्त करते हैं। इसका सिनेट हाल बहुत सुन्दर है तथा इससे सम्बन्धित एक बहुत बड़ा पुस्तकालय भी है।

म्योरकालिज—पहले प्रयागका सबसे बड़ा कालिज यही था। किन्तु अब इसमें विश्वविद्यालयका विज्ञानविभाग है। इसकी इमारत भी देखनेयोग्य है।

हिन्दूबोर्डिङ्गहाउस—यह म्योरकालिजके पास सिटीरोडपर बायें हाथको स्थित है। यह हिंदू विद्यार्थियोंका बहुत बड़ा छात्रावास है। इसके बनवानेमें महामना पं० मदनमोहन मालवीय और पं० सुन्दरलालजीने विशेष प्रयत्न किया था। इसके मध्यमें 'बलरामपुर हाउ' है। यह बहुत बड़ा है, बोर्डिङ्गहाउसकी सभाएँ इसीमें हुआ करती हैं। इमारत दर्शनीय है।

कृषिविद्यालय—यह यमुनाजीके दक्षिण तटपर पुलसे थोड़ा दूर है। इसकी स्थापना एक अमेरिकन मिशनने की है। कालिजके अधिकारमें प्राय ६०० एकड़ भूमि है, जिसका कुछ भाग किसान जानते हैं और कुछ विद्यालयके काम आती है। इसमें शिक्षा प्राप्त करनेके लिये भारतवर्षके सभी भागोंसे विद्यार्थी आते हैं। इस विद्यालयमें दो विभाग हैं—कृषि (farming) और गोपालन (dairy-farming)। अब इस विद्यालयमें प्रयागविश्वविद्यालयकी सबसे ऊँची परीक्षाके लिये शिक्षा दी जाती है।

हिन्दीविद्यापीठ—कृषिकालिजके पश्चिमकी ओर यमुनाके दाहिने तटपर महेवा नामक एक गाँव है। यहाँपर हिन्दी-साहित्य सम्मेलनका हिन्दीविद्यापीठ है। इसमें सम्मेलनपरीक्षाओंके सब विषय पढ़ाये जाते हैं। उनका माध्यम हिन्दी ही है। यहाँ विद्यार्थियोंके लिये एक छात्रावास भी है। शिक्षाके लिये विद्यार्थियोंसे कोई फीस नहीं ली जाती।

हिन्दीसाहित्यसम्मेलन—इसका कार्यालय चौकसे थोड़ी दूर क्रास्थवेट रोडपर है। यह भारतवर्षमें हिन्दीको राष्ट्रभाषाके आसनपर बिठानेका प्रयत्न करनेवाली एकमात्र संस्था है। इसका प्रतिवर्ष बहुत बड़ा सम्मेलन होता है। जिसमें हिन्दीके उच्च कोटिके विद्वान् सभापतिका आसन ग्रहण करते हैं। इसकी ओरसे प्रतिवर्ष उत्तमा, मध्यमा और प्रथमा तीन परीक्षाएँ होती हैं। द्रविड़भाषा-भाषी देशोंमें हिन्दीका प्रचारकार्य किया जाता है तथा प्रतिवर्ष हिन्दी

साहित्यके किसी विशिष्ट विषयके सर्वोत्तमग्रन्थलेखकको उसके प्रकाशित ग्रन्थपर १२००) का मगलाप्रसाद पारितोषिक दिया जाता है।

हिन्दुस्तानी एकेडेमी—इस सस्थाका प्रधान कार्यालय प्रयाग स्टेशनके पास है। इसमें हिन्दी या उर्दूकी साहित्यसम्बन्धिनी पुस्तक प्रकाशित की जाती है। उच्च कोटिका साहित्य प्रकाशित करना ही इसका उद्देश्य है। इसे सरकारसे भी सहायता मिलती है।

नैनी—यमुनाके उस पार प्रयागसे साढ़े तीन मीलपर नैनी स्टेशन है। वहा पहले एक छोटी सी बस्ती थी परन्तु अब कल-कारखानोंके कारण यहाकी जनसख्या बढ़ती जा रही है। यहाँ एक चीनीका कारखाना है और एक शीशेकी वस्तुओंका। प्रयाग-का 'सेन्ट्रल जेल' भी यहीं है। इसके सिवा पादरियोंकी ओरसे दो आश्रम हैं—एक कोढ़ियोंके लिये और दूसरा अन्धोंके लिये। यहाँ उनकी यथाशक्ति चिकित्सा की जाती है। उनमें कोढ़ियोंकी सन्तानों-के पालन-पोषण और शिक्षाका भी सराहनीय प्रबन्ध है। नैनीमें एक छोटा-सा बाजार है। उसमें एक पक्की धर्मशाला और डाकघर भी है।

कुम्भपर्व—भारतवर्षमें श्रद्धालु और धार्मिक मनुष्योंकी अब भी कमी नहीं है। जिन तर्कप्रधान पुरुषोंको तीर्थयात्रामें विश्वास नहीं है वे भी यदि कुम्भपर्वके अवसरपर प्रयाग पधारें तो उन्हें एक तो यह लाभ होगा कि देश देशान्तरके नर-नारी और साधु सन्यासियों-

के दर्शन होंगे और दूसरे यह भी ज्ञान होगा कि अभी गंगा-यमुनादि तीर्थोंकी पवित्रतामें श्रद्धा रखनेवाले कितने महानुभाव इस पवित्र भूमिमें हैं। त्रिवेणीस्नानके लिये लाखोंकी संख्यामें आयी हुई आर्यजनताको देखकर उन्हें भगवान्में विश्वास होना बहुत सम्भव है। अतएव कुम्भपर्वकी यात्रा श्रद्धालु और अश्रद्धालु दोनों ही प्रकारके पुरुषोंके लिये लाभदायक है। लेखकने गंगातटपर कुटी बनवाकर वहाँ सपरिवार एक मास रहकर कल्पवास किया था, इसलिये उस महापर्वकी पवित्र स्मृति अब भी उसके हृदयमें सात्त्विक भावोंका सञ्चार कर देती है।

कुम्भपर्वकी कथा—भारतवर्षमें प्रयाग, हरिद्वार, नासिक और उज्जैन चार स्थानोंपर भिन्न भिन्न समय बारह-बारह वर्षके पश्चात् कुम्भके मेले होते हैं। इसकी कथा इस प्रकार है—एक बार देवासुर-संग्राममें देवताओंके पक्षको निर्बल देखकर देवगुरु बृहस्पतिजी संग्रामस्थलसे अमृतका कलश लेकर भागे। असुरोंने उन्हें देख लिया और अमृत छीननेके लिये उनका पीछा किया। भागीरथी, त्रिवेणी, क्षिप्रा और गोदावरीके तटपर उनसे छीना-झपटी हुई। इससे इन स्थानोंपर कलशसे छलककर कुछ अमृतकी बूँदें गिर गयीं। अतः इन स्थानोंपर रहने और स्नान करनेसे अमृतत्वकी प्राप्ति होती है। इन्हीं स्थानोंपर कुम्भके मेलोंकी योजना हुई। जब कुम्भराशिमें बृहस्पति होते हैं तब हरिद्वारमें कुम्भ होता है। जब वृषके होते हैं तब प्रयागमें होता है और जब सिंहके

बृहस्पति होते हैं तब नासिक और उज्जैनका कुम्भ होता है। बृहस्पतिजी एक राशिको छोड़कर फिर उसी राशिपर बारह वर्षमें आते हैं। इनके मध्यमें हरिद्वार और प्रयागमें छ-छ वर्ष पश्चात् अर्धकुम्भीके भी बड़े-बड़े मेले होते हैं।

माहात्म्य—प्रधान-प्रधान पर्वोंके समय प्रयागमें विष्णु, शिव, ब्रह्मा आदि देवता, समस्त मुनिगण तथा गोदावरी, कावेरीआदि नदियाँ और सरोवरादि आकर निवास करते हैं। स्कन्दपुराणमें लिखा है कि गंगा, यमुना और सरस्वतीके संगममें स्नान करनेसे प्राणी पापमुक्त होकर ब्रह्मलोकको प्राप्त होता है। प्रयागमें जो द्रव्यदान किया जाता है वह अनेक शुभफल देनेवाला होता है। जो पुरुष अपने पितरों अथवा देवताओंके लिये सोना, मोती अथवा अन्य किसी प्रकारका दान करता है, वह कई जन्मतक दरिद्रताका दुःख नहीं भोगता। प्रयागमें आकर यात्रियोंको किसीका दान नहीं लेना चाहिये। प्रयागमें गोदानका बहुत पुण्य होता है। जो सोनेसे मढ़ी हुई सींगोंवाली गायें दान करता है वह हजारों वर्षतक स्वर्गमें रहता है तथा स्वर्गसे गिरनेपर भी उसे राज्य प्राप्त होता है। सत्पात्रको दी हुई गाय भयानक पापोंके समुद्रसे तार देती है। इससे सम्पूर्ण मनोरथ सिद्ध हो जाते हैं। तीर्थदानकी महिमाका अधिक वर्णन कहाँतक किया जाय, जिनका महान् पुण्य उदय होता है उन्हींकी प्रवृत्ति यहाँ रहकर कल्पवासादि व्रत करनेकी होती है।

चित्रकूट

तीर्थराज प्रयागके पश्चात् यात्रियोंको चित्रकूटका दर्शन करना चाहिये। प्रयागसे चित्रकूट ९४ मील है। यह G I P रेल्वे-का स्टेशन है। मार्गमें मानिकपुर स्टेशनपर गाडी बदलनी पडती है। यात्रीलोग चित्रकूट और करवी दोनों ही स्टेशनोंपर उतरते हैं। अधिकांश यात्री करवी ही उतर पडते हैं। यहां एक सराय है और दूसरा गणेशबाग है। इन दोनों स्थानोंमें यात्री विश्राम कर सकते हैं। यहाँसे चित्रकूट जानेके लिये बैलगाड़ी और घोड मिलते हैं। कुछ दिनोंसे लॉरी भी जाने-आने लगी है, परन्तु बहुत से यात्री तो पैदल ही चले जाते हैं।

चित्रकूटमें दो बड़ी धर्मशालाएँ हैं। उनमें सब प्रकारकी सुविधा है। बहुत से यात्री तीर्थगुरुओंके मकान और मन्दिरोंमें भी ठहरते हैं। ठहरनेके लिये यहाँ स्थानकी कमी नहीं है।

चित्रकूट और करवी दोनों ही स्टेशनोंसे चित्रकूट तीर्थ, जिसको सीतापुर भी कहते हैं, पाँच मीलकी दूरीपर है। वृन्दावनकी भाँति यहां भी बन्दरोंका अधिक जोर है। चित्रकूट मन्दाकिनीके किनारे बसा हुआ है। नदीके इस पार ब्रिटिश गवर्नमेण्टका प्रबन्ध है और उस पार नयागांवके जागीरदारकी रियासत है। मन्दाकिनी के दोनों ही तटपर देवमन्दिर हैं। यहां पहुँचकर यात्रियोंको मन्दाकिनीमें स्नान करके तीर्थविधि करनी चाहिये। इसके लिये

रामघाट ही प्रधान स्थान है, क्योंकि महाराज दशरथके स्वर्गवासी होनेपर भगवान्ने इसी स्थानपर उनको इंगुदाके फलका पिण्डदान किया था तथा यहींपर गोसाईं तुलसीदासजीको भगवान् राम और लक्ष्मणजीके दर्शन हुए थे। यहाँपर एक मन्दिरमें श्रीराम, सीता और लक्ष्मणजीकी झाँकी है। चित्रकूटक्षेत्रके अन्तर्गत बहुत-से तीर्थस्थान हैं। उनमेंसे मुख्य-मुख्यका वर्णन किया जाता है।

हनूमानधारा—यहाँ एक पहाड़के उपर महावीरजीकी बड़ी विशाल मूर्ति है। उसकी भुजाके ऊपर न मालूम कितने समयसे एक झरनेकी धारा गिरता है। यात्रालोग पैदल अथवा डाली करके इस पहाड़ीपर आते हैं। चढ़नेके लिये सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। यहाँ और देवस्थान भी हैं। यह स्थान पहाड़पर होनेके कारण बड़ा रमणीक है। महावीरजीके भोगके लिये यात्री चित्रकूटसे मिष्टान्न ले जाते हैं।

कामतानाथ—वास्तवमें प्राचीन चित्रकूट यही है। इसे आजकल कामतानाथ या कामदगिरि कहते हैं। यहाँका मुख्य तीर्थ यही है। इस पर्वतकी प्रदक्षिणाका बड़ा माहात्म्य है। यह सारा-का-सारा वृक्षोंसे ढका हुआ है, इसके चारों ओर प्रायः तीन मीलकी परिक्रमा है, जिसको सन् १७२५ ई० में राजा छत्रसालकी रानी चाँदकुँअरिने पक्का बनवा दिया था। इस परिक्रमामें बहुत से देवमन्दिर हैं। अयोध्याकी भाँति यहाँ भी बन्दर अधिक हैं। यात्रीलोग उनके लिये चने ले आते हैं और उन्हें बड़े भक्ति-भावसे खिलाते हैं।

कामतानाथके विषयमें एक घटना प्रसिद्ध है। कहते हैं, अभी अधिक समय नहीं हुआ एक ग्वालेका बालक नित्यप्रति अपनी गाय चरानेके लिये कामदगिरिपर जाया करता था। उसकी

माता उससे कहा करती थी कि वहाँ सीताजी रहती हैं। उनका पत्ताका दोना बनाकर दूध पिला दिया कर। लड़का माताके वचनोंमें विश्वास करके सीताजीको खोजता और निराश होकर घर आनेपर अपनी मातासे कहता कि सीताजीने दूध नहीं पिया। माता उस बालककी भोली बुद्धिपर हँसने लगी और उसको समझाया कि सब देवमंदिरोंमें नित्य नाना प्रकारके भोग लगते हैं। क्या ठाकुरजी कभी आकर भी खाते हैं, अरे वे तो भावके भूखे हैं। तू भी इसी प्रकार दूधका भोग लगाकर लौट आया कर। माताके ये वचन सुनकर बालकने फिर कहा—मैया, माताजी तो उस पहाड़ीपर हैं ही नहीं, भोग किसको लगाऊ? किन्तु माताने उसे फिर विश्वास दिलाया कि अवश्य रहती हैं। तब तो बालकने भोजन त्याग दिया और यह प्रतिज्ञा की कि 'सीता माता भूखी हैं, वे जबतक मेरा अर्पण किया हुआ दूध नहीं पियेंगी तबतक मैं भोजन नहीं करूँगा।' ऐसी प्रतिज्ञा करके बालक सीता माताकी खोजमें फिर भूखा-प्यासा गौएँ लेकर कामदगिरिपर गया। उसने पत्तोंका एक दोना बनाया और उसमें अपनी गौका दूध दुहकर एक सघन वृक्षकी छायामें रखकर सीताजीको पुकार-पुकारकर ढूँढ़ने लगा। उसने वृक्षोंकी लताओं और पर्वतकी गुफाओंमें घूम घूमकर सीताजीको ढूँढ़ा। उसको यह भी ध्यान नहीं रहा कि इन खोहोंमें हिंसक जीव रहते हैं। अन्तमें वह दो दिनका भूखा-प्यासा बालक थककर एक वृक्षके नीचे सो गया। उस बालककी दृढ़ प्रतिज्ञा और भक्ति देखकर जगज्जननी श्रीजानकीजीका आसन हिला और उनको प्रेमातुर होकर प्रकट होना पड़ा। भगवतीने

उस बालकके समर्पण किये हुए दूधको उठा लिया और सोते बालकको जगाकर कहा, 'बस! मैं सीतादेवी हूँ, तेरे लिये यह नाना प्रकारके मिष्टान्नसे भरा हुआ थाल है, तू दो दिनका भूखा है कुछ भोजन कर ले।' बालकने फिर वही हठ किया और कहा कि तुम भी तो कलसे भूखी हो, पहले मेरा यह दूध पी लो पीछे मैं तुम्हारा प्रसाद पाऊँगा। भगवतीने बालकको अपनी गोदमें ले लिया तथा उस दूधको पीकर बालकको भोजन कराया और कहा कि आजसे इस पहाड़ीपर गो चरानेके लिये मत आना। ऐसा कहकर कुछ देर बालकको प्यारकर वे वहां अन्तर्धान हो गयीं। बालक हँसता हुआ अपने घर आया और अपनी मातासे सारा वृत्तान्त कह दिया। माताने आश्चर्यमय वृत्तान्त और लोगोंको सुनाया। उस दिनसे कामदनाथपर कोई भी पुरुष गौएँ नहीं चराता और गोवर्धन पर्वतकी भांति उसपर कोई जूते पहनकर भी नहीं जाता। उस बालकने भी फिर गृहस्थाश्रममें रहना स्वीकार नहीं किया। वह तपस्या करनेके लिये किसी अज्ञात स्थानको चला गया।

जानकीकुण्ड—सीतापुर बस्तीसे प्राय दो मील मन्दाकिनीके किनारे-किनारे जानेपर यह स्थान आता है। यहाँका प्राकृतिक दृश्य बहुत सुन्दर है। नदीके दोनों तटोंपर वन है, बीचमें सफेद पत्थरपर युगल सरकारके चरणचिह्न बने हुए हैं, वे आग्नेय हैं। रामभक्त ऐसा मानते हैं कि जब इनपर युगल सरकार चलते थे तब ये मोमके समान कोमल हो जाते थे। यात्री उनका पूजन करते हैं। यह वही स्थान है जहाँ त्रेतायुगमें भगवान्‌ने कई वर्षतक निवास करके नाना प्रकारकी अलौकिक लीलाएँ की थीं।

अनसूया-आश्रम—महर्षि अत्रिकी धर्मपत्नी श्रीअनसूयाजीने इसी स्थानपर भगवती सीताजीको पातिव्रत धर्मका पवित्र उपदेश दिया था। यहाँ मन्दाकिनीके किनारे पहाड़के नीचे एक मन्दिरमें देवीजीकी और दूसरेमें महर्षि अत्रिकी मूर्ति है। यात्रियोंके विश्राम करनेके लिये एक छोटा सी धर्मशाला है। यहाँ भी बन्दर अधिक हैं, यात्रीलोग चने लाकर इन्हें खिलाया करते हैं।

लक्ष्मणपहाड़—चित्रकूटमें जब रात्रिके समय भगवान् रामचन्द्र और सीताजी शयन करते थे तब उनकी रक्षाके लिये लक्ष्मणजी इसी पहाड़ीपर खड़े होकर जागते थे। पाठकोंको मालूम होगा लक्ष्मणजीने बारह वर्षतक निद्रा नहीं ली थी और न अन्न ही ग्रहण किया था तथा ब्रह्मचर्यसे रहकर वनवासकी अवधिको पूरा किया था। कामदनाथ पर्वतके निकट एक पहाड़ीपर अनुमान सवा दो सौ सीढ़ी चढ़नेपर एक मन्दिरमें श्रीलक्ष्मणजीकी मूर्तिके दर्शन मिलते हैं।

कोटितीर्थ—यहाँ समय समयपर ऋषियोंने अनेकों यज्ञ किये हैं। जब उन ऋषियोंकी संख्या एक करोड़ हो गयी तब इस स्थानका नाम कोटितीर्थ हो गया। यहाँ एक कुण्ड है जिसमें यात्री लोग भक्तिपूर्वक स्नान एवं तीर्थविधि करते हैं।

सिद्धनाथकी कुटी—स्फटिकशिलाके निकट पहाड़ीपर प्राय डेढ़ सौ सीढ़ियाँ चढ़नेपर सिद्धनाथकी कुटी है। चित्रकूटमें ये बड़े विख्यात योगी हो गये हैं। अब भी उनकी स्मृतिमें उनके शिष्य भण्डारा किया करते हैं। इन्होंने केवल उस पहाड़की मीठी पत्तियाँ खाकर ही तपस्या की थी।

गुप्तगोदावरी—यहाँ एक पहाड़की गुफाके भीतरसे जल आता है। इस गुफामें अँधेरा होनेके कारण यात्री भीतर कम जाते हैं। भीतर जानेके समय साथमें लालटेन या टार्चकी आवश्यकता पड़ती है। गुफासे निकला हुआ जल बाहर बने हुए दो कुण्डोंमें आता है। यात्रीलोग यहीं स्नान करते हैं। इन कुण्डोंसे निकला हुआ जल कुछ दूर बहकर पृथ्वीमें गुप्त हो जाता है। इसी कारण इस पुनीत नदीका नाम गुप्तगोदावरी हुआ है। पण्डालोग बतलाते हैं कि यह धारा गोदावरीजीसे आयी है।

भरतकूप—यह भरतकूप स्टेशनसे एक मील दक्षिण और कामतानाथसे छ मील पश्चिमोत्तर एक बहुत बड़ा कूप है। जिस समय सम्पूर्ण राजवंश और सेनादिके सहित भरतजी वनहीमें भगवान् रामका राज्याभिषेक करनेकी इच्छासे आये थे उस समय वे अपने साथ समस्त तीर्थोंका जल भी लाये थे। किन्तु रघुनाथजीने अभिषिक्त होना स्वीकार नहीं किया। इसलिये वह जल इस कुएँमें डाल दिया गया। इससे थोड़ी ही दूरीपर भरतजीका मन्दिर भी है।

रामशय्या—यह स्थान कामतानाथसे प्रायः दो मील है। यहाँ एक वृहत् शिलापर दो ऐसे चिह्न बने हैं जैसे किसी कोमल गद्देपर दो व्यक्तियोंके सोनेसे बन जाते हैं। इनके बीचमें धनुषका चिह्न है। कहते हैं, इनमें एक चिह्न श्रीरामचन्द्रजीका और दूसरा श्रीजानकीजीका है।

इनके सिवा चित्रकूटकी परिक्रमामें और भी बहुत-से तीर्थस्थान आते हैं, जिनमें रामप्रयाग, सीतारसोई, मत्तगजेन्द्र और कैलाशपर्वत प्रसिद्ध हैं। कामतानाथकी परिक्रमामें मुखारविन्द और चरणचिह्न ये दो तीर्थ अधिक प्रसिद्ध हैं।

चित्रकूटमें रामनवमीके दिन और कार्तिक मासमें मेला लगता है। उस समय यहाँ हजारों यात्रियोंकी भीड़ हो जाती है। मन्दाकिनीके किनारे और पहाड़ियोंपर जहाँ-तहाँ यात्रियोंके झुण्ड दिखायी देते हैं। यहाँ आश्विन मासकी पूर्णिमाको एक महात्मा श्वासके रोगियोंको एक जड़ी खीरके साथ खिलाते हैं, जिससे यह रोग सदाके लिये छूट जाता है। इस अवसरपर यहाँ हजारों मनुष्योंकी भीड़ हो जाती है।

इस स्थानका जलवायु उत्तम है। यहाँके अधिकांश निवासी मन्दाकिनीका ही जल पीते हैं। इस जगह एक संस्कृत पाठशाला, एक सरकारी औषधालय और कुछ अन्नक्षेत्र भी हैं। फलादिको छोड़कर भोजनका शेष सब सामान मिल जाता है। यहाँ डाकखाना भी है। चित्रकूट पर्वतकी कन्दराओंमें अब भी कितने ही तपस्वी महात्मा छिपे हुए हैं। जिनका भाग्योदय होता है उन्हें कभी कभी उनमेंसे किसीके दर्शन हो जाते हैं।

माहात्म्य–महाभारतमें लिखा है कि कोटितीर्थ और मन्दाकिनी गङ्गाका स्नान तथा चित्रकूटकी यात्रा करनेवाले यात्रीको अश्वमेध यज्ञका फल प्राप्त होता है। जो यात्री निराहार रहकर मन्दाकिनी और गुप्तगोदावरीमें स्नानादि तीर्थविधि करते हैं, उनके ज्ञान और श्रीकी वृद्धि होती है। त्रेतायुगमें अनसूयाजीके तपोबलसे ही मन्दाकिनी गङ्गाका आविर्भाव हुआ था। शिवपुराणमें लिखा है कि चित्रकूटके दर्शनमात्रसे पापात्मा भी निष्पाप हो जाते हैं।

अमरकण्टक

चित्रकूटकी पावन यात्रा, कामदगिरिकी परिक्रमा तथा गुप्त-गोदावरी और मन्दाकिनी गङ्गाका स्नानकर यात्री अमरकण्टक पर्वतपर नर्मदाजीके उद्गमस्थानका दर्शन करते हैं। यहाँ जानेके लिये चित्रकूट अथवा कटनी स्टेशनसे मानिकपुर जङ्क्शन आना होता है और मानिकपुरसे कटनी उतरकर बिलासपुर जानेवाली गाड़ीसे पिण्डरारोड स्टेशनपर उतरना होता है। कटनीतक जी० आई० पी० रेलवे है और कटनीसे पिण्डरारोडतक बी० एन० आर० है। कुल मिलाकर चित्रकूटसे पिण्डरारोड २७५ मील है।

पिण्डरारोडमें यात्रियोंकी सुविधाके लिये स्थान है तथा तीर्थ-पुजारी भी स्थानका प्रबन्ध करा देते हैं। यहाँ कोई धर्मशाला नहीं है। यहाँसे अमरकण्टकतक अधिकांश यात्री पैदल ही जाते हैं। जो यात्री पैदल नहीं चल सकते उनको किरायेपर हाथी अथवा घोड़े मिल जाते हैं। पिण्डरारोडसे आमानालातक रास्ता ठीक है। यहाँसे आगे बद्रीनारायणके पहाड़के समान चढ़ाई है। आमानालासे नर्मदा-जी अनुमान पाँच मील रह जाती हैं। इस बीचमें जङ्गल पड़ता है। नर्मदाजीका उद्गमस्थान रीवाँराज्यके अन्तर्गत है। रीवाँनरेश महाराज वेंकटरमणने सं० १९७२में नर्मदाजीके कुण्ड और तीर्थ-स्थानका जीर्णोद्धार करा दिया है। यह स्थान बड़ा ही रमणीक और जल-वायुकी दृष्टिसे बड़ा स्वास्थ्यप्रद है। यहाँ क्षयरोगके रोगी बिना ही [illegible] हो जाते हैं।

अमरकण्टक पर्वतके ऊपर नर्मदाजीका पक्का कुण्ड बना हुआ है। उसके घाटपर यात्रीगण स्नान करते हैं। इसी कुण्डका जल बाहर बहता हुआ कुछ मील आगे पर्वतसे नीचे गिरता है। इसका नाम कपिलधारा है। यात्रीगण कपिलधारामें स्नान करते हैं। इसमें स्नान करनेका शास्त्रमें बड़ा माहात्म्य है।

यहाँपर रीवाँराज्यकी ओरसे यात्रियोंके लिये कुछ धर्मशालाएँ बनी हुई हैं तथा कुछ गृह तीर्थपुजारियोंके भी हैं। यात्री अपनी सुविधाके अनुसार उनमें ठहर सकते हैं। इस स्थानके प्राचीन मन्दिर महाभारतकालतकके पुराने हैं—ऐसा यहाँके तीर्थपुजारी विश्वास दिलाते हैं, किन्तु उसपर कोई शिलालेख नहीं है।

अमरकण्टकका दूसरा नाम रत्नपुर भी है। महाकवि कालिदासने अपने मेघदूत नामक महाकाव्यकी रचना इसी स्थानपर की थी। अमरकण्टक नर्मदा, जुहिला और सोन इन तीन पुनीत नदियोंका आदिस्थान है। यात्रीलोग जिस प्रकार भगीरथशिला-पर पहुँचकर गङ्गोत्तरीका माहात्म्य अनुभव करते हैं उसी प्रकार अमरकण्टकमें इन तीनोंकी मूर्तियोंके दर्शन करनेसे उन्हें इस स्थान-की महत्ताका पता लगता है। यहाँ भागवत आदि पुराणोंकी कथा हुआ करती है। इस स्थानपर एक गायत्रीकुण्ड है। गायत्रीमन्त्रका पुरश्चरण करनेवाले बहुधा इसी स्थानपर पुरश्चरणकी समाप्तिपर हवनादि करते हैं।

इस स्थानपर लङ्कापति रावणने भी बहुत वर्षोंतक निवास किया है। कहते हैं कि उसीके कारण ही इस पर्वतका नाम अमर-कण्टक पड़ा है। जिस प्रकार हरिद्वारमें गङ्गातटपर ब्राह्मी मिलती है

उसी प्रकार यहाँ नर्मदाके किनारे भी मिलती है। यहा एक गुल्वकावगका वृक्ष होता है। यहाँके पण्डे बतलाते हैं कि यह वृक्ष भारतवर्षमें और कहीं नहीं होता।

अमरनाथ महादेवका मन्दिर महाराज युधिष्ठिरका बनवाया हुआ बतलाते हैं। इस मन्दिरका समय-समयपर जीर्णोद्धार होता रहा है। यह भी किंवदन्ती है कि अमरनाथ महादेवके नामसे ही इस पर्वतका नाम अमरकण्टक हुआ है। यहाँके राग-भोगका प्रबन्ध रीवा दरबारकी ओरसे रहता है। यह पर्वत अनेक प्रकारके वृक्ष-लताओं और अनेकों जलके झरनोंसे परिपूर्ण है। यात्रीलोग यहाँसे बहुत-सी ब्राह्मी अपने-अपने घरोंको ले जाते हैं। यह अनेकों रोगोंका नाश करनेवाली और बुद्धिको बढ़ानेवाली होती है।

यहाँपर भोजनकी सब सामग्री नहीं मिलती और न यहाँ कोई पाठशाला या डाकखाना आदि ही है। यात्रीलोग अपनी सुविधाके लिये भोजनका सारा सामान पिण्डरारोडसे ले जाते हैं। यहाँ तो केवल मोटे चावलोंके सिवा और कोई चीज नहीं मिलती।

माहात्म्य—नर्मदाकी उत्पत्ति भगवान् शंकरसे है। अतएव वह उन्हें गंगाजीसे भी अधिक प्रिय है। अग्निपुराणमें लिखा है कि भागीरथीमें स्नान करनेसे जिस फलकी प्राप्ति होती है वह नर्मदाजीके दर्शनसे ही हो जाती है। सरस्वतीका जल पाँच दिनमें, यमुनाका सात दिनमें और भागीरथीका तत्काल ही पवित्र करता है, किन्तु नर्मदाजीके तो दर्शनमात्रसे ही जीव पवित्र हो जाता है। नर्मदाजीके जलसे जो पितरोंका तर्पण किया जाता है वह उन्हें अनन्त कालके लिये तृप्त कर देता है।

विन्ध्याचल

अमरकण्टकके पश्चात् यात्रियोंको विन्ध्याचलमें श्रीविन्ध्यवासिनी देवीके दर्शन करने चाहिये। विन्ध्याचल जानेके लिये यात्रियोंको पिण्डरारोडसे कटनी होकर इलाहाबाद आना होता है और इलाहाबादसे ई० आई० आर० की मुख्य लाइनद्वारा विन्ध्याचल स्टेशनपर उतरना होता है। विन्ध्याचल पिण्डरारोडसे २४५ मील है।

यह मुगलसराय और इलाहाबादके बीचमें है। यहाँ यात्रियोंके ठहरनेके लिये स्टेशनके निकट तीन धर्मशालाएँ हैं। पहली शिवनारायण बल्देवदासकी, दूसरी सारस्वत खत्री धर्मशाला और

तीसरी वरहलगजके किसी सज्जनकी बनवायी हुई है । यात्री अपनी सुविधा देखकर इनमेंसे किसी धर्मशालामें अथवा विन्ध्याचल बस्तीमें ठहर सकते हैं ।

विन्ध्याचल भगवतीका पीठ माना जाता है । आश्विन और चैत्रमासके नवरात्रके समय यहाँ देश-देशान्तरके नर-नारी दर्शनार्थ आते हैं । उस अवसरपर यहाँके तीर्थगुरु अपने-अपने घरोंमें स्थान देकर यात्रियोंको ठहरा लेते हैं ।

यहाँ पहुँचकर यात्रियोंको श्रीगंगाजीमें स्नान करके भगवतीका दर्शन करना चाहिये । भगवतीका मन्दिर बस्तीमें है । सिंहपर खड़ी हुई बड़ी मनोहर श्यामवर्ण मूर्ति है । इस स्थानपर माताकी छटा देखते ही बनती है । भगवतीका दर्शन करके यात्रियोंको काली खोह त्रिकोणकी यात्रा करनी चाहिये । यहाँ अष्टभुजा भगवतीके दर्शन होते हैं । काली खोहमें शुम्भ निशुम्भमर्दिनीका स्थान है । यहाँपर पुराण-प्रसिद्ध शुम्भ और निशुम्भका युद्ध हुआ था । यह भी एक सिद्ध पीठ है । इस जगह आज भी महान् सिद्ध शाक्त रहते हैं । उन महापुरुषोंके सबको दर्शन नहीं होते । यहाँ तीर्थपुजारियोंके अतिरिक्त कुछ प्रतिष्ठित महानुभावोंके द्वारा भी यह बात सुनी गयी है कि थोड़ा समय हुआ, एक बार जब भगवतीके मन्दिरका द्वार बन्द हो चुका था कुछ शाक्त आये और भगवतीकी चौखटपर पुष्पमाला रखकर अन्तर्धान हो गये । प्रातःकाल जब मन्दिरका दरवाजा खोला गया तो वे पुष्प भगवतीके चरणों और पुष्पमाला गलेमें पड़ी हुई मिली । यहाँपर मार्कण्डेयपुराण और सप्तशतीका पाठ प्रायः सदा ही होता

विन्ध्याचल

अमरकण्टकके पश्चात् यात्रियोंको विन्ध्याचलमें श्रीविन्ध्यवासिनी देवीके दर्शन करने चाहिये। विन्ध्याचल जानेके लिये यात्रियोंको पिण्डरारोडसे कटनी होकर इलाहाबाद आना होता है और इलाहाबादसे ई० आई० आर० की मुख्य लाइनद्वारा विन्ध्याचल स्टेशनपर उतरना होता है। विन्ध्याचल पिण्डरारोडसे ३४५ मील है।

यह मुगलसराय और इलाहाबादके बीचमें है। यहाँ यात्रियोंके ठहरनेके लिये स्टेशनके निकट तीन धर्मशालाएँ हैं। पहली शिवनारायण बलदेवदासजी, दूसरी सारस्वत क्षत्री धर्मशाला और

तीसरी बरहलगजके किसी सज्जनकी बनवायी हुई है । यात्री अपनी सुविधा देखकर इनमेंसे किसी धर्मशालामें अथवा विन्ध्याचल बस्तीमें ठहर सकते हैं ।

विन्ध्याचल भगवतीका पीठ माना जाता है । आश्विन और चैत्रमासके नवरात्रके समय यहाँ देश देशान्तरके नर-नारी दर्शनार्थ आते हैं । उस अवसरपर यहाके तीर्थगुरु अपने-अपने घरोंमें स्थान देकर यात्रियोंको ठहरा लेते हैं ।

यहाँ पहुँचकर यात्रियोंको श्रीगंगाजीमें स्नान करके भगवतीका दर्शन करना चाहिये । भगवतीका मन्दिर बस्तीमें है । सिंहपर खड़ी हुई बड़ी मनोहर श्यामवर्ण मूर्त्ति है । इस स्थानपर माताकी छटा देखते ही बनती है । भगवतीका दर्शन करके यात्रियोंको काली खोह त्रिकोणकी यात्रा करनी चाहिये । यहाँ अष्टभुजा भगवतीके दर्शन होते हैं । काली खोहमें शुम्भ निशुम्भमर्दिनीका स्थान है । यहाँपर पुराण-प्रसिद्ध शुम्भ और निशुम्भका युद्ध हुआ था । यह भी एक सिद्ध पीठ है । इस जगह आज भी महान् सिद्ध शाक्त रहते हैं । उन महापुरुषोंके सबको दर्शन नहीं होते । यहाँ तीर्थपुजारियोंके अतिरिक्त कुछ प्रतिष्ठित महानुभावोंके द्वारा भी यह बात सुनी गयी है कि थोड़ा समय हुआ, एक बार जब भगवतीके मन्दिरका द्वार बन्द हो चुका था कुछ शाक्त आये और भगवतीकी चौखटपर पुष्पमाला रखकर अन्तर्धान हो गये । प्रातःकाल जब मन्दिरका दरवाजा खोला गया तो वे पुष्प भगवतीके चरणों और पुष्पमाला गलेमें पड़ी हुई मिली । यहाँपर मार्कण्डेयपुराण और सप्तशतीका पाठ प्रायः सदा ही होता

रहता है। विन्ध्यपर्वतपर कुछ समय नियमपूर्वक रहनेसे सहसा सिद्ध पुरुषके दर्शन हो जाते हैं। उनके दर्शन प्रायः नवरात्रमें ही हुआ करते हैं।

अनीश्वरवादी तनिक विन्ध्यपर्वतपर जाकर वहाँकी शिलाओंका निरीक्षण करें। वे उल्टी और खड़ी लगी हुई हैं, मानो शयन करा दी गयी हैं। जिन्होंने पुराणोंकी कथा सुनी है वे जानते हैं कि एक बार विन्ध्यपर्वतने खड़े होकर सूर्यका मार्ग रोक दिया था। उससे देवकर सब देवता व्याकुल हो गये और अगस्त्य जीकी शरणमें गये। अगस्त्यजी विन्ध्यपर्वतके गुरु हैं। देवताओंकी प्रार्थना सुनकर अगस्त्यजी विन्ध्यके पास गये। गुरुजीको आये देखकर विन्ध्यने उन्हें साष्टाङ्ग प्रणाम किया तब अगस्त्यजीने देवताओंका कष्ट दूर करनेके लिये विन्ध्यको आशीर्वाद देकर आज्ञा दी कि तुम इसी प्रकार आनन्दसे पड़े रहो। ऐसा कहकर अगस्त्यजी तपस्या करनेके लिये दक्षिण दिशाको चले गये। तबसे विन्ध्याचल पर्वत उसी प्रकार पेटके बल पड़ा हुआ है जैसा कि उसकी शिलाओंकी स्थितिको देखकर भी जान पड़ता है।

यहाँ एक विन्ध्येश्वर शिव हैं। उनके मन्दिरमें काशिराजके पूर्वजोंका खुदवाया हुआ एक शिलालेख है, जिसका सब भाग पढ़नेमें नहीं आता केवल संवत १७३३ पढ़ सकते हैं।

इसके सिवा यहाँ एक तारकनाथ कुण्ड है। इसमें स्नान करनेसे यात्री पापमुक्त हो जाते हैं—ऐसा इसका माहात्म्य है। इसके निकट जो शिवलिङ्ग हैं उनकी नामावली इस प्रकार है—

तारकेश्वर, भृगीश्वर, अष्टदशागुलेश्वर, शैलेश्वर, सारस्वतेश्वर, सर्वतीर्थेश्वर, महेश्वर, रत्नेश्वर, धर्मेश्वर इत्यादि। इन शिवलिङ्गोंके दर्शनसे भी सर्व पापोंकी निवृत्ति हो जाती है।

तारकेश्वर शिवके पश्चिममें नारायण नामका सरोवर है। यहाँ सप्तर्षि कुण्ड, ब्रह्मकुण्ड और लक्ष्मीकुण्ड हैं। इनके सिवा बहुत-से ऐसे भी कुण्ड हैं जो अब लुप्त हो गये हैं, इनके जीर्णोद्धारकी आवश्यकता है। इन कुण्डोंकी नामावलीसे यह प्रकट होता है कि इस पवित्र स्थानपर ब्रह्मा और सप्तर्षि आदि मुनियोंने भी तपस्या की है।

भगवती, अष्टभुजी और काली इन तीनों देवियोंके दर्शन करनेको ही त्रिकोण यात्रा कहते हैं। जिस समय अपने वधकी आशंकासे राजा कंसने अपनी बहिन देवकीके सात पुत्रोंको उत्पन्न होते ही नष्ट कर दिया और देवकीके आठवें गर्भसे भगवान् कृष्णने जन्म ग्रहण किया, उसी समय भगवान्की योगमाया उन्हींकी प्रेरणासे नन्दजीके घरमें उत्पन्न हुई। भगवान्के जन्म लेनेपर वसुदेवजी उन्हें गोकुलमें यशोदाके पास सुला आये और उस सद्योजाता बालिकाको लाकर देवकीको सौंप दिया। इससे सबको यही भ्रम हुआ कि देवकीके आठवें गर्भसे पुत्र न होकर कन्याका जन्म हुआ है। पापी कंसने उस कन्यापर भी दया न की उसने देवकीके बहुत अनुनय-विनय करनेपर भी उसके हाथसे उसे छीन लिया और उसे पृथ्वीपर पटकनेके लिये ऊपरको उठाया, किन्तु योगमाया उसके हाथसे छूट गया और अष्टभुजी देवीके रूपमें

प्रकट होकर उसने विन्ध्याचलपर निवास किया। यह योगमाया ही भिन्न भिन्न स्थानोंपर जगदम्बा, दुर्गा, काली एवं शीतला आदि अन्यान्य नामोंसे प्रसिद्ध है। यात्राके समय महाराज युधिष्ठिरने इस पुनीत आश्रमपर निवास किया था। यह कथा महाभारतके विराटपर्वमें आयी है।

यहाँ यात्रियोंकी भीड़ तो बनी ही रहती है किन्तु कितने ही व्यक्ति यहाँका जलवायु उत्तम समझकर रोगमुक्त होनेके लिये वायुसेवनार्थ भी आते हैं। रामकुण्ड तथा पर्वतकी रमणीयता देखते ही बनती है। यहाँके बाजारमें भगवतीका प्रसाद छोटे इलायचीदाने और चिरौंजी मिलता है। देवीपर चढ़ा हुआ द्रव्य लेनेके लिये यहाँके तीर्थगुरुओंके दिल बँटे हुए हैं।

विन्ध्याचलके दर्शनीय स्थानोंमें काशीनरेशका बगीचा मुख्य है। इसके सिवा यहाँ और भी कई उद्यान हैं तथा संस्कृत पाठशाला, डाकखाना, अस्पताल और अन्नक्षेत्र भी हैं। यहाँपर भोजनका सब सामान मिल जाता है।

माहात्म्य—कहते हैं, विन्ध्याचल पर्वतपर सिद्ध, चारण, गन्धर्व और देवतादि भी निवास करते हैं। भगवतीने नौ दिनतक युद्ध करके नवमीको शुम्भ निशुम्भका वध किया था। ये नौ दिन ही नवरात्र कहे जाते हैं। इन दिनोंमें भारतवर्षमें सभी जगह माता का पूजन अर्चन होता है। जो लोग माताकी शरण लेते हैं उनके समस्त संकट दूर हो जाते हैं।

काशी

विन्ध्याचलसे चलकर यात्रियोंको काशीपुरीके दर्शन करने चाहिये। मार्गमें मुगलसराय जङ्क्शनपर गाड़ी बदलनी पड़ती है। मुगलसरायसे दूसरा स्टेशन काशी है। यहाँ चार स्टेशन हैं। दो छोटी लाइन (B N W R) के और दो बड़ी लाइन (E I R) के। इन चारों स्टेशनोंपर भारतवर्षभरके लाखों यात्री आते हैं। बड़ी लाइनके स्टेशनोंका नाम काशी और बनारस छावनी है। इन्हें क्रमश राजघाट और सिगरोल भी कहते हैं। तथा छोटी लाइनके स्टेशनोंका नाम बनारसमिटी या अर्दलीपुर तथा मरुआडीह है। विन्ध्याचलसे काशी ४९ मील है। राजघाटपुलके ऊपर गाड़ी आनेपर काशीपुरीका दर्शन होने लगता है। यहींसे काशीकी रमणीयता देखकर दर्शकोंका मन प्रफुल्लित हो जाता है। सभी स्टेशनोंपर तीर्थगुरु अपने-अपने यजमानोंकी खोजमें रहते हैं, तथा इक्का, ताँगा आदि सवारियाँ हर समय मिल जाती हैं। काशी स्टेशनसे थोड़ी ही दूर एक बड़ी धर्मशाला है। बनारस छावनीके पास भी श्रीकृष्णधर्मशाला है। यह भी बहुत बड़ी है और इसमें सब प्रकारकी सुविधा है। काशी और बनारस स्टेशनसे ही शहर प्रारम्भ हो जाता है। विश्वनाथजीका फाटक स्टेशनसे दो मीलकी दूरीपर है। फाटकके निकट ही राधा-कृष्ण शिवदत्तरायकी धर्मशाला है। जिसको लोग ज्ञानवापीकी धर्मशाला भी कहते हैं। विश्वनाथजीका मन्दिर इसके पास ही है इसलिये इसमें यात्री अधिक सख्यामें ठहरते हैं। इसके सिवा और भी बहुत-सी छोटी-

बड़ी धर्मशालाएँ हैं। धर्मशालाओंके अतिरिक्त बहुत से मन्दिर-आश्रम और महन्तोंके स्थानोंमें भी यात्रीलोग ठहरते हैं। प्रधान प्रधान पर्वतिथियोंपर जब यहा भाड़की अधिकता होती है तो यहाँके पण्डे-लोग यात्रियोंको अपने घरोंपर भी ठहराते हैं।

वैसे तो काशी सारी-की सारी ही दर्शनीय है तथापि यहाँके कुछ घाट जैसे मणिकर्णिका, दशाश्वमेध, अहिल्याबाईघाट और केदारघाटादि-पर तो बाहरसे आनेवाले यात्री ही क्या, रात दिन यहीं रहनेवाले काशीनिवासी भी मुग्ध है।

धर्मशालामें ठहरकर यात्रीलोग पहले गगाजीमें स्नान करते हैं। अधिकाश यात्री मणिकर्णिका और दशाश्वमेधघाटपर ही स्नानादि करते हैं। मणिकर्णिकाघाटके विषयमें यह कहा जाता है कि जब सतीने अपने पिता दक्षके यज्ञमें भगवान् शिवकी निन्दा श्रवणकर उस अपमानको सहन न कर सकनेके कारण यज्ञकुण्डमें गिरकर अपने प्राण त्याग दिये तो भगवान् शकर सतीजीके मृतक शरीरको अपने कन्धेपर रखकर विक्षिप्त पुरुषकी भाति जहा-तहाँ घूमने लगे। तब श्रीविष्णुभगवान्ने अपने सुदर्शन चक्रसे सतीके अङ्ग प्रत्यङ्गोंको काटकर जहाँ-तहा गिरा दिया। जहाँ जहा सतीके अङ्ग गिरे वहापर सिद्धपीठ बन गये। मणिकर्णिकाघाटपर सतीका कुण्डल गिरा था। उसी स्थानपर आजकल मणिकर्णिकाकुण्ड है। यात्रीलोग गङ्गास्नानकर इस कुण्डपर तीर्थविधि करते हैं।

दशाश्वमेधघाट—इस स्थानपर ब्रह्माजीने दश अश्वमेध यज्ञ किये थे इसीसे इसका नाम दशाश्वमेधघाट हुआ। यहाँ जितने घाट हैं उनके नाम पड़नेके इसी प्रकार अलग-अलग कारण हैं।

हरिश्चन्द्रघाट—इस घाटपर आकर महाराज हरिश्चन्द्रकी लाखों वर्ष पुरानी स्मृति जाग्रत् हो जाती है। उनकी अद्भुत सत्यनिष्ठा, अपूर्व त्याग और विलक्षण कष्टसहिष्णुता मृत प्राणोंमें भी जीवनका सञ्चार कर देती है। संसारमें ऐसा दूसरा उदाहरण मिलना प्राय असम्भव है।

तुलसीघाट—इस स्थानपर गोसाईं तुलसीदासजी रहा करते थे। उन्हींकी स्मृतिमें यह घाट बनाया गया था। यहाँ उनका स्थापित किया हुआ एक हनुमान्‌जीका मन्दिर है। उसीमें उनकी चरणपादुकाएँ भी रक्खी हुई हैं। इसी स्थानपर श्रीगोसाईंजी महाराजने सं० १६८० में देह त्याग किया था।

इनके सिवा राजघाट, प्रह्लादघाट, त्रिलोचनघाट, ब्रह्माघाट, पञ्चगंगाघाट, भौंसलाघाट, चिताघाट, ललिताघाट, अहिल्याबाईघाट, केदारघाट, जानकीघाट और असीसंगमघाट आदि और भी बहुत-से घाट हैं।

श्रीविश्वनाथजी—किसी भी घाटपर स्नान करें और किसी भी रास्तेसे विश्वनाथजीके मन्दिरको जायँ मार्गमें छोटे-बड़े अनेकों शिवालय मिलेंगे। शिवजीका दर्शन यहाँ पग पगपर होता है। विश्वनाथमन्दिरके निकट पहुँचनेपर पुष्प, पुष्पहार एवं बिल्वपत्रादि पूजनसामग्रीकी अनेकों दूकानें हैं। यहकि दूकानदार यात्रियोंकी कपड़ा आदि वस्तुएँ रख लेते हैं और जब वे श्रीविश्वनाथजीका दर्शन करके लौट आते हैं तो उसको फिर सँभाल देते हैं। मन्दिर-के पहले फाटकसे प्रवेश करते ही विश्वनाथके स्वर्णमन्दिरके दर्शन होने लगते हैं। मन्दिरके प्राङ्गणमें संगमर्मरके फर्शमें चाँदीके रुपये

जड़े हुए हैं। ये रुपये किसी धनी भक्तने लगवाये थे तथा मन्दिरके ऊपर जो सुवर्णका शिखर है उसे पंजाबकेसरी महाराज रणजीतसिंहने सन् १८३० ई० में बनवाया था। विश्वनाथजीके मन्दिरमें चार दरवाजे हैं, जिनकी चौखट और किवाड़ें चाँदीके पत्रसे मढ़ी हुई हैं। शिवजीकी जलहरी भी चाँदीकी बनी हुई है। इस मन्दिरके भीतर एक अखण्ड घृतदीप अहर्निश जलता रहता है। प्रातःकाल चार बजेसे ग्यारह बजेतक और सन्ध्यासमय तीन बजेसे छः बजेतक यहाँ इतनी भीड़ रहती है कि विश्वनाथजीपर जल चढ़ाना भी कठिन हो जाता है। दस बजे दिन और ग्यारह बजे रात्रिमें नागकोटकी तरफसे श्रीविश्वनाथजीकी आरती होती है। कहते हैं कि नागकोटकी ओरसे विश्वनाथजीके दैनिक व्ययके लिये दो सौ रुपये बँधे हुए हैं। भगवान्के विधिवत् पूजनके लिये यहाँ कई ब्राह्मण नियुक्त हैं, वे भगवान्को स्नान करानेके लिये चाँदीके कलशोंमें गौका दुग्ध और गंगाजल भरकर लाते हैं। यदि कोई यात्री दिनके दस बजेकी आरती न देख सके तो उसे रात्रिकी आरती तो अवश्य देखनी चाहिये। यह देखनेकी चीज है।

विश्वनाथजीकी परिक्रमामें अन्य कई देवी-देवताओंके दर्शन मिलते हैं। एक कुण्डमें भगवान् विश्वनाथके स्नानका जल रहता है। उसका यात्रीलोग आचमन किया करते हैं और परिक्रमा देकर कुछ मिनट विश्रामकर शिवनामका स्मरण करते हैं। तत्पश्चात् मन्दिरकी स्वर्णपताकाका दर्शन और भगवान्को प्रणामकर अन्नपूर्णाजीके दर्शनार्थ जाते हैं।

अन्नपूर्णा—अन्नपूर्णाका मन्दिर विश्वनाथजीके समीप ही है। रास्तेमें गलीके दोनों ओर सैकड़ों अपाहिज भिक्षुक बैठे रहते हैं। उन्हें कोई-कोई यात्री पैसा, पाई या केवल कुछ चावल दे देते हैं। भगवती-के मन्दिरके सामने पुष्प, मालादि पूजनकी सामग्रीकी दूकानें है, यात्रीलोग पूजनकी सामग्री अथवा केवल पुष्पमाला लेकर मन्दिरमें प्रवेश करते हैं।

फाटकमें प्रवेश करते ही भगवतीके मन्दिरकी ध्वजा दिखायी देने लगती है। सारा मन्दिर लाल रंगसे पुता है। सभामण्डप इतना बड़ा है कि उसमें दो सौ मनुष्य आनन्दसे बैठ सकते है। यहाँपर भगवती अन्नपूर्णाकी स्तुतिमे सम्मिलित होकर बहुतसे भक्तगण गाना-बजाना किया करते हैं। यह आनन्द प्रातःकालसे बारह बजे मध्याह्नतक होता है। भगवतीके भवनके द्वारपर एक पुजारी बैठा रहता है। यदि कोई यात्री प्रातःकाल ही अपने हाथों भगवतीका पूजन किया चाहे तो कर सकता है। फिर दिनभर केवल दर्शनमात्र ही हो सकते हैं। यात्री फल, माला आदि जो कुछ सामग्री ले जाते हैं उसे मन्दिरका पुजारी भगवतीको समर्पण कर देता है और कुछ प्रसादस्वरूप लौटाकर यात्रियोंको पञ्चामृतका चरणामृत देता है। इस प्रकार भगवतीका दर्शनकर यात्री मन्दिरकी परिक्रमा करते हैं।

मन्दिरके चारों ओर भी देवमूर्तियोंके दर्शन होते हैं। परिक्रमामें एक छोटे-से मन्दिरमें सूर्यभगवान्‌की मूर्ति दर्शनीय है। यहाँपर बड़ी-बड़ी गौएँ रहा करती हैं तथा मन्दिरके समीप दो दालानोंमें पण्डित, साधु, गृहस्थ अथवा किसी दूसरे पुरुषसे सकल्प पाये हुए ब्राह्मणलोग दुर्गासप्तशती, चण्डी अथवा किसी मन्त्रका

पाठ या जप करते दिखायी पड़ते हैं। इन दोनों दालानोंके ऊपर उन्नोंपर काठके रंगीन साइनबोर्ड लगे हुए हैं, जिनमें उन महानु भावोंके नाम पतेसहित लिखे हैं जो अन्नपूर्णाब्रह्मचर्याश्रम काशीके लिये एककालिक, वार्षिक अथवा मासिक दान देते हैं।

काशीके रईस श्रीपुरुषोत्तमदासजी खत्रीने लगभग एक लाख रुपया व्यय करके अन्नपूर्णामन्दिरसे मिला हुआ एक नया मन्दिर बनवाया है, इसमें नवीन ढगपर बना हुई गगावतरण, रामपञ्चायतन, शिव-पञ्चायतन, काली, राधाकृष्ण और नृसिंह आदिकी बड़ी मनोहर प्रतिमाएँ हैं। गगावतरणका दृश्य तो इतना चित्ताकर्षक है कि वहाँसे हटनेको जी नहीं चाहता। इन प्रतिमाओंके कारण अन्नपूर्णामन्दिर-की शोभा और भी अधिक बढ़ गयी है। इस प्रकार अन्नपूर्णाजीके दर्शनकर यात्रीलोग ढुण्ढिराज गणेशकी ओरके दूसरे दरवाजेसे ज्ञानवापीमें जाते हैं।

ज्ञानवापी—यह विश्वनाथजीके मन्दिरके पीछे एक खुली हुई जगहमें है, इसके पास ही पुष्पादिकी दूकानें हैं। यह एक बहुत बड़ा कुआँ है। इसके ऊपर लोहेके सीकचोंका जाल पड़ा हुआ है। ज्ञानवापीके ऊपर बैठा हुआ एक पुजारी यात्रियोंको उसके जलका आचमन कराता है। यात्रीलोग पुष्पादिसे ज्ञानवापीका पूजन करते हैं। इस कूपका जल पीनेसे ज्ञानका उदय होता है, ऐसा इसका माहात्म्य बतलाया जाता है।

ज्ञानवापीके पास ही एक बहुत बड़ा मसजिद है। इसे मुगल सम्राट् औरंगजेबने विश्वनाथजीके प्राचीन मन्दिरको तुड़वाकर

बनवाया था। इसके पीछेकी दीवार वही है जो कि प्राचीन मन्दिरकी थी, कहते हैं कि जब औरङ्गजेबने इस मन्दिरको ध्वंस किया तो श्रीविश्वनाथजी इस समीपवर्ती (ज्ञानवापी) कूपमें कूद पड़े, इसीसे इसका जल बहुत पवित्र माना जाता है। यहाँ जो प्राचीन नन्दीश्वर थे उनके बदलेमें नैपालराज्यके भेंट किये हुए एक सात फुट ऊँचे नन्दीश्वर हैं।

ढुण्ढिराज गणेश और **दण्डपाणि**—अन्नपूर्णाजीके मन्दिरके पास ही काशीके प्रसिद्ध देवता ढुण्ढिराज गणेशकी प्रतिमा है। इनके प्रत्येक अगपर चाँदी लगी हुई है। ढुण्ढिराजके समीप उत्तर-की ओर एक कोठरीमें दण्डपाणिकी मूर्त्ति है। उनके दोनों ओर दो गण खड़े हैं जिनके नाम शुभ्र और विभ्र बतलाये जाते हैं।

आदिविश्वेश्वर—ज्ञानवापीके समीप जो औरङ्गजेबवाली मसजिद है उसके पश्चिम ओर कारमाइकेल लाइब्रेरी है। लाइब्रेरीसे पश्चिमोत्तर दिशामें सड़कके पास आदिविश्वेश्वरका मन्दिर है। मन्दिरमें सगमर्मरका फर्श है तथा पीतलसे जड़े हुए एक कुण्डमें एक छोटा सा शिवलिङ्ग है।

गोपालमन्दिर—यह चौखम्भामुहल्लामें वल्लभसम्प्रदायवालोंका एक बहुत बड़ा और सुन्दर मन्दिर है। इस मन्दिरकी झाँकी बड़ी मनोहर है। यहाँ श्रावणमें झूलनोत्सव बड़ी धूमधामसे होता है। काशीमें वल्लभ-सम्प्रदायवालोंके और भी कई मन्दिर हैं। जिनमें रणछोरजी, बड़े महाराजजी, दाऊजी और बल्देवजीके मन्दिर प्रसिद्ध हैं।

कालभैरव—इन्हें भैरवनाथ भी कहते हैं। ये काशीपुरीके रक्षक माने जाते हैं। ये भैरवनाथमुहल्लेमें एक शिखरदार मन्दिरमें सिंहासनके ऊपर विराजमान हैं। मन्दिरके तीन ओर द्वार हैं तथा सफेद और काले पत्थरका फर्श लगा हुआ है। दरवाजेकी बायीं ओर पत्थरका एक बड़ा कुत्ता है तथा दोनों ओर हाथोंमें सोटे लिये भैरवजीके गण खड़े हुए हैं। इस मन्दिरको सन् १८२५ ई० में बाजीराव पेशवाने बनवाया था। यहाँके पुजारी मोरपङ्खसे यात्रियोंकी पीठ ठोकते हैं। अगहन कृष्ण अष्टमीको यहाँ दर्शकोंकी बड़ी भीड़ होती है।

नैपाली मन्दिर—यह शिवमन्दिर ललिताघाटके ऊपरी भागमें है। इसकी आकृति चीनके मन्दिरोंके ढंगकी है। इस ढंगका मन्दिर काशीमें दूसरा नहीं है। इसके सामने एक बड़ा नन्दी है और पास ही नैपालियोंके ठहरनेके लिये एक धर्मशाला है।

मानमन्दिर—यह मन्दिर आमेरके महाराज मानसिंहका बनवाया हुआ है। यह गंगातटपर बने हुए विशाल भवनोंमें सबसे पुराना है। इसकी छतके ऊपर महाराज सवाई जयसिंहकी बनवायी हुई वेधशाला है, जिससे कुछ यन्त्रोंकी सहायतासे समस्त नक्षत्र और ग्रहमण्डलका ज्ञान हो जाता है।

राममन्दिर—इस मन्दिरको ग्वालियरके दीवान दिनकर रावने बनवाया था। इसमें एक सुवर्णजटित सिंहासनपर बहुमूल्य वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित श्रीराम, सीता और लक्ष्मणजीकी बड़ी मनोहर

मूर्त्तियाँ हैं तथा इसके दालानमें बहुत-से झाड फानूस लटके हुए हैं—यह मन्दिर बहुत दर्शनीय है ।

गोरखनाथमन्दिर—मन्दाकिनीमुहल्लेमे गोरखटीला नामसे प्रसिद्ध एक ऊँची भूमि है । उसके ऊपर यह मदिर बना हुआ है । इसमें बाबा गोरखनाथके चरण-चिह्न है । यहा गोरखसम्प्रदायके साधु रहते है ।

दुर्गाजीका मन्दिर—यह अस्साघाटसे प्राय आधे मीलकी दूरीपर है । काशीके प्रसिद्ध तीर्थोंमेंसे एक यह भी हे । भगवती दुर्गाजीके आगे एक मण्डप हे जिसमें एक विशाल घण्टा टँगा हुआ है । मदिरके आस-पास ओर भी बहुत-से देवताओंकी मूर्त्तियाँ हें ।

संकटमोचन—काशीकरवटसे कुछ दूर अस्सीघाटपर गोस्वामी तुलसीदासके स्थापित किये हुए हनुमान्‌जी है, जो सकटमोचन नामसे प्रसिद्ध हैं । इस मूर्त्तिको गोसाईंजीने ऐसे समयमे स्थापित किया था जब कि काशीके राजपुरोहितपर ही सकट उपस्थित हो गया था। इसी स्थानपर उन्होंने हनुमान्‌जीके सकटमोचन नामक स्तोत्रकी रचना की थी । सकटमोचन हनुमान्‌के सम्मुख बैठकर उस स्तोत्रका नियमपूर्वक पाठ करनेवाले भक्तोंका सकट आज भी कट जाता है ।

पिशाचमोचन सरोवर—सकटमोचनसे थोड़ी दूर पिशाचमोचन सरोवर है । इस सरोवरके घाट पके बने हुए हैं । यहाँपर नियमानुसार तीर्थविधि करनेसे प्रेतादिकी व्याधि दूर हो जाती है । यहाँ प्रतिवर्ष अगहनशुक्ल चतुर्दशीको मेला लगता है ।

काशीके पञ्चतीर्थ—असीसंगम, वरणासंगम, पञ्चगंगा, मणिकर्णिका और दशाश्वमेध काशीके पञ्चतीर्थ कहलाते हैं। इनपर विधिवत् तीर्थविधि करनेसे मनुष्य समस्त पापोंसे मुक्त हो जाता है।

काशीके कुण्ड

लोलार्ककुण्ड—यह भदैनीमुहल्लेमें तुलसीघाटके समीप एक कुआँ है, इसका घेरा १५ फीट है और इसके एक ओर इससे कुछ बड़ा चतुष्कोण जलरहित कुण्ड है। इस कुण्डके तटपर लोलार्कादित्य और लोलार्केश्वर महादेवके मन्दिर हैं। यहाँ भादोंकी छठको बड़ा मेला लगता है।

पुष्करकुण्ड—यह विशाल और गम्भीर सरोवर असी नदीके तटपर है। इसके एक ओर पक्का घाट भी बना हुआ है।

दुर्गाकुण्ड—यह दुर्गाजीके मन्दिरके पास है। इसमें चारों ओर पक्के घाट बने हुए हैं।

कुरुक्षेत्र—यह दुर्गाकुण्डके पास ही है, परन्तु प्रायः सूखा रहता है।

नागकुआँ—शहरके पश्चिमोत्तर भागमें नागेश्वरी देवीके मन्दिरसे थोड़ा दूरीपर कर्कोटक तीर्थ है, जो इस समय नागकुआँके नामसे प्रसिद्ध है। इसमें नीचे जानेके लिये प्रायः डेढ़ सौ सीढ़ियाँ लगी हुई हैं। यह नीचेसे गोलाकार कुआँ है और ऊपरसे चौकोर तालाब। इसके ऊपर पत्थरके दो सर्प बने हुए हैं। कहते हैं, इसमें स्नान करनेसे विषकी गर्मी शान्त हो जाती है।

नियमानुसार जैसी उनकी इच्छा होती है वैसे ही उनके धनका उपयोग किया जाता है। इस प्रकार विश्वविद्यालयको भारतके बहुत से दानी सज्जनोंसे प्रतिवर्ष लाखों रुपया छात्रवृत्ति, उद्योगशाला, छात्रावास, आयुर्वेदकालेज, आयुर्वेदरसशाला, व्यायामशाला एवं पदक आदि कार्योंके लिये मिला करता है। इस विद्यालयमें अंग्रेजी, हिंदी, संस्कृत, उर्दू, फारसी आदि भाषाओं तथा विज्ञान, इतिहास, गणित, इञ्जिनियरिंग, डाक्टरी, वैद्यक और कृषि आदि सभी विषयोंकी सर्वोच्च शिक्षा दी जाती है। यहाँ सभी विषयोंके बड़े चुने-चुने विद्वान् रक्खे गये हैं। इसका प्रयोगशाला, रसायनशाला और पुस्तकालय आदि संस्थाएँ भारतवर्षमें सर्वोच्चकोटिकी हैं। विद्यालयका विस्तार प्रायः तीन मीलके घेरेमें है। इसमें प्रायः ३-४ सहस्र विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते हैं।

क्वीन्स कालेज—यह भारतवर्षके प्राचीनतम कालिजोंमेंसे एक है। इसका सम्पूर्ण अधिकार गवर्नमेण्टके हाथमें है। काशीका गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज भी इसीके अधीन है। इस कालिजकी लाइब्रेरीमें संस्कृत और अंग्रेजी आदि भाषाओंकी उत्तमोत्तम पुस्तकें हैं। इसका विशाल भवन बहुत दर्शनीय है। यह सन् १८५२ में बना था।

काशीविद्यापीठ—इस राष्ट्रीय संस्थाकी सन् १९२१ ई० में स्थापना हुई थी। इस संस्थाका संचालन अधिकांशमें बाबू शिवप्रसाद गुप्तके दिये हुए दस लाख रुपयेके दानसे ही होता है। इसमें शिक्षाके तीन विभाग हैं—विद्यालयविभाग, पाठशाला और शिल्पशाला।

विद्यालयविभागमें मुख्यतया दर्शन, अर्थशास्त्र, इतिहास, राजनीति, संस्कृत, अंग्रेजी और हिन्दी आदि विषयोंकी शिक्षा दी जाती है। इसमें अंग्रेजी अनिवार्य है। पढ़ाई समाप्त होनेपर शास्त्रीकी उपाधि मिलती है। पाठशालाविभागमें छठी श्रेणीसे दशवीं श्रेणीतककी पढ़ाई है। इसका पाठ्यक्रम समाप्त करनेपर विशारदकी उपाधि मिलती है। इसमें विज्ञान अनिवार्य है। शिल्पविभागमें तरह-तरहकी दस्तकारी सिखायी जाती है। इस विद्यापीठमें विद्यार्थियोंसे कोई फीस नहीं ली जाती।

इनके सिवा काशीमें और भी बहुत से संस्कृतविद्यालय हैं। काशी संस्कृत विद्याका केन्द्र है। यहाँकी समस्त पाठशालाओंमें प्राय बीस सहस्र विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते हैं। यहाँके कई विद्यालयोंमें तो विद्यार्थियोंको भोजन, वस्त्र और पुस्तकें भी दी जाती हैं। प्रधान-प्रधान विद्यालयोंके नाम इस प्रकार हैं—जोखीराम मटरूमल गोयनका महाविद्यालय, मारवाडी महाविद्यालय, राजस्थान महाविद्यालय, बिडला महाविद्यालय तथा रूइया महाविद्यालय इत्यादि।

विद्यालयोंके अतिरिक्त यहाँ बहुत-से अन्नक्षेत्र, साधु-आश्रम और महन्तोंके स्थान भी हैं। असीके तटपर मुमुक्षुभवन नामकी एक प्रसिद्ध संस्था है। इसमें अन्नक्षेत्र, पाठशाला और दण्डीबाड़ा होनेके अतिरिक्त कुछ ऐसे स्थान भी हैं जहा ठहरकर गृहस्थ सज्जन भी कुछ समयतक काशीवास कर सकते हैं।

अनाथालय—यहाँ अनाथ बालकोंके लिये काशीके भूतपूर्व कलेक्टर श्रीमहताजी धर्मपत्नीके उद्योगसे एक अनाथालय स्थापित हुआ है। उसका उद्घाटन सम्वत् १९८४ में संयुक्तप्रान्तके गवर्नरसाहबने किया था। इसमें अनाथ बच्चे और अनाथ स्त्रियोंका पालन पोषण बड़े सुचारुरूपसे होता है। मेहतासाहब बड़े ही उदार प्रकृतिके सज्जन थे। वे जहाँ-जहाँ भी रहे उन्होंने ऐसे ही परोपकारके कार्य किये हैं। प्रतापगढ़में मेहतासंस्कृतपाठशाला उनका स्मरण दिलाता है, जो अबतक गवर्नमेण्टकी सहायतासे सुचारुरूपसे चल रही है।

कबीरचौरा—यहाँ कबीरपन्थियोंका प्रसिद्ध मन्दिर है। मन्दिरमें कबीरसाहबके चरणचिह्न बने हुए हैं तथा एक दोमंजिले मकानमें कबीरजीकी गद्दी है। गद्दीके पास उनकी टोपी रक्खी हुई है। इस गद्दीपर अबतक बीस महन्त हो चुके हैं।

माधवरामका धरहरा—माधवरामघाटके पास ऊँची भूमिपर बादशाह औरंगजेबकी बनवायी हुई एक मसजिद है। उसके आगे इधर-उधर उसकी नींवसे १४२ फुट ऊँचे तीन खण्डवाले दो बुर्ज हैं। इनका व्यास नीचे सवा आठ फीट और ऊपर साढ़े सात फीट है। ऊपर जानेके लिये इनके भीतर चक्करदार सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। इनके ऊपरसे काशीका दृश्य बड़ा सुहावना दीख पड़ता है। इन्हें 'माधवराम' नामके एक कारीगरने बनाया था। इसीसे ये इस नामसे पुकारे जाने लगे।

रामनगर—यह असीसगमसे एक मील दक्षिणकी ओर गंगाजीके दूसरे तटपर बसा हुआ है। यहाँ जानेके लिये नगवा घाटसे नावें मिलती हैं। यह वर्तमान काशीनरेशकी राजधानी है। इस नगरको राजा बलवन्तसिंहने सन् १७५० में बसाना आरम्भ किया था। उनके पीछे उनके पुत्र राजा चेतसिंहने इस कार्यको पूरा किया। राजमहलसे एक मीलकी दूरीपर राजा चेतसिंहका बनवाया हुआ एक बड़ा तालाब और सुन्दर मन्दिर है। यह मन्दिर हिन्दू-कला-कौशलका बहुत अच्छा नमूना है। यहाँ आश्विन मासमें रामलीला होती है, जो भारतवर्षमें सम्भवतः सर्वोत्कृष्ट कही जा सकती है। रामनगरका दूसरा प्रसिद्ध स्थान व्यासाश्रम है। इसमें व्यासजीका एक तैलचित्र रक्खा हुआ है। यहाँ फाल्गुन मासमें मेला लगता है। इस समय काशीनरेश यात्रियोंके देखनेके लिये अपना महल खोल देते हैं। रामनगर स्वयं भी बड़ी सुन्दर बस्ती है।

पञ्चक्रोशी परिक्रमा—काशीमें ऐसे ही अनेकों स्थान दर्शनीय हैं। उन सबका वृत्तान्त लिखा जाय तो एक पूरा ग्रन्थ बन सकता है। काशीकी पञ्चक्रोशी परिक्रमामें भी बहुत-से तीर्थस्थान मिलते हैं। यह परिक्रमा कार्तिक मासमें होती है। यों तो सदा ही यात्रीलोग परिक्रमा करते ही रहते हैं। शास्त्रका कथन है कि प्रलयकालके अन्तमें शिवजीने इस पञ्चक्रोशी परिक्रमाके भीतरकी भूमिको अपने निवासके लिये उत्पन्न किया और वे शक्तिसहित इस स्थानमें रहने लगे। इसीका नाम काशी हुआ। यहाँ मृत्यु होनेसे निश्चय ही मोक्ष प्राप्त होता है।

सारनाथ—यह भगवान् गौतमबुद्धका निवासस्थान था। यहाँ एक बहुत बड़ा विहार था, जिसमें भगवान् बुद्ध अपने सहस्रों शिष्योंके साथ रहा करते थे। यह स्थान काशीसे प्राय आठ मीलकी दूरीपर है। इस जगह अब भी भूमि खोदनेपर बुद्ध कालके बहुत से पदार्थ मिलते हैं। इस समय यह बौद्धोंका एक तीर्थस्थान है। यहाँ पुस्तकालय, धर्मशाला, बुद्धमन्दिर, जैनमंदिर, अजायबघर, स्तूप, मूलगन्ध कुटी और प्राचीन विहारके खण्डहर देखनेयोग्य हैं। सातवीं सदीतक सारनाथकी दशा बड़ी उन्नत और दर्शनीय थी, किंतु जब बारहवीं शताब्दीके अन्तम मुहम्मद-गोरीने इसे लूटा तबसे यहाँ केवल खण्डहरमात्र रह गये हैं। चीन और जापानके लोग इस स्थानपर बड़ी भक्तिपूर्वक दर्शन करने आया करते हैं। बौद्धधर्मानुयायियोंके लिये यह बड़े आदरकी जगह है।

माहात्म्य—काशी सप्तपुरियोंमेंसे एक है तथा तीर्थराजके सबसे अधिक समीप होनेके कारण उन्हें सबसे अधिक प्रिय है। 'काशीमरणान्मुक्ति' यह समस्त शास्त्रोंका निर्विवाद मत है। इसीसे यहाँ सर्वदा ही बहुत-से सन्त-महात्मा और श्रद्धालु गृहस्थ महानुभाव निवास करते रहे हैं। काशीको अध्यात्मविद्या और आर्यसंस्कृतिकी राजधानी कहा जाय तो कोई अयुक्ति नहीं। जिस प्रकार यहा सर्वदा ही बड़े-से-बड़े विद्वान्, कर्मकाण्डी और आचार्य निवास करते हैं उसी प्रकार इसे अत्यन्त विरक्त और निरीह महात्माओंकी तपोभूमि होनेका भी सौभाग्य प्राप्त है।

भिन्न-भिन्न सम्प्रदायोंके जो भी आचार्य हुए हैं, उनमें अधिकांशने यहीं आकर अपने मतकी स्थापना की थी। भगवान् बुद्ध, भगवान् शंकर, श्रीरामानुजाचार्य, श्रीवल्लभाचार्य, श्रीचैतन्यमहाप्रभु, श्रीरामानन्दाचार्य, कबीरसाहब, रैदास, गोसाईं तुलसीदास आदि महानुभावोंसे लेकर अर्वाचीन भारतके रत्न श्रीविशुद्धानन्द सरस्वती, नारायण भट्ट, शंकर भट्ट, नीलकण्ठ, भट्टोजि दीक्षित, नागोजी भट्ट एवं प० बापूजा शास्त्री, राममिश्र शास्त्री, सुधाकर द्विवेदी, बच्चा झा, श्रीत्रैलङ्गस्वामी, श्रीभास्करानन्द-जैसे त्यागी महात्मा तथा बाल शास्त्री और शिवकुमार शास्त्री जैसे उद्भट विद्वानोंकी निवासभूमि होनेका सौभाग्य इसी पवित्र पुरीको प्राप्त है। जहाँ इस प्रकार सर्वदा ही भगवत्प्राण महात्माओंका सान्निध्य रहता है उस पुरीके मोक्षदायिनी होनेमें सन्देह ही क्या है।

संस्कृत और आध्यात्मिक विद्याका ही नहीं, इसे हिन्दी-साहित्यका भी केन्द्र कह सकते हैं। यहाँकी नागरी-प्रचारिणी सभा हिन्दी साहित्यकी सबसे प्राचीन और प्रधान संस्था है। जितने साहित्यिक विद्वान् यहाँ रहते हैं उतने सम्भवतः कहीं नहीं रहते। भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र, छोटूराम तिवारी, राधाकृष्णदास, अम्बिकादत्त व्यास, राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द और जगन्नाथदास रत्नाकर-जैसे धुरन्धर विद्वानोंने इसी पवित्र पुरीमें अपनी जीवनयात्रा समाप्त की थी।

व्यापार और कलाकी दृष्टिसे भी काशी बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। यहाँके रेशमी वस्त्र, पीतलके वर्तन और लकड़ीके खिलौने समस्त भारतवर्षमें प्रसिद्ध हैं। यहाँ कारचोबी और चाँदीका

काम बड़ा सुन्दर होता है। रेशम और मखमलके ऊपर जो जरीका काम होता है वह तो अपने ढंगका निराला ही है। बनारसका साड़ी, दुपट्टे और नारियाँ सर्वत्र प्रसिद्ध हैं। यहाकी बनी हुई पीतलकी मूर्तियोंपर अद्भुत चित्रकारी और कलाका प्रदर्शन होता है। ये सब सामान यहाँसे बहुत दूर-दूरतक जाते हैं।

अधिक कहाँतक कहें? काशी तो काशी ही है। जिस दृष्टिसे भी देखो इसका ढंग निराला ही है। धर्मप्राण, ब्रह्मवित्, कलाकार, विद्वान् और सहृदय सभी प्रकारके यात्रियोंके मनोरञ्जनके लिये यहाँ पुष्कल सामग्री है। इस पुण्यपुरीका दर्शन करके यात्रियोंको अपने जीवन और नेत्रोंको अवश्य सफल करना चाहिये। पुराणोंमें इसे अविमुक्तक्षेत्र कहा है। यहां विशेष पर्वोंपर उत्तरवाहिनी गंगाजीमें स्नान करनेके लिये नैमिषारण्य, प्रयाग, पुष्कर, कुरुक्षेत्र आदि तीर्थ तथा गोदावरी, नर्मदा एवं कावेरी आदि पवित्र नदियां भी आती हैं। यहाँ प्राणत्याग करनेपर चारों वर्णोंके मनुष्यको ही नहीं कीट पतंगादिको भी मोक्षकी प्राप्ति होती है। काशीमें दिया हुआ दान अनन्त और अमोघ होता है। सूर्यग्रहणके समय जिस प्रकार कुरुक्षेत्र-स्नानका महान् फल है उसी प्रकार चन्द्रग्रहणके समय काशीमें स्नान करनेका बतलाया जाता है। जो व्यक्ति भक्तिभावसे देवाधिदेव श्रीविश्वनाथका पूजन करता है वह सब प्रकारके पापोंसे मुक्त हो जाता है।

गया

मोक्षदायिनी काशीकी यात्रा करके यात्रीलोग गयाजीका दर्शन करते हैं। शास्त्रका कथन है कि पितृऋणसे मुक्त होनेके लिये प्रत्येक सन्तानको गयाश्राद्ध करना चाहिये। गयाकी यात्राके लिये आश्विनमासका पितृपक्ष ही सर्वोत्तम माना गया है।

काशीसे गया १४३ मील है। स्टेशनके निकट राय सूर्यमल-की धर्मशाला है। इसके सिवा गयाजीमें और भी धर्मशालाएँ हैं। यात्री अपनी सुविधा देखकर किसी धर्मशाला अथवा तीर्थगुरुओंके स्थानमें ठहर जाते हैं।

गया चारों ओरसे पर्वतमालासे घिरी हुई है। इन पर्वतोंके ऊपर बहुत-से पवित्र स्थान हैं। यात्रियोंके वहाँतक सुविधापूर्वक पहुँचनेके लिये भारतवर्षके राजा-महाराजाओंने सीढ़ियाँ बनवा दी हैं।

गयाका प्रधान कार्य अपने मृत पितरोंके लिये पिण्डदान करना है। यों तो यहाँ सर्वदा ही यात्री आते रहते हैं, किन्तु आश्विनमासके पितृपक्षमें तो यहाँ देश-देशान्तरके नरनारियोंकी बाढ़ सी आ जाती है। यद्यपि फल्गु नदीमें जल अधिक नहीं रहता है तथापि शास्त्रके अनुसार इस नदीमें स्नान और पिण्डदान करनेका बड़ा भारी माहात्म्य है। गयामें श्राद्धकर्मके लिये प्राचीन समयसे ही बहुत सी वेदियाँ बनी हुई हैं। उनपर लोग विद्वान् ब्राह्मणोंके द्वारा अपने पूर्वजोंके पिण्डदान कराते हैं। पहले यहाँ तीन सौसे भी अधिक वेदियाँ थीं, किन्तु अब समयके प्रभावसे उतनी वेदियाँ नहीं रहीं। फल्गु नदीके तटपर कुछ घाट हैं। जैसे गायत्रीघाट, गदाधरघाट, ब्रह्माणीघाट, बबुआघाट और जिह्वालोलघाट आदि। वर्षाऋतुमें फल्गु नदीका जल घाटोंके निकट आ जाता है। अन्य ऋतुओंमें किसी किसी स्थानपर ही जल दिखायी देता है। किन्तु उस समय भी बालू हटानेपर स्वच्छ जल निकल आता है। उसीसे श्राद्धकर्म किया जाता है।

यहाँ श्राद्ध करनेका बड़ा भारी माहात्म्य है। यों तो यहाँ सर्वदा ही श्राद्ध किया जा सकता है तथापि आश्विनके पितृपक्षमें इसका विशेष माहात्म्य है। पूरा गयाका श्राद्धक्रम १६ दिनमें समाप्त होता है। इसका विवरण इस प्रकार है—

तिथि	श्राद्धस्थान
भाद्रशुक्ल पूर्णिमा—	फल्गुजीके तटपर एक वेदीपर क्षीरका पिण्डदान और तीर्थगुरुकी चरणपूजा करनी चाहिये।

ाश्विनकृष्णा प्रतिपदा–रामशिला, रामकुण्ड, प्रेतशिला, ब्रह्मकुण्ड और काकबलि इन पाच वेदियोंपर श्राद्ध करे।

,, ,, द्वितीया–उत्तरमानस, उदीची, कनखल, दक्षिणमानस और जिह्वालोलमें श्राद्ध करे।

,, ,, तृतीया–मतङ्गवापी, धर्मारण्य और बौद्धगयामें।

,, , चतुर्थी–ब्रह्मसरोवर और काकबलिपर।

,, ,, पञ्चमी–रुद्रपद, ब्रह्मपद और विष्णुपदपर क्षीर-पिण्डोंसे श्राद्ध करे।

,, ,, षष्ठी
,, ,, सप्तमी
,, ,, अष्टमी

इन तीन तिथियोंपर नीचे लिखे १६ वेदियों-के मण्डपमें १४ वेदियोंपर श्राद्ध होते हैं। कार्तिकपद, दक्षिणाग्नि, गार्हपत्याग्नि, आहवनीयाग्नि, सत्याग्नि, आवसथ्याग्नि, सूर्य-पद, चन्द्रपद, गणेशपद, दधीचिपद, कण्व-पद, मतङ्गपद, क्रौञ्चपद, इन्द्रपद, अगस्त्यपद और कश्यपपद।

,, ,, नवमी–रामगया और सीताकुण्ड।

,, ,, दशमी–गयाशिर और गयाकूप।

,, ,, एकादशी–मुण्डपृष्ठा, आदिगया और धौतपद।

,, ,, द्वादशी–भीमगया, गोप्रचार और गदालोल।

,, ,, त्रयोदशी–श्रीफल्गुजीमें स्नान करके दूधका तर्पण करना चाहिये।

गयासुर तुरन्त लेट गया और देवताओंने उसकी पीठपर अपना यज्ञ आरम्भ कर दिया।

यज्ञके समय समस्त देवताओंके सहित भगवान् विष्णुको आया देखकर गयासुरने पुन उठनेकी इच्छा प्रकट नहीं की। तब विष्णु भगवान्के सहित सब देवताओंने उसे यह वर दिया कि आजसे जबतक इस ससारमें सूर्य और श्रीभागीरथीकी स्थिति रहेगी तबतक यहाँ आनेवाले जो यात्री अपने पितरोंको पिण्डदान करेंगे उनको अक्षय पुण्यकी प्राप्ति होगी, तथा अनन्त समयतक उनका स्वर्गमें निवास रहेगा। गयासुरके प्राणविसर्जन करते समय विष्णुभगवान्ने यह भी वर दिया कि हम तुम्हारी पीठपर अपने चरण स्थापित करते हैं। गया आनेवाले यात्री इनके दर्शन करके ही पापमुक्त हो जायँगे। यही गयाका प्राचीन इतिहास है, इसीसे यह भूमि पवित्र मानी गयी है। उस यज्ञकी समाप्तिपर वे समस्त देवतागण भी अपने अपने अशोंसे वहीं रहने लगे। इस प्रकार वहा परम पवित्र गयाक्षेत्र स्थापित हो गया।

गयाके मन्दिर

१ **विष्णुपदमन्दिर**—यह मन्दिर फल्गु और मधुश्रवा नदीके तटपर बना है। यहा विष्णुभगवान्के चरणोंका दर्शन होता है। इस मन्दिरको इन्दौरकी महारानी अहिल्याबाईने स० १७६६ में बनवाया था। इस धर्मनिष्ठ महारानीने अपने जीवनकालमें अनेकों धार्मिक कार्य किये, जिनके कारण आज भी समय-समयपर भारत-वासियोंको उसका स्मरण हो आता है।

ब्रह्मयोनि पर्वत—विष्णुपदमन्दिरसे अनुमान एक मील ब्रह्मयोनि पर्वत है। इस पर्वतपर चढ़नेके लिये महाराज इन्दोरने सीढ़ियाँ बनवा दी हैं। इस पर्वतपर दो गुफाएँ हैं। कहते हैं, इनको पार कर लेनेपर प्राणी जन्मबन्धनसे मुक्त हो जाता है। यह भी किंवदन्ती है कि इन गुफाओंको वर्णसंकर मनुष्य पार नहीं कर सकता।

रामशिला—यहाँसे दो मीलकी दूरीपर रामशिला पर्वत है। इसपर चढ़नेके लिये टिकारी-नरेशने सीढ़ियाँ बनवायी हैं। यह एक बड़े मन्दिरमें राम-लक्ष्मण और पातालेश्वर शिवके दर्शन होते हैं। इस पहाड़ीके नीचे रामकुण्ड नामक एक बड़ा सरोवर है यात्रीलोग यहाँ स्नान करके पिण्डदान करते हैं।

प्रेतशिला—रामशिलासे तीन मीलपर प्रेतशिला पर्वत है। प्रेतशिलाके समीप एक सरोवर है जिसको ब्रह्मकुण्ड कहते हैं। यहाँपर स्नान और पिण्डदानादि करके यात्री प्रेतशिला पर्वतपर चढ़ते हैं। पर्वतके शिखरपर पहुँचकर पिण्डदान करना पड़ता है। कहते हैं, यहाँ पिण्डदान करनेपर प्रेतयोनिमें भ्रमण करते हुए पितृगण उससे मुक्त हो जाते हैं। यहाँ एक मण्डप है जिसमें सुवर्णकी सी रेखाएँ हैं। पण्डेलोग इन्हें ब्रह्मरेखा बतलाते हैं।

सीताकुण्ड या रामगया—फल्गु नदीके उस पार पहाड़के नीचे एक मन्दिरमें सीताजी दशरथजीको पिण्डदान कर रही हैं और दशरथजी हाथ निकालकर उनका दिया हुआ पिण्ड स्वीकार कर रहे हैं। इस पुनीत क्षेत्रमें श्राद्ध, तर्पण एवं पिण्डदानका विशेष माहात्म्य है। इसके समीप और भी कई देवमन्दिर हैं, जिनमें

भगवान्‌की मूर्त्तिके दर्शन होते हैं। लङ्कासे लौटनेपर श्रीरामचन्द्रजीने भगवती सीताजीके साथ गयामें आकर श्राद्ध किया था। यह तीर्थ उसीका स्मारक है।

गयाशिर—विष्णुपादमन्दिरसे थोड़ी दूरीपर गयासुरका मस्तक है। यहाँ भी पिण्डदान करनेका विधान है। इसके आगे गयाकूप है, उसके निकट ही एक वटका वृक्ष है। तीर्थपुजारियोंका कथन है कि अकालमृत्युसे मरे हुए पितरोंके लिये इस कूपमें एक नारियल छोड़ देनेसे उनकी मुक्ति हो जाती है। यहाँ तीर्थपुजारी अपनी दक्षिणा लेता है।

सूर्यकुण्ड—गयामें यह पक्का और विशाल सरोवर सूर्यवंशी राजाओंका बनवाया हुआ बतलाया जाता है। इस कुण्डके निर्मल जलसे स्नान करनेपर कुष्ठ रोग शान्त हो जाता है, किन्तु इसका सेवन कुछ अधिक समयतक विधिवत् करना चाहिये। इनके सिवा यहाँ और भी बहुत-से मन्दिर और सरोवरादि हैं। यात्रियोंको उन सभीका दर्शन करना चाहिये। गयासे पचीस मीलकी दूरीपर कालेश्वरी पर्वत है। बहुत-से यात्री इतनी दूर नहीं पहुँच पाते। अज्ञातवासके समय कुछ काल पाण्डवोंने यहाँ भी निवास किया था। यहाँ अर्जुनके बाणोंसे निकला हुआ गंगानामका निर्मल कुण्ड अबतक अगाध जलसे भरा हुआ है।

तीर्थपुजारियोंका कहना है कि यहाँपर सैकड़ों प्राचीन स्मृति-चिह्न थे जो अब समयके प्रभावसे पृथ्वीमें नीचे दब गये हैं, तथा कुछ नष्ट भी हो गये हैं। यहाँ भोजनकी सब वस्तुएँ मिलती हैं।

ब्रह्मयोनि पर्वत—विष्णुपदमन्दिरसे अनुमान एक मील ब्रह्मयोनि पर्वत है। इस पर्वतपर चढ़नेके लिये महाराज इन्दौरने सीढ़ियाँ बनवायी हैं। इस पर्वतपर दो गुफाएँ हैं। कहते हैं, इन्हें पार कर लेनेपर प्राणी जन्मबन्धनसे मुक्त हो जाता है। यह किंवदन्ती है कि इन गुफाओंको रेंगकर मनुष्य पार नहीं कर सकता।

रामशिला—यहाँसे दो मीलकी दूरीपर रामशिला पर्वत है। इसपर चढ़नेके लिये टिकारी-नरेशने सीढ़ियाँ बनवायी हैं। यहाँ एक बड़े मन्दिरमें राम-लक्ष्मण और पातालेश्वर शिवके दर्शन होते हैं। इस पहाड़ीके नीचे रामकुण्ड नामक एक बड़ा सरोवर है। यात्रीलोग यहाँ स्नान करके पिण्डदान करते हैं।

प्रेतशिला—रामशिलासे तीन मीलपर प्रेतशिला पर्वत है। प्रेतशिलाके समीप एक सरोवर है जिसको ब्रह्मकुण्ड कहते हैं। यहाँपर स्नान और पिण्डदानादि करके यात्री प्रेतशिला पर्वतपर चढ़ते हैं। पर्वतके शिखरपर पहुँचकर पिण्डदान करना पड़ता है। कहते हैं, यहाँ पिण्डदान करनेपर प्रेतयोनिमें भ्रमण करते हुए पितृगण उससे मुक्त हो जाते हैं। यहाँ एक मण्डप है जिसमें सुवर्णकी सी रेखाएँ हैं। पण्डेलोग इन्हें ब्रह्मरेखा बतलाते हैं।

सीताकुण्ड या रामगया—फल्गु नदीके उस पार पहाड़ीके नीचे एक मन्दिरमें सीताजी दशरथजीको पिण्डदान कर रही हैं और दशरथजी हाथ निकालकर उनका दिया हुआ पिण्ड स्वीकार कर रहे हैं। इस पुनीत क्षेत्रमें श्राद्ध, तर्पण एवं पिण्डदानका विशेष माहात्म्य है। इसके समीप और भी कई देवमन्दिर हैं, जिनमें

भगवान्की मूर्तिके दर्शन होते हैं। लङ्कासे लौटनेपर श्रीरामचन्द्रजीने भगवती सीताजीके साथ गयामें आकर श्राद्ध किया था। यह तीर्थ उसीका स्मारक है।

गयाशिर—विष्णुपादमन्दिरसे थोड़ी दूरीपर गयासुरका मस्तक है। यहाँ भी पिण्डदान करनेका विधान है। इसके आगे गयाकूप है, उसके निकट ही एक वटका वृक्ष है। तीर्थपुजारियोंका कथन है कि अकालमृत्युसे मरे हुए पितरोंके लिये इस कूपमें एक नारियल छोड़ देनेसे उनकी मुक्ति हो जाती है। यहाँ तीर्थपुजारी अपना दक्षिणा लेता है।

सूर्यकुण्ड—गयामें यह पक्का और विशाल सरोवर सूर्यवंशी राजाओंका बनवाया हुआ बतलाया जाता है। इस कुण्डके निर्मल जलसे स्नान करनेपर कुष्ठ रोग शान्त हो जाता है, किन्तु इसका सेवन कुछ अधिक समयतक विधिवत् करना चाहिये। इनके सिवा यहाँ और भी बहुत-से मन्दिर और सरोवरादि हैं। यात्रियोंको उन सभीका दर्शन करना चाहिये। गयामें पचीस मीलकी दूरीपर कालेश्वरी पर्वत है। बहुत से यात्री इतनी दूर नहीं पहुँच पाते। अज्ञातवासके समय कुछ काल पाण्डवोंने यहाँ भी निवास किया था। यहाँ अर्जुनके बाणोंसे निकला हुआ गङ्गाजलका निर्मल कुण्ड अबतक अगाध जलसे भरा हुआ है।

तीर्थपुजारियोंका कहना है कि यहाँपर सैकड़ों प्राचीन स्मृति-चिह्न थे जो अब समयके प्रभावसे पृथ्वीमें नीचे दब गये हैं, तथा कुछ [illegible] गये हैं। यहाँ भोजनकी सब वस्तुएँ मिलती हैं।

इस जगह संस्कृत पाठशाला, औषधालय, अन्नक्षेत्र, सरकारी अस्पताल, कचहरी, पोस्ट आफिस और तारघर आदि सभी आवश्यकीय संस्थाएँ हैं । यहाँका जलवायु भी साधारणतया अच्छा है ।

माहात्म्य—याज्ञवल्क्यस्मृतिमें लिखा है कि जो प्राणी गया कर आते हैं उनकी दस आगेकी और दस पीछेकी पीढ़ियोंका उद्धार हो जाता है तथा अक्षयवटके नीचे पिण्डदान करनेपर मनुष्यको अक्षय सुख और शान्तिकी प्राप्ति होती है । पितृगण ऐसी इच्छा किया करते हैं कि हमारे कुलमें कब ऐसा कोई सुपुत्र होगा जो गयामें आकर श्राद्ध कर हमारा उद्धार करेगा । गयाश्राद्धका माहात्म्य स्मृतियोंने मुक्तकण्ठसे गाया है ।

बुद्धगया

गयासे सात मीलकी दूरीपर बुद्धगया है। गयासे यहाँतक पक्की सड़क बनी हुई है और आने-जानेके लिये सवारियाँ भी मिलती हैं। पहले यह तीर्थस्थान बौद्धोंके हाथमें था, जब स्वामी शंकराचार्य-जीने दिग्विजय की तबसे अबतक यहाँकी गद्दी उनके ही मतानुयायी महन्तोंके हाथमें है। यह स्थान बौद्ध और वैदिकधर्मावलम्बी दोनों-हीके लिये मान्य है। दोनों ही भक्तिपूर्वक यहाँकी यात्रा करते हैं। यात्रियोंके ठहरनेके लिये यहाँ एक धर्मशाला है।

इस स्थानसे भगवान् बुद्धके परम पवित्र जीवनका सम्बन्ध है। उनकी जीवनी न्यूनाधिकरूपमें प्रायः सभी पठित भारतवासियोंको विदित है, हम भी यहाँ उसका संक्षेपमें उल्लेख किये देते हैं। भगवान् बुद्ध जिनका पूर्वनाम सिद्धार्थ था, महाराज शुद्धोदन-के एकमात्र पुत्र थे। महाराजने इन्हें वृद्धावस्थामें पाया था। इसलिये उनका इनपर अत्यन्त स्नेह था। ज्योतिषियोंसे उन्हें यह विदित हो गया था कि एक दिन सिद्धार्थ अत्यन्त विरक्त महात्मा हो जायँगे। किन्तु महाराज शुद्धोदनकी सारी आशाओंके एकमात्र आधार तो राजकुमार सिद्धार्थ ही थे, इसलिये उन्होंने उन्हें ऐसी

परिस्थितिमें रक्खा कि जिससे उनके सामने संसारका दुःखमय चित्र आने ही न पावे । वे अति-से-अति विलासिता और सुख-समृद्धिमें पलकर बड़े हुए । अपने अनुरूप सुन्दरी राजकन्यासे परिणय हुआ और एक पुत्ररत्नका भी जन्म हुआ । किन्तु विधिका विधान किसीसे टाले नहीं टलता, सिद्धार्थके वैराग्यके भी पूर्व हेतु उपस्थित हो ही गये और वे इस नाशवान् संसारसे ऊबकर एक दिन अपनी पतिप्राणा प्रेयसी और प्राणप्रिय पुत्रको सोते छोड़कर वनको चले गये । उनके इस राज्यत्यागने उन्हें एक दिन निखिल विश्वके साम्राज्यपर अभिषिक्त कर दिया और वे एक क्षुद्र राज्यके अधिवासियोंके ऊपर नहीं, किंतु आभिजात्यसे उठकर सम्पूर्ण सृष्टिके आध्यात्मिक अधीश्वर हो गये ।

राज्यत्यागके पश्चात् सिद्धार्थ, जो अब गौतम कहलाते थे कई जगह विद्याध्ययन करते रहे, परंतु इससे उन्हें शान्ति न मिली। अन्तमें उन्होंने यहीं निरञ्जना नदीके तीरपर घोर तपस्या की और एक रात्रिको अश्वत्थवृक्षके नीचे सिद्धिलाभकर बुद्धत्व प्राप्त किया । इस प्रकार, यह वह स्थान है जहाँ जगद्गुरु भगवान् बुद्धको बुद्धत्व प्राप्त हुआ था । इसीसे इसके महत्त्वका अनुमान किया जा सकता है । भगवान् बुद्धने अपने समयमें जो शान्तिका स्रोत बहाया था उसकी मन्द तरंगें आज भी हमारे हृदयको सींच देती हैं । बुद्धने स्त्री, पुत्र और राज्यादिके मोहको त्यागकर जो उपदेश दिया था वह आज भी हमारे कर्णकुहरोंमें गुञ्जायमान है । जिस स्थानपर भगवान् बुद्धने तप किया था वह अब भी वहीं चला नहीं गया है, किन्तु अज्ञानतिमिरावृत चक्षुओंमें ज्ञानाञ्जन लगाकर राग-द्वेषमें

प्रसिन हुए लोगोंको शुद्ध आत्माका दिव्य उपदेश देनेवाले महात्मा बुद्ध वहाँ नहीं हैं। किन्तु उनका पार्थिव शरीर भले ही वहाँ न हो, वे तो प्रलयपर्यन्त चिरजीवी ही हैं।

यहाँ एक विशाल मन्दिर है। पचास वर्ष पहले इस मन्दिरके केवल सुवर्णकलशका ही दर्शन हो पाता था, क्योंकि यह प्राय भूमिके गर्भमें दब चुका था। सन् १८७७ ई० में इसे बौद्धोंने गवर्नमेण्टकी सहायता लेकर पृथ्वीसे निकाला और इसका जीर्णोद्धार कराया है। यह मन्दिर महाराज अशोकने बनवाया था। दो हजार वर्ष पुराना होनेपर भी यह अभी कहींसे भी टूटा फूटा नहीं है। मन्दिरकी परिक्रमा नीचे और दो मंजिल ऊपर भी है। इसमें जो भगवान् बुद्धकी मूर्ति है उसपर सोनेका मुलम्मा किया हुआ है। भगवान् बुद्धकी सभी मूर्त्तियोंमें शान्तभावका प्राधान्य रहता है।

मन्दिरके पीछे एक पीपलका वृक्ष है। उसके निकट भगवान् बुद्धके तपस्या करनेका स्थान है। कहते हैं, यह वही वृक्ष है जिसके नीचे भगवान् बुद्धको ज्ञान प्राप्त हुआ था।

जगन्नाथमन्दिर–बुद्धगयामें अहिल्याबाईका बनवाया हुआ एक जगन्नाथजीका मन्दिर है। इसमें राम-सीता और लक्ष्मणजीके भी दर्शन होते हैं। यहाँ बुद्धगयाके महन्तका विशाल भवन है। उसके बगीचे और भण्डारगृह आदि देखनेपर किसी बड़े यज्ञकी इकट्ठी की हुई सामग्रीका स्मरण हो आता है। यहाँ ब्रह्मा, चीन और जापान आदि देशोंसे बहुत-से बौद्ध-धर्मानुयायी सज्जन भक्तिपूर्वक आकर अपनी श्रद्धाञ्जलि समर्पण करते हैं। यहाँकी वार्षिक आय

एक लाख रुपयेके लगभग है। यहाँ बुद्धकुण्ड और निरंजना नदीके तटपर पिण्डदान किया जाता है।

गुफाएँ गयासे अनुमान बारह मीलकी दूरीपर अति प्राचीन बौद्ध गुफाएँ हैं। जिस महाराज अशोकका धर्म राज्यकालमें प्रचार था। उस समय बहुत-से बौद्धभिक्षु इसी प्रकारकी गुफाओंमें तप किया करते थे। ये गुफाएँ पचीस हाथतक लम्बी और ग्यारह हाथतक चौड़ी हैं।

भगवान् बुद्धने भारतवर्षमें चालीस वर्षतक सब ओर भ्रमण करके अहिंसा व्रतकी शिक्षा दी थी। उनका निर्वाण अस्सी वर्षकी आयुमें हुआ था। आज बर्मा, सीलोन, चीन, जापान आदि देशोंके अधिकांश अधिवासी बौद्धधर्मावलम्बी हैं।

बुद्धगयाका बाजार छोटा है। यहाँ फलादिक छोड़कर भोजनकी अन्य सब सामग्री मिल जाती है। गयाकी अपेक्षा यहाँका जलवायु उत्तम माना जाता है। इस जगह महन्तकी ओरसे एक संस्कृतपाठशाला और अन्नक्षेत्र खुले हुए हैं। तथा डाकखाना भी है। यह स्थान वास्तवमें वैराग्य उत्पन्न करनेवाला है।

राजगृह

यात्रीलोग गयासे B B L रेलवेद्वारा बख्तियारपुर होकर राजगृह जाते हैं। आजकल इसे राजगिर कहते हैं। यह बौद्ध, जैन और सनातनी तीनों मतवालोंका पुराना तीर्थस्थान है। यह गयासे १०३ मील है। वहांपर एक धर्मशाला है और तीर्थगुरुओंके भी स्थान हैं। राजगिर जरासन्धकी राजधानी थी, जिसको भीमसेनने मल्लयुद्धमें भगवान् कृष्णके संकेतसे मारा था। वहां उस समयके प्राचीन खण्डहर अब भी दृष्टिगोचर होते हैं।

यहां आकर यात्रालोग सरस्वतीनदीमें स्नान करते हैं। यह पुनीत नदी वैभारपर्वतसे निकली है। सरस्वतीका जल गंगाजीके समान बड़ा उज्ज्वल है। ब्रह्मकुण्डके निकट सरस्वतीके दोनों तटोंपर पक्के घाट बने हुए हैं। यात्रीलोग पहले यहां स्नान करते हैं। इसके पश्चात् वे सात कुण्डोंका दर्शन करते हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं—

मार्कण्डेयकुण्ड, व्यासकुण्ड, गंगा-यमुनाकुण्ड, ब्रह्मकुण्ड, व्यासकुण्ड तथा गंगा-यमुनाकुण्डमें सप्तर्षिधारा और काशीधारा हैं। इनमें एक धारा गरम जलकी है और दूसरा शीतल जलकी, बाकी सब कुण्डोंमें उष्ण जलकी धाराएँ हैं। सप्तर्षिधारामें दक्षिण-पश्चिमकी ओरसे सात ऋषियोंके नामपर सात स्रोत निकलते हैं। यहाँपर यात्री बड़ी श्रद्धासे स्नान करते हैं और ऊपर मन्दिरमें सप्तर्षियोंका पूजन करते हैं।

राजगृहमें और भी कई पवित्र कुण्ड हैं। उनके नाम इस प्रकार बताये जाते हैं—[illegible] [illegible], [illegible] [illegible] नाथ, सूर्यकुण्ड, चन्द्रकुण्ड, रामकुण्ड, [illegible], त्रिपुधारा, [illegible] सरस्वतीधारा इत्यादि। इन सबके स्नान और जलपानका अलग अलग माहात्म्य है। [illegible] [illegible] किया गया है।

यहाँके निवासी सरस्वतीनदीको यह नाम न पुकारते हैं। [illegible] [illegible] सरस्वतीका नाम [illegible] है। [illegible] गोपाल आदि यहाँके अनेक पुजारी [illegible] हैं। [illegible] [illegible] पूजनकी सामग्री और [illegible] [illegible] [illegible] साथ रहते हैं। [illegible] [illegible] [illegible] है कि पूरा [illegible] [illegible] [illegible] विधिसे [illegible] करें।

यहाँसे कुछ आगे इसका नाम [illegible] नहीं है। इस स्थान-पर भी जैन लोग भाव रखते हैं। यहाँ स्नान करनेके लिये घाट हैं और इस स्थानपर भी यात्रीगण स्नान पुण्य करते हैं। इसी स्थान पर जैनधर्मके प्रवर्तक आचार्य महावीरने युधिष्ठिर सं० २४४५ में [illegible] लेकर 'अहिंसा परमो धर्मः' का महान् उपदेश दिया था और यहींपर उनको निर्वाण भी प्राप्त हुआ था।

सोनभण्डारगुफा—यह गुफा बौद्धमतावलम्बियोंके लिये बड़ा श्रद्धाका स्थान है। राजगिरमें इस गुफाके दर्शनार्थ चीन और जापानतकके यात्री आते हैं, यहाँ एक शिलालेख है किन्तु वह साफ पढ़नेमें नहीं आता। इस स्थानपर बुद्धभगवान्ने बड़ा उग्र तप किया

था। इसे देखनेके लिये बौद्धोंके अतिरिक्त अन्य भारतवासी भी बडी श्रद्धासे आते है।

सरस्वतीनदीमें गोदावरी नामका एक धारा आकर मिली है, पण्डेलोग इसका नाम गोदावरी-सरस्वती-सगम बतलाते हैं। यात्री लोग इस सगमपर भी भक्तिपूर्वक स्नान करते हैं।

वैभारपर्वतपर सोमनाथ और सिद्धनाथ ये दो शिवलिंग हैं। ये मंदिर प्राचीनकालके बने हुए विदित होते हैं। बताया जाता है कि इनका निर्माण महाराज जनमेजयके समयमें हुआ था। इस स्थानतक आनेमें चढाई अधिक पडती है। यहाँ श्रावण और अधिक मासके दिनोंमें हजारों यात्रियोंकी भीड होती है और सैकडों भक्तजन यहाँ एक महीनातक रहकर शिवजीका पूजन करते हैं।

राजगृहमें पाँच पहाडिया है। इन सबकी ऊँचाई एक हजार फुटके अनुमान है। इन पहाड़ियोंपर जैन और बौद्धमतवालोंके मंदिर हैं। महाभारतमे लिखा है कि महाराज जरासंधकी राजधानी इन पाँचों पहाडियोंके बीचमें थी। उस समयके किलेके ध्वसावशेष (खण्डहर) इस समय भी बाणगगाके उस पार देखे जाते हैं। लोग उसे जरासंधका बाग कहकर पुकारते हैं।

इसी पर्वतपर महर्षि गौतमका भी निवास था। उनका स्थान यहाँके तीर्थपुजारी अबतक यात्रियोंको दिखलाते हैं। यहाँका प्राकृतिक दृश्य देखनेके योग्य है और जलवायु भी उत्तम है। यहाँ संस्कृत पाठशाला, धर्मशाला और डाकखाना भी है तथा भोजनका प्राय सब सामान मिल जाता है। महाभारतके वनपर्वमें यहाँकी यात्राका बडा माहात्म्य लिखा है।

वैद्यनाथ

राजगृहसे वैद्यनाथ जानेके लिये यात्रियोंको पटना होकर ईस्ट इण्डियन रेल्वेद्वारा जसीडीह जक्शनपर उतरना चाहिये। जसीडीहसे दूसरा स्टेशन वैद्यनाथधामका है। वैद्यनाथको राजगृहकुण्ड स्टेशनसे भी एक रास्ता गया है। यात्री अपनी सुविधा देखकर किसी भी मार्गसे यात्रा कर सकते हैं। राजगृहकुण्डसे वैद्यनाथधाम १८७ मील है।

जसीडीह जंकशन और वैद्यनाथधामके स्टेशनपर यात्रियों को तीर्थपुजारी मिल जाते हैं। स्टेशनके निकट ही रायबहादुर सेठ हजारीमल दुधवेवालेकी धर्मशाला है। दूसरी धर्मशाला सर हरीराम गोयनकाकी है। यहां ठहरनेमें यात्रियोंको सुविधा रहती है। इसके सिवा बहुत से पण्डोंके स्थान भी हैं। धर्मशालाओंपर अधिक भीड होनेपर उन्हीं स्थानोंमें ठहरना होता है।

यह नाथस्थान वैद्यनाथ और देवघर दोनों ही नामोंसे प्रसिद्ध है। देवघर रेल्वे स्टेशनसे अनुमान डेढ मीलकी दूरीपर वैद्यनाथ शिवका प्रसिद्ध मन्दिर है। इस मन्दिरके निकट और भी बहुत से मन्दिर हैं। इसके चारों ओर कोट बना हुआ है और सामने बडा आंगन है, जिसमें पत्थरका फर्श है। इसके पास ही पार्वतीजीका मन्दिर है। वैसे तो यहाँ हर महीने भारतवर्षके कोने कोनेसे यात्री आया ही करते हैं, किन्तु शिवरात्रिके अवसरपर तो इतनी भीड होती है कि भगवान् शिवके दर्शन भी दुर्लभ हो जाते हैं। यह

शिवलिंग ग्यारह अंगुल ऊँचा है और इसके मस्तकपर रावणके अँगूठेका चिह्न बना हुआ है। उस अवसरपर यहाँ हजारों काँवरोंवाले भगवान् वैद्यनाथको गंगाजल समर्पण करनेके लिये पहुँचते हैं तथा लाखों यात्री भी अपनी सुविधाके अनुसार गंगोत्तरी, हृषीकेश, हरिद्वार, प्रयाग आदि स्थानोंसे गंगाजल लेकर यहाँ आते हैं। इस अवसरपर यहाँ गंगाजल चढ़ानेका ही शास्त्रमें अधिक माहात्म्य बतलाया है। यदि किसी यात्रीके पास गंगाजल नहीं होता तो उसकी दक्षिणा देनेपर यहाँ भी मिल सकता है। यहाँ शिवगंगा नामका एक सरोवर है। यात्रीलोग उसमें स्नान करके शिवजीकी विधिवत् पूजा-अर्चा करते हैं किन्तु शिवरात्रिके अवसरपर तो केवल फल और बिल्वपत्रोंसे ही शिवलिंग सर्वथा छिप जाता है। यदि तीर्थपुजारी सावधानीसे पुष्पादिकोंको अलग न करते रहें तो हजारों कोसोंसे आये हुए यात्रियोंको शिवजीका दर्शन ही न हो। शिवजीका दर्शन कर यात्रीलोग शिवस्तोत्रोंद्वारा उस स्थानको गुंजायमान कर देते हैं।

श्रीवैद्यनाथका दर्शन कर लेनेपर अन्य मंदिरोंकी झाँकी करते हुए यात्रालोग भगवती जगदम्बाका दर्शन करते हैं। काशीश्वरी अन्नपूर्णाजीकी भाँति यहाँ भी दर्शनार्थियोंकी बड़ी भीड़ रहती है।

यहाँके महादेवजी रावणेश्वर और वैद्यनाथ इन दो नामोंसे पुकारे जाते हैं। ये द्वादश ज्योतिर्लिङ्गोंमेंसे एक हैं। द्वादश ज्योतिर्लिङ्गोंकी नामावली इस प्रकार है—सौराष्ट्र देशमें सोमनाथ, श्रीशैलपर मल्लिकार्जुन, उज्जैनमें महाकालेश्वर, ओंकारपुरमें अमलेश्वर;

उत्तराखण्डमें केदारनाथ, डाकिनीमें भीमशंकर, काशीमें विश्वेश्वर या विश्वनाथ, पञ्चवटी नासिकमें गोदावरीके तटपर त्र्यम्बकेश्वर, देवघरमें वैद्यनाथ, दारुकावनमें नागेश और सेतुबन्धमें रामेश्वर।

इन द्वादश ज्योतिर्लिङ्गोंके दर्शन करनेवाले यात्रियोंको मृत्युके पश्चात् कैलाशमें स्थान मिलता है, जो प्राणियोंका अति दुर्लभ है।

इसपर बस्तीके निकट बैजू भक्तका मन्दिर है। बैजू भक्तकी आख्यायिका थोड़ा गोकर्णनाथके प्रसंगमें लिखा जा चुकी है। कहते हैं, बैजू भक्तके कारण ही इनका नाम वैद्यनाथ हुआ है। इस विषयमें पुराणोंमें एक दूसरी गाथा भी है। एक बार एक भयंकर रोगके कारण प्रजा नष्ट होने लगी, यह देखकर ब्रह्माजीको बहुत चिन्ता हुई। उन्होंने शिवजीके पास जाकर उनकी बहुत स्तुति की, तब उनकी स्तुतिसे प्रसन्न होकर भगवान् शंकरने उस रोगको निवृत्त कर दिया, इससे सर्वत्र आनन्द मनाया जाने लगा। तदनन्तर समस्त देवगण मिलकर श्रीमहादेवजीसे दीर्घजीवनका उपाय पूछनेके लिये गये। सबको अपने समीप आये देखकर श्रीशिवजीने उनके आनेका कारण पूछा। उन्होंने कहा, 'भगवन्! आप हमें अमर होनेका उपाय बतलाइये, जिससे हम अधिक दिन जीवित रहकर आपकी भक्ति कर सकें।' श्रीमहादेवजीने कहा, 'रोग पापोंका परिणाम है और पाप नाश करनेमें गंगाजलसे बढ़कर और कोई वस्तु नहीं है, अतः निरन्तर गंगाजल सेवन करनेसे मनुष्य रोगमुक्त रह सकता है और उसे अक्षय अमरत्व भी प्राप्त हो सकता है। इसके सिवा जो पुरुष मेरे इस स्थानपर निवास करेगा उसके भी कुष्ठादि समस्त रोग निवृत्त हो जायँगे।' इस प्रकार

नीरोगताका सर्वश्रेष्ठ साधन बतानेके कारण देवताओंने उनका नाम वैद्यनाथ रक्खा।

इसीसे पुरीकी भाँति वैद्यनाथजीमें भी कोढीलोग बहुत रहते हैं। यहाँके जलवायुमें ऐसा गुण बतलाते हैं कि कुछ कालके निरन्तर सेवन करनेसे कुष्ठरोग शान्त हो जाता है। यहाँ जलवायुपरिवर्तनके लिये कलकत्ता, बम्बई आदि बड़े बड़े नगरोंसे भी बहुत-से धनी साहूकार एवं राजे महाराजेतक आते हैं। इसीसे यहाँ कितने ही धनी पुरुषोंने अपने निवासके लिये सुन्दर भवन बनवा लिये हैं।

इस समय प्राचीन कालकी भाँति वैद्यनाथ कोरा वनखण्ड ही नहीं रहा है। अब तो यहाँ एक सुन्दर नगर बस गया है। यहाँका दही चिउरा बहुत प्रसिद्ध है। वैद्यनाथधाम गिद्धौर महाराजकी जमादारीमें है। यहाँ सब प्रकारका भोजनका सामान मिल जाता है। फलादिका भी अभाव नहीं है। यहाँ गुरुकुल, संस्कृतपाठशाला, पुस्तकालय, अन्नक्षेत्र आदि कई संस्थाएँ हैं। जलवायुके लिये तो यह प्रसिद्ध ही है। यहाँकी छोटी-छोटी पहाड़ियोंका दृश्य, जो हरे-भरे वृक्ष, लता-गुल्मादिके कारण अत्यन्त शोभायमान है, मनको बहुत प्रफुल्लित करता है।

शिवपुराणमें लिखा है कि ज्योतिर्लिङ्गका दर्शन और पूजन करनेवाला पुरुष दूसरे जन्ममें विद्वान् ब्राह्मणके यहाँ जन्म लेता है और उसके पश्चात् मुक्ति प्राप्त करता है। ज्योतिर्लिङ्गके दर्शनमात्रसे भागीरथी और गोदावरीके स्नानका फल मिलता है तथा उसका प्रसाद पानेसे आत्मज्ञानकी प्राप्ति होती है।

कालीघाट

श्रीवैद्यनाथधामसे कालीजीका दर्शन करनेके लिये तीर्थयात्री कलकत्ता जाते हैं। वैद्यनाथसे हावड़ा २०० मीलसे कुछ अधिक दूर है। यह ई० आर० आर० का प्रधान स्टेशन है। कलकत्ते आनेवाले यात्री इसी स्टेशनपर उतरते हैं। कलकत्ता भारतवर्षके सबसे बड़े नगरोंमें है। यहाँ हर समय सब ओरके यात्री आते-जाते रहते हैं। यहाँ आकर वे धर्मशालाओं होटलों अथवा अपने सम्बन्धियोंके यहाँ ठहरते हैं। कलकत्तेमें प्रधान प्रधान धर्मशालाएँ इस प्रकार हैं।

१—हावड़ा स्टेशनके समीप पं० शिवविनायक मिश्रकी धर्मशाला, २—नं० ६ मल्लिकस्ट्रीटमें राय सूर्यमलकी धर्मशाला, ३—नं० १६९ हरिसनरोडमें सेठ बाबूलालकी धर्मशाला।

इनके अतिरिक्त और भी कई छोटी-बड़ी धर्मशालाएँ हैं। इनमें प्रत्येक यात्री अधिक से अधिक तीन दिन ठहर सकता है। अधिक रहना हो तो धर्मशालाके मालिकसे आज्ञा लेनी होती है।

कालीघाट—यह भगवती कालीदेवीका जगत्प्रसिद्ध मन्दिर स्टेशनसे पाँच मीलकी दूरीपर है। मन्दिरके निकट पहले गंगाजी बहती थीं, किन्तु अब उनकी केवल एक धारा बहती है। उस धाराका जल भगवतीके कुण्डमें आता है। यह सरोवर पक्का बना हुआ है। यात्रालोग गंगाजीमें अथवा उस कुण्डमें स्नानादि करके भगवतीके दर्शनोंके लिये जाते हैं।

यहाँपर पुष्पमालाएँ लिये हुए बहुत-से माली रहते हैं तथा प्रसादके लिये भी कई दूकानें बनी हुई हैं। यहाँका प्रसाद मुख्यतया हरा नारियल ही होता है। बंगाली मिठाई भी भगवतीको भेंट की जाती है। यह पवित्र स्थान भगवतीके इक्यावन सिद्ध पीठोंमें माना जाता है। प्रतिवर्ष आश्विन और चैत्रमासके नवरात्रोंमें यहाँ यात्रियोंकी इतनी भीड़ होती है कि दर्शन मिलना कठिन हो जाता है।

भगवतीके मन्दिरके सामने एक सभामण्डप बना हुआ है। सन् १८०७ ई० में मन्दिरके पण्डालोगोंने इसका जीर्णोद्धार कराया था। यहाँ भगवतीकी कृष्णवर्ण चतुर्भुजी एवं त्रिनयनी मूर्ति है। उनकी जिह्वा बाहर निकली हुई है। एक हाथमें तलवार है और दूसरेमें मधुकैटभ दैत्यका मस्तक तथा शेष दो हाथोंसे वे अपने भक्तोंको अभयदान देती हैं। उनके गलेमें नरमुण्डोंकी माला है और वे देवाधिदेव श्रीमहादेवजीके वक्षःस्थलपर अपना चरण रक्खे हुए खड़ी हैं।

इस सिद्धपीठमें पाठ-पुरश्चरणादि हुआ ही करते हैं। यहाँ बहुत-से साधु-संन्यासी भी निवास करते हैं। जगन्नाथजीकी भाँति

यहाँपर भी माँगनेवालोंकी संख्या इतना अधिक है कि यात्री दुखी-से हो जाते हैं। इस स्थानकी उत्पत्तिके विषयमें यह प्रसिद्ध है कि जब दक्ष प्रजापतिके अपमानसे क्षुब्ध होकर रुद्राणी भगवती सती यज्ञकुण्डमें कूद पड़ी तथा यह समाचार भगवान् शंकरतक पहुँचा तो वे बड़े शोकाकुल हुए और प्राणप्रिया सतीके शवको कन्धेपर डालकर उन्मत्तके समान घूमने लगे, उस समय भगवान् शिवके क्षोभसे ब्रह्माण्डको प्रलयकालसे बचानेके लिये विष्णु भगवान्ने सुदर्शन चक्रद्वारा सतीके अंगोंको छिन्न भिन्न कर दिया। सतीके अंग जिस जिस स्थानपर गिरे वहीं सिद्धपीठ मान गया। कालीघाटमें सतीकी अंगुलियाँ गिरी थीं उसी स्थानपर वर्तमान भगवतीका मन्दिर बना हुआ है।

पाठकोंने श्रीरामकृष्ण परमहंसका नाम सुना होगा। आप स्वामी विवेकानन्दके गुरु थे। परमहंसदेवके उपदेशका स्वामी विवेकानन्दपर कितना प्रभाव पड़ा यह किसीसे छिपा नहीं है। स्वामी विवेकानन्दने अमेरिकामें दस हजार नास्तिकोंको पक्का आस्तिक बनाया और भारतवर्षके वेदान्तसिद्धान्तका झण्डा फहरा दिया। यह सब शक्ति उन्हें रामकृष्णदेवके उपदेशोंसे ही प्राप्त हुई थी। ये परमहंसदेव कालीके ही उपासक थे। इन्हें भगवतीने प्रत्यक्ष दर्शन दिये थे। इनके भक्तिमय चरित्र वर्तमान जन समाजके सच्चे पथ-प्रदर्शक हैं। बंगालमें नवरात्रके अवसरपर भक्तजन घर घरमें भगवतीकी प्रतिमा बनाकर उत्सव मनाते हैं और दशमीके दिन बड़े समारोहके साथ उस प्रतिमाका गंगाजीमें विसर्जन कर देते हैं।

कालीमन्दिरके अतिरिक्त कलकत्तेमें और भी बहुत-से दर्शनीय स्थान हैं, उनका संक्षेपमें परिचय दिया जाता है।

दक्षिणेश्वर मन्दिर—यह सुविशाल मन्दिर कलकत्तेसे प्रायः १० मील उत्तरकी ओर गंगाजीके तटपर स्थित है। परमहंस श्रीरामकृष्णदेव यहाँ रहा करते थे। इसकी रचना बहुत सुन्दर है।

चिड़ियाखाना—इस स्थानमें तरह-तरहके जीवित पशु पक्षियोंके रहनेकी व्यवस्था की गयी है। रंग बिरंगे पक्षियोंके झुण्ड और भाँति भाँतिके पशु उनकी प्रकृतिके अनुसार स्थान बनाकर पाले गये हैं। जलमें रहनेवाले मीन मकर आदि जो साधारणतया कभी देखनेमें नहीं आते यहाँ देखनेको मिलते हैं। वनमें रहनेवाले हिंसक जीव जैसे व्याघ्र भेड़िये, चीते, तरक्षु नीलगाय, गैंडे, भालू, खरगोश और शुतुर्मुर्ग आदि अपनी-अपनी प्रकृतिके अनुकूल स्थान और सुविधाओंमें रखकर पाले गये हैं। यह चिड़ियाखाना अवश्य देखनेके योग्य है।

अजायबघर—इस स्थानमें जल और स्थलके अद्भुत धातु और वनस्पति आदि बनावटी और असली रूपमें लाकर संगृहीत किये गये हैं। यहाँ देश-देशान्तरके फल-फूल, मृतक मनुष्य और नाना प्रकारके कीट पतंगादि भी रक्खे गये हैं। इनके सिवा यहाँ सब प्रकारके प्राचीन कलाकौशलके नमूनोंका भी अच्छा संग्रह है। इस स्थानमें ऐसी बहुत-सी चीजें देखनेमें आती हैं जिन्हें कभी देखा या सुना नहीं गया। कालीघाटकी यात्रा करनेवाले यात्रियोंको यह संग्रहालय अवश्य देखना चाहिये।

टकसालगृह—यहाँ गवर्नमेण्टकी ओरसे सिक्के ढाले जाते हैं।

हावड़ाब्रिज—यह गङ्गाजीका पुल जो नये ढंगका बना हुआ है। इसे आवश्यकता होनेपर खोला भी जा सकता है। सप्ताहमें जिस समय पुल खुलता है उस समय हावड़ा और कलकत्ताके बीचमें अग्निबोटद्वारा आना जाना होता है। यात्रीगण बिना कोई किराया दिये अग्निबोटसे आ-जा सकते हैं। कहते हैं कि पहले इस अग्निबोटका किराया यात्रियोंसे ले लिया जाता था, उससे अब इतना धन जमा हो गया है कि बिना मूल्य ही यह कार्य चल सकता है।

धनी पुरुषोंके लिये तो कलकत्ता स्वर्ग है। यहां कोई भी वस्तु अप्राप्य नहीं है। किन्तु निर्धनोंके लिये यह रौरव नरकसे कम नहीं है। उनके लिये न कोई रहनेका स्थान है और न कोई पेट भरनेयोग्य सस्ती और पुष्टिकारक वस्तु ही है। यहांकी जलवायु मध्यम कोटिकी है। यहां प्रत्येक बाजार और मुहल्लेमें तारघर, डाकखाना, औषधालय आदि मिल सकते हैं। अन्य स्थानोंकी गोशालाओंको यहाँकी पिंजरापोल (गौशाला) का अनुकरण करना चाहिये। इनके सिवा यहाँ यूनिवर्सिटी, गवर्नमेण्ट हाउस, कई प्रकारके कालेज और अनाथालय, चिकित्सालय, पशु महाशय-की चिकित्साशाला आदि और भी बहुत से दर्शनीय स्थान हैं। गङ्गाजी-के किनारे यहाँ कई पक्के घाट बने हुए हैं जिनपर प्रातःकाल हजारों नर-नारियोंकी भीड़ देखनेमें आती है। घाटोंके ऊपर उड़िया पुजारियोंने भजन पूजनके लिये अपने-अपने स्थान बना रखे हैं, जहाँ स्नान करनेवाले पुरुष सुविधापूर्वक नित्यकर्मसे निवृत्त हो सकते हैं।

तारकेश्वर

बगालमें तारकेश्वर स्थानको लोग बडा श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते हैं। आस-पासके भक्तजन, जो प्रदोषव्रत रखते हैं, प्राय तारकेश्वर जाकर ही शिवपूजन करते हैं। कलकत्तेसे सैकडों मनुष्य नियप्रति तारकेश्वर जाते हैं। यह पवित्र स्थान हुगली जिलेमें है। तथा इस मन्दिरके सञ्चालनका भार यहाँके मठाधीशके हाथमें है।

हावडासे तारकेश्वर स्टेशन ३६ मील है। यहाँ दो धर्मशालाएँ हैं। एक शतीशचन्द्र गिरिकी और दूसरी विपिनबिहारी सेनकी। तारकेश्वरके मोदी भी जो पूजनका सारा सामान बेचते हैं, अपने घरोंमें यात्रियोंके ठहरनेकी व्यवस्था कर देते हैं। तारकेश्वरके विषयमें प्राचीन कथा तो बहुत बडी है, केवल इतना जान लेना चाहिये कि ताड़के वृक्षमें प्रकट होनेके कारण यहाँके महादेवजी तारकेश्वर कहे जाते हैं। पहले इस स्थानको लोग सिहलद्वीप कहकर पुकारते थे।

दूधसागरपोखरा—यात्रीलोग इस सरोवरमें स्नान करके शिवजीके दर्शनार्थ जाते हैं। यहाँका मोदी ही यात्रियोंको पूजनकी सामग्री देता है। शिवमन्दिरके जगमोहनमें कितने ही व्यक्ति अपने रोगकी शान्तिकी कामनासे पड़े रहते हैं। यहाँ ऐसी प्रसिद्धि है कि तारकेश्वरमें कुछ समय निवास करनेसे रोगी बिना ही औषधके केवल भगवान् शिवकी कृपासे ही रोगमुक्त हो जाते हैं। इस स्थानके विषयमें ऐसा प्रसिद्ध है कि यहाँ तारकेश्वरका रामरन नामका एक ग्वाला रहता था। उस वक्त यह स्थान सिहल-द्वीप कहा जाता था और एक निर्जन वनखण्ड था। रामरनकी

गौएँ नित्य ही इस वनमें चरनेके लिये आया करती थीं। एक बार अपना समय पूरा होनेसे पूर्व ही कामधेनु नामकी एक गौने दूध देना बंद कर दिया इससे रामवनको बड़ा आश्चर्य हुआ और उसने विचारा कि इसका दूध कोई व्यक्ति चोरीसे निकाल लेता है। एक दिन वह कामधेनुके पीछे पीछे छिपकर वनमें गया, सायंकालमें जब सब गाएँ गाँवको और लौटने लगीं तो रामवनने देखा कि कामधेनु एक झाड़में चली गयी है। तब उसके पीछे पीछे रामवन भी झाड़ीमें घुसा। वहाँ उसने देखा कि कामधेनु खड़ी होकर अपने-आप दूधकी धारा छोड़ रही है। रामवनका जीवन बड़ा भक्तिमय था। यह दृश्य देखकर उसके नेत्रोंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी। उसने तत्काल ही दूधसागरसे जल लाकर और वनके पुष्प बटोरकर शिवजीको स्नान कराकर बड़े भक्तिभावसे पूजन किया और उस दिनसे उस गौकी सेवा कर उसके दूधसे शिवजीको नित्य स्नान कराते हुए अन्तमें दिव्य ज्ञानकी प्राप्तिकर अपने मानव शरीरको त्यागनेपर शिवलोकको प्राप्त हुआ।

धीरे धीरे यहाँ शिवजीके दर्शनार्थ नित्यप्रति हजारों नर नारी आने लगे और फिर शिवमन्दिर भी बन गया। इस मन्दिरमें संग-मरमरका फर्श लगा हुआ है और इसका शिखर बड़ा सुन्दर है। यहाँ-का प्राकृतिक दृश्य बड़ा ही दर्शनीय है। वैराग्यवान् पुरुष यहाँ तपस्या करके अपने जीवनको सार्थक करते हैं।

माहात्म्य—तारकेश्वर माहात्म्यमें लिखा है कि तारकेश्वर शंकरका विधिवत् पूजन करनेवाला पुरुष सब पापोंसे मुक्त होकर अन्तमें सहस्रों वर्षोंतक शिवलोकमें भगवान् भोलानाथका गण होकर रहता है।

गंगासागर

श्रीतारकेश्वरनाथसे कलकत्ता (हावड़ा) लौटकर यात्री गंगासागरके लिये प्रस्थान करते हैं। कलकत्तेसे डायमण्ड हारबरसे यात्रा की जाती है। डायमण्ड हारबरतक रेलगाड़ी गयी है। यहाँसे स्टीमरद्वारा यात्रा करके गंगासागरसंगमके परम पुनीत तटपर पहुँचते हैं।

गंगासागरस्नानका मेला माघमासमें मकरकी संक्रान्तिको होता है। उस समय संन्यासी, उदासीन एवं वैष्णव आदि सभी सम्प्रदायोंके महात्मा कलकत्तेमें आकर एकत्रित होते हैं। उन दिनों यहाँके साहूकारलोग गंगासागरतक टिकिट और भोजनोंका प्रबन्ध कर देते हैं। स्टीमरपर बैठते समय यात्रालोग भोजनादिकी सब सामग्री अपने साथ रख लेते हैं। पीनेके लिये जल और कुछ आवश्यक ओषधियाँ भी साथ ले जाते हैं, क्योंकि गंगासागरमें इनमेंसे कोई भी वस्तु समयपर नहीं मिलती। जिस समय स्टीमर छूटता है यात्रीलोग गंगाजी और कपिलदेवजीकी जयध्वनिसे आकाशको गुंजायमान कर देते हैं। मार्गमें दो-तीन स्थानोंमें ठहरता हुआ स्टीमर गंगासागरसंगमपर पहुँच जाता है।

गंगासागरके तटको जङ्गल काटकर सुन्दर मैदान बनाया गया है। जङ्गलकी सफाईका कार्य प्रतिवर्ष होता है। फिर भी यहाँ हिंसक जीव पाये ही जाते हैं। इस जगह मीठे पानीका एक सरोवर भी है। भीड़ अधिक होनेके कारण कभी-कभी पर्वकालमें जलका कष्ट भी हो जाया करता है। यहाँ स्थायीरूपसे कोई तीर्थपुजारी नहीं रहते। पर्वके समयपर अयोध्याके महन्तकी

ओरसे पुजारी आ जाते हैं। वे ही भगवान् कपिलदेवको समर्पण किये हुए सब दान और वस्त्रादिको ले जाते हैं। प्राचीन कालसे यहाँका सब अधिकार अयोध्याके महन्तका ही प्राप्त है। यात्रीगण गंगासागरसंगममें स्नानकर अपने पितरोंके उद्धारके लिये विधिवत् पिण्डदान और तर्पण करते हैं। एक मण्डपमें भगवान् कपिलदेवकी श्यामवर्ण तपोधन मूर्त्ति विराजमान है। उसका विधिवत् पूजन और परिक्रमादि करके यात्री अपने जन्मको सार्थक समझते हैं।

सत्ययुगकी बात है एक बार सूर्यकुलभूषण महाराज सगरने अश्वमेध-यज्ञ किया, उस समय विश्वविजयके लिये उन्होंने अश्व छोड़ा। इस अश्वके पीछे सगरके पुत्र दिग्विजय करते चलते थे। इसी समय उनके बिना जाने इन्द्रने उस घोड़ेको गुप्तरूपसे ले जाकर कपिल मुनिके आश्रममें बाँध दिया। तब सगरके पुत्र उसे ढूँढते ढूँढते कपिल मुनिके आश्रममें पहुँचे। वहाँ अपना घोड़ा बँधा देखकर वे राजपुत्र मुनिका प्रभाव न जानकर उनका उपहास करने लगे तथा उन्हें अपने अश्वका अपहरण करनेवाला समझकर उनके लिये बहुत-से अपशब्द भी कहे। इससे कपिल मुनि-की समाधि खुल गयी। उन्होंने ज्यों ही नेत्र खोले कि उनकी सरोष दृष्टि पड़ते ही समस्त सगरपुत्र जलकर भस्म हो गये। पीछे उन्हें ढूँढता हुआ वहाँ सगरका पौत्र अंशुमान् पहुँचा। इसने बड़े विनीतभावसे अपने पितृव्योंके उद्धारका उपाय पूछा। तब परम कृपालु श्रीकपिल मुनिने यह आदेश दिया कि तुम तपस्या करके श्रीगंगाजीको इस लोकमें लाओ। उनके परम पुनीत जलसे इनका भस्मका स्पर्श होते ही ये सब मुक्त हो जायँगे। तब सगरके पुत्र-

पौत्रोंने प्राणपणसे गंगाजीको लानेका प्रयत्न किया तथा तप करते-करते वनमें ही उन्होंने देह त्याग भी किया, परन्तु वे अपने प्रयत्नमें सफल न हुए। अन्तमें इसी कुलमें भगीरथका जन्म हुआ। उन्होंने राज्यासन स्वीकार न करके आरम्भसे ही हिमालय पर्वतपर श्रीगंगाजीका आराधना करते हुए बड़ी घोर तपस्या की। वह शिला अब भी भागीरथी शिलाके नामसे प्रसिद्ध है। गंगोत्तरीकी यात्रा करनेपर उसके दर्शन होते हैं। भगीरथकी कठिन तपस्यासे प्रसन्न हो श्रीगंगाजीने दर्शन दिये और भगीरथको वरदान माँगनेकी आज्ञा दी। भगीरथने उनसे मर्त्यलोकमें आनेके लिये प्रार्थना की।

तब गंगाजीने कहा कि तुम्हारी प्रार्थनासे मर्त्यलोकमें अवतीर्ण तो होऊँगी, परन्तु पृथ्वी मेरे वेगको धारण न कर सकेगी इसलिये तुम भगवान् शंकरकी आराधना करके मुझे धारण करनेके लिये उन्हें प्रसन्न कर लो। गंगाजीके ऐसा कहनेपर राजा भगीरथने भगवान् शिवकी आराधना आरम्भ की। आशुतोष श्रीभोलानाथने प्रसन्न होकर उन्हे दर्शन दिया और वर माँगनेको कहा। राजा भगीरथने उन्हें अपना प्रयोजन निवेदन कर दिया। करुणावरुणालय श्रीशंकरने उनकी प्रार्थना स्वीकार की और श्रीगंगाजीके मर्त्यलोकमें अवतीर्ण होनेपर उन्हें अपनी जटाओंमें धारण किया। शिवजीकी जटामें आकर गंगाजीकी एक धारा मर्त्यलोकमें बहने लगी। महाराज भगीरथ आगे-आगे चले और गंगाजी उनके पीछे-पीछे। इस प्रकार भारतवर्षकी भूमिको पवित्र करते हुए अन्तमें समुद्रतटपर पहुँचकर उन्होंने सगरपुत्रोंकी भस्मको आप्लावितकर उनका उद्धार किया। तब देवताओंने जय-जयकार किया

राजा भगीरथने इस स्थानपर अपने पितरोंका पिण्डदान कर उनका श्राद्ध एवं तर्पणादि किया।

यह स्थान पहले लुप्त हो गया था, यहाँके तीर्थपुजारियोंका कहना है कि स्वामी रामानन्दजीने यहाँ आकर इसे पुनः प्रसिद्ध किया था। महाभारतमें कथा है कि यहाँ पाण्डवलोग आये थे और इस संगममें स्नान करके अपने पितरोंका तर्पण किया था।

श्रीमद्भागवतमें कहा है कि कपिलदेवजी अपनी माताकी आज्ञा लेकर गंगासागरसंगमपर आये थे। समुद्रने बड़ी प्रसन्नतापूर्वक आपको स्थान दिया था। तबसे वे मनुष्योंके उद्धारके लिये यहाँपर निवास करके तपस्या कर रहे हैं।

यह स्थान जङ्गलमें समुद्रके भीतर एक टापूके ऊपर है। यहाँकी जलवायु साधारणतया अच्छी है। यहाँ भोजनादिकी कोई वस्तु नहीं मिलती और न कोई तारघर, डाकखाना आदि ही हैं। यात्री एक या दो दिन ठहरकर कलकत्ते लौट आते हैं। कहते हैं, यात्रियोंके चले जानेपर यह स्थान फिर जलमग्न हो जाता है।

माहात्म्य–जिनके पूर्वजन्मके पुण्य उदय होते हैं वे ही गंगासागरकी यात्रा करते हैं। कहावत है कि 'और तीर्थ बार-बार गंगासागर एक बार।' वाराहपुराणमें कहा है कि गंगासागरसंगममें स्नान करनेसे महापातकी मनुष्य भी पवित्र हो जाता है और यदि उसने अनजानमें ब्रह्महत्या भी की हो तो भी वह उससे मुक्त हो जाता है। जो यात्री विधिपूर्वक गंगासागरकी यात्रा करते हैं, शास्त्रका कथन है कि उनको एक हजार गोदानका फल प्राप्त होता है।

भुवनेश्वर

गंगासागरसंगमका स्नान कर यात्री कलकत्ता लौट आते हैं और यहाँसे भुवनेश्वरकी यात्रा करते हैं। पुरी जानेवाले यात्री भुवनेश्वर महादेवके दर्शनार्थ अवश्य उतरते हैं। यह तीर्थ उड़ीसा प्रदेशमें काशीकी भाँति प्रसिद्ध है। हावड़ासे भुवनेश्वर स्टेशन २७२ मील है। यह B N R का स्टेशन है। स्टेशनसे भुवनेश्वर साढ़े चार मील पड़ता है। अन्य तीर्थोंकी भाँति यहाँपर भी तीर्थपुजारी यात्रियोंको लेनेके लिये स्टेशनपर ही आ जाते हैं,

जिसके कारण वहाँ सुविधा मिलती है। भुवनेश्वर जानेके लिये स्टेशनसे बैलगाड़ी चलती रहती है। इस देशमें इक्का, ताँगा आदिका चलन नहीं है। यात्री गाड़ी करके अथवा पैदल ही भुवनेश्वरको चल देते हैं। रास्ता सीधा और सुगम है कोई खतरा आदि नहीं है।

भुवनेश्वर पहुँचकर यात्री रायबहादुर किशनलाल हलवासियाकी बड़ा सुन्दर और विशाल धर्मशालामें ठहरते हैं। इन दानी महोदयने अपने अन्त समयमें साठ लाख रुपयेका दान दिया था, जिसका कार्यसम्पादन एक ट्रस्टद्वारा हो रहा है। इस ट्रस्टसे अनेकों उपयोगी कार्य किये जा रहे हैं।

यात्रीगण धर्मशालामें ठहरकर पहले बिन्दुसरोवरमें स्नान करते हैं। यह सरोवर पक्का बना हुआ है और इसके कई पक्के घाट हैं। इनमें मणिकर्णिकाघाटपर स्नान करनेका बड़ा माहात्म्य है। महाराज इन्द्रद्युम्नने जगन्नाथजी जाते समय भुवनेश्वरमें आकर निवास किया था। यहाँ इस बिन्दुसरमें नियमपूर्वक स्नान करनेसे ही उनको दिव्य ज्ञानकी प्राप्ति हुई थी। और तभी उन्होंने पुरीमें जाकर देवाधिदेव जगन्नाथजीका मन्दिर बनवाया था। यात्री इस पुनीत सरोवरमें स्नान, पिण्डदान और तर्पण करके श्रीभुवनेश्वर महाप्रभुके दर्शन करते हैं।

बिन्दुसागरके विषयमें यह कथा है कि यहाँके तपोवनमें सहस्रों ऋषि-मुनि तपस्या किया करते थे। उनकी यह इच्छा हुई कि यहाँ भारतवर्षके समस्त तीर्थ आ जायँ। इस कामनाको

लेकर उन ऋषियोंने तीर्थयात्रा करना आरम्भ किया और अपने-अपने कमण्डलुओंमें भिन्न भिन्न तीर्थोंका जल लाकर इस सरोवरमें छोड़ते गये, अतः इसमें स्नान करनेवाले यात्रियोंको भारतवर्षके सब तीर्थोंमें स्नान करनेका फल प्राप्त होता है।

भुवनेश्वर—ये जगत्प्रसिद्ध महादेव हरिहरात्मक नामसे भी पुकारे जाते है, तथा इन्हें एकाम्रवन भी कहते हैं। इस मन्दिरकी ऊँचाई एक सौ अस्सी फीट है। यह बहुत प्राचीन है। इसका जीर्णोद्धार अभी हालमें किया गया है। उसके लिये एक लाख रुपया गवर्नमेण्टने दिया था और एक लाखका चन्दा हुआ था। इसकी मरम्मतमें लगभग तीन लाख रुपया लगा था। यह मन्दिर पुरीके जगन्नाथजीके मन्दिरसे भी बड़ा और प्राचीन है। इसकी बनावट देखकर आश्चर्य होता है। जो यात्री शिवजीको स्नान करानेके लिये अपने साथ गङ्गाजल लाते हैं वे तो स्नान कराते ही हैं, किंतु जो नहीं लाते उन्हें यहाँसे भी कुछ दक्षिणा देनेपर गङ्गाजल मिल सकता है। वैसे तो बिन्दुसरोवरका जल भी सर्व तीर्थोंका जल है, उससे भी शिवजीको स्नान कराकर पूजनादि किया जा सकता है।

पूर्वकालमें भुवनेश्वरको कोटिलिङ्ग कहकर पुकारते थे। विश्वनाथपुरी काशीकी भाँति इस स्थानपर भी कोटि (बहुत-से) शिवलिङ्ग स्थापित थे और इस पावन वनमें हजारों ऋषि-मुनि तपस्या करते थे।

श्रीजगन्नाथजीकी भाँति भुवनेश्वर महादेवजीको भी दिनमें कई प्रकारका राजसी भोग लगाया जाता है। मुख्य-मुख्य

उत्सवापर देवताओंकी प्रतिमाओंको नौकापर चढ़ाकर विन्दुसागरमें जलविहार कराया जाता है। जिस प्रकार जगन्नाथजी चन्दन सरोवरमें जलविहार करते हैं और उस सरोवरके बीचमें एक मन्दिरमें कुछ दिन निवास भी करते हैं उसी प्रकार विन्दुसरके बीचमें भी एक मन्दिर बना है, उसमें देवताओंको विश्राम कराया जाता है। यहाँ एक बाग है जिसको कुञ्जवन कहकर पुकारते हैं तथा बहुत-से देवमन्दिर हैं जिनमें कई अति प्राचीन होनेके कारण गिरते जा रहे हैं। काशीकी भाँति भुवनेश्वर भी मन्दिरोंका एक वन हो है। यहाँ भी शिव पार्वती सदैव निवास करते हैं।

भुवनेश्वरक्षेत्रमें और भी बहुत-से मन्दिर हैं। कहते हैं, किसी समय यहाँ १००० शिवमन्दिर थे, किन्तु अब तो केवल ५०० ६०० ही हैं। यहाँके मन्दिरोंकी रचना प्रायः एक-सी ही है तथा उनपर पत्थरके बेल-बूटे भी एक-जैसे ही हैं। इनमें सबसे प्राचीन मन्दिर परशुरामेश्वरका है। यह पाँचवीं शताब्दीमें बनाया गया था। इसकी कारीगरीपर दक्षिणी शिल्पकलाका प्रभाव है। मुख्य मन्दिर भी प्रायः ११०० वर्षका पुराना है। इसे उड़ीसाके राजा ययाति केसरीने बनवाया था। इससे आधा मीलकी दूरीपर सिद्धारामवनमें मुक्तेश्वरका मन्दिर है। इसकी शिल्पकला और चित्रकला प्रथम श्रेणीकी है। इसके विषयमें कलाविदोंका ऐसा कथन है कि यदि यह मन्दिर रेतीले पत्थरका न होता तो इसकी सुन्दरता

र कारीगरी आगरेके ताजमहलसे कम न होती। भुवनेश्वर-
न्दिरके पूर्वोत्तर कोणमें भास्करेश्वरका मन्दिर है। उसके
श्चिम ओर रानरानीका मन्दिर है, जो सुन्दरतामें अपना
मता नहीं रखता। इनके सिवा वासुदेव, अनन्त और गोपाल
त्यादि और कई देवमन्दिर हैं।

भुवनेश्वरसे चार पाँच मीलकी दूरीपर उदयगिरि और खण्ड-
गिरि नामकी दो पहाड़ी हैं जिनमें बुद्धभगवान्‌के समयकी बनी
हुई अनेकों गुफाएँ हैं। ये गुफाएँ पर्वत काटकर बनायी गयी हैं।
इनमें बौद्ध भिक्षुओंने आत्मज्ञान-प्राप्तिका साधन किया था।
इनमेंसे किसी किसीपर शिलालेख दिये गये हैं। उनसे पता
चलता है कि इनका निर्माणकाल ईसासे ५० वर्षसे लेकर ५००
वर्ष पीछेतक है।

ये गुफाएँ इस प्रकार बनायी गयी हैं कि सामने आगन
भी निकल आया है। इनमेंसे एक-एकमें कई कोठरियाँ और बरामदे
आदि हैं, जिनमें कई आदमी सुविधापूर्वक रह सकते हैं। इन
गुफाओंमेंसे कुछकी नामावली इस प्रकार है। सर्पगुफा, व्याघ्रगुफा,
स्वर्गद्वारीगुफा, रानीनूरगुफा, गणेशगुफा, वैकुण्ठगुफा आदि।
ये उदयगिरि पहाड़ीकी गुफाएँ हैं। इसी प्रकार खण्डगिरि पहाड़ीमें
भी कई गुफाएँ हैं। खण्डगिरि पहाड़ीपर ऊपर चढ़ाई पड़ती है।
यहाँ जैनसम्प्रदायके आचार्य श्रीपारसनाथजीका मन्दिर है
और आकाशगंगा नामका सरोवर है। यहाँका प्राकृतिक दृश्य

देखते ही बनता है। ये पहाड़ियाँ जैन और बौद्धमतावलम्बियोंके पवित्र तीर्थस्थान मानी जाती हैं। जैन और बौद्ध यात्रियोंके सिवा यहाँ अन्य धर्मावलम्बी भी आजसे ढाई हजार वर्ष पहलेकी भारतकी कारीगरी और उन तपोधन ऋषियोंके स्मृतिचिह्न देखनेके लिये आया करते हैं।

भुवनेश्वर महादेवके पूजोपचारके लिये हजारों रुपया सालका आमदनीकी जागीर लगी हुई है। यहाँ प्राय ४००० जनसंख्याकी बस्ती है। किसी समय यह स्थान उड़ीसाकी राजधानी भी रह चुका है। इस समय अधिकाश तीर्थगुरुओंके ही घर हैं। यहाँ संस्कृत पाठशाला, अन्नक्षेत्र और डाकखाना भी है। यह लता विटपोंसे छायी हुई बड़ी रमणीक बस्ती है। यहाँका जलवायु भी अच्छा है। भोजनका मामूली सामान मिल जाता है। कभी-कभी फलादिक भी मिल जाते हैं।

माहात्म्य–शिवपुराण और स्कन्दपुराणमें लिखा है कि पुरुषोत्तमक्षेत्रमें भुवनेश्वर महादेव हैं, जिनका दर्शन और पूजन करनेवालोंके सम्पूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं। यह तीर्थ काशीकी भाँति बड़ा पवित्र है। यहाँपर निवास करके जो प्राणी मृत्युको प्राप्त होते हैं उनको शिवलोककी प्राप्ति होती है। जो यात्री यहाँ ग्रहण और संक्रान्ति आदि पर्वोंके अवसरपर आकर पुण्य दानादि करते हैं उनको कोटि गुण फल प्राप्त होता है। इस तीर्थका क्षेत्रफल दो योजनके बीचमें माना गया है।

वैतरणी

भुवनेश्वर महादेवके दर्शन और बिन्दुसरका स्नान करके यात्रीलोग वैतरणीकी यात्रा करते हैं। वैसे तो भुवनेश्वर स्टेशनसे पुरीको सीधी गाडी जाती है। वैतरणीका स्नान करनेवाले यात्री पहले कटक जाकर वैतरणीरोड अथवा जाजपुर स्टेशनपर उतरते हैं। जाजपुररोडसे वैतरणीतक पक्की सडक बनी हुई है, किन्तु वैतरणीरोड उतरनेसे अनुमान ग्यारह मीलका कच्चा रास्ता पार

करनेपर वैतरणाके दर्शन होते हैं। भुवनश्वरसे वैतरणीरोड (जाजपुर) ६२ मील है। यह B N R का स्टेशन है।

यहाँपर कुन्दराम, भगवानीकी धर्मशाला है। जिसमें यात्री सुविधापूर्वक ठहर सकते हैं। ऋषिकुल्याकी धारासे वैतरणीके धारातक उसे पावन पुरुषोत्तमक्षेत्र माना गया है। पुराणोंमें इसका नाम विरजाक्षेत्र भी है।

यात्रीगण वैतरणीके घाटपर जिसको पादगयातीर्थ भी कहते हैं स्नान करते हैं। यहाँपर पिण्डदान करनेका बड़ा माहात्म्य है और स्नानके पश्चात् पिण्डदान किया जाता है। जो यात्री सम्पन्न होते हैं वे यहाँपर गायकी पूँछ पकड़कर वैतरणी पार करते हैं और वह गौ अपने तीर्थपुरोहितको दान कर देते हैं। वैतरणीघाटके ऊपर विष्णु भगवान् और वाराहजीका मन्दिर है। वैतरणीके निकट और भी कई देवमन्दिर और मूर्तियाँ हैं। यहाँसे प्रायः एक मीलकी दूरीपर गरुड़स्तम्भ है। इस स्थानपर गरुड़जीने तप किया था। यहाँ ब्रह्मकुण्ड नामका एक सरोवर है, इसके निकट विरजादेवीका मन्दिर है। यात्री ब्रह्मकुण्डका स्नान और भगवतीका दर्शन करके आनन्दित होते हैं।

यहाँके तीर्थपुजारियोंका कथन है कि भगवती विरजादेवीकी स्थापना ब्रह्मकुण्डके समीप ब्रह्माजीने की थी। वैतरणीका दर्शन करनेसे कुछ यात्रियोंको भयका सञ्चार हो जाता है। शास्त्रके कथनानुसार मृत्युके पश्चात् वैतरणी नदी पार करनी होती है।

गरुडपुराणमें कथा है कि पापात्माओंको वैतरणी नदी रक्त, पीब आदि दूषित पदार्थोंसे भरा दृष्टिगोचर होती है। उन्हें सर्पादिक दुष्ट जन्तु तैरते दिखायी देते हैं, जो अपनी कराल डाढ़ोंसे काटकर अत्यन्त पीड़ित कर देते हैं। अन्त समयमें वैतरणीतरणके लिये किया हुआ गोदान प्रायः कुलीन ब्राह्मण स्वीकार नहीं करते।

लोगोंका ऐसा विश्वास है कि यहाँ पादगयाघाटपर वैतरणीमें स्नान और वैतरणी पार करके विधिवत् गोदान कर देनेपर फिर मृत्युके उपरान्त उस भयंकर वैतरणीका भय नहीं रहता। फिर तो वह वैतरणी शुद्ध जलसे भरी दिखायी देती है। शास्त्रमें बतायी हुई यमलोककी वैतरणीसे छुट्टी पानेकी अभिलाषासे वारुणीपर्वके अवसरपर यहाँ लाखों यात्रियोंकी भीड़ होती है।

वैतरणीके तीर्थपुजारी अधिकतर शैव हैं। यहाँपर अनेक शिवमंदिर हैं। यह स्थान पार्वतीजीके रहनेका बताया जाता है। यहाँपर औषधालय, संस्कृतपाठशाला और डाकखाना आदि भी हैं। भोजनकी वस्तुओंमें फलादि और अच्छे आटेको छोड़कर और सब वस्तुएँ मिलती हैं। यहाँका जलवायु अच्छा है।

माहात्म्य—आदिब्रह्मपुराणकी कथा है कि ब्रह्माजीकी स्थापित की हुई विरजादेवीका दर्शन करनेसे मनुष्य पवित्र हो जाता है और सम्पूर्ण पापोंके हरनेवाली वैतरणीका स्नान विष्णुलोक प्रदान करनेवाला है। यहाँ देहत्याग करनेसे उत्तम गति मिलती है।

जगन्नाथपुरी

नित्यानन्दैकरसं सच्चिन्मात्रं स्वयंज्योतिः ।
पुरुषोत्तममजमीशं वन्दे श्रीयादवाधीशम् ॥

वैतरणी (जाजपुर) से पुरी स्टेशन १०० मील है । यह B N R का स्टेशन है । यहींतक गाड़ी जाती है । जब गाड़ी स्टेशनके निकट पहुँचती है तो जगन्नाथजीके मंदिरके ऊपर जो नीलचक्र लगा हुआ है उसका दर्शन होने लगते हैं । यात्रीलोग भगवान्‌को प्रणाम करके स्टेशनपर उतर पड़ते हैं । अधिकांश यात्रियोंका ऐसा विश्वास है कि जिन्हें चक्रके दर्शन हो गये उनको भगवान्‌के भी दर्शन हो ही जायँगे ।

पुरी स्टेशनपर यहाके पण्डे और उनके कर्मचारी अपने अपने यात्रियोंकी खोजमें मौजूद रहते हैं, जो उनके नाम और निवासस्थान आदिका पता पूछने लगते हैं । यदि यात्रियोंको अपने तीर्थपुजारीका नाम मालूम होता है तब तो उनका पीछा छूट जाता है अन्यथा जहां वे ठहरते हैं, वहाँ सैकड़ों पण्डे अपने-अपने बहीखाते लेकर पहुँचते हैं । पुरी स्टेशनसे तीर्थस्थान (भगवान्‌का मंदिर) दो मीलकी दूरीपर है । यहाँसे बैलगाड़ी या घोड़ागाड़ी मिल जाती है । पुरीक्षेत्रमें बहुत सी धर्मशालाएँ हैं

यात्रीलोग अपनी सुविधा देखकर जहाँ रुचि होती है ठहर जाते हैं। पुरीकी प्रधान प्रधान धर्मशालाएँ ये हैं।

१—श्रीधनजी मूलजीकी धर्मशाला जो भाटियाकी धर्मशाला भी कहलाती है।

२—सर हरीराम गोयनकाकी धर्मशाला—यह पुरी स्टेशनसे आती बार सदर सड़कपर बायें हाथको है।

३—सेठ हजारीमल दुधवेवालेकी धर्मशाला—यह पुरीके राजा साहबके महलके सामने है।

४—श्रीआशाराम मोतीलालजीकी धर्मशाला—यह धनजी मूलजीकी धर्मशालाके पास है।

५—श्रीगनपतराय खेमकाकी धर्मशाला—यह जगन्नाथजीके मन्दिरकी पूर्वदिशामें समुद्रकी ओर है।

६—श्रीकन्हैयालालजीकी धर्मशाला—यह चन्दनसरोवरके मार्गमें है।

यात्रीलोग धर्मशालामें ठहर जाते हैं और भगवान् श्रीजगन्नाथजीके मन्दिरमें जाकर दर्शन करते हैं। मन्दिरके भीतर जाकर अछूतोंको भगवान्के दर्शन करनेका अधिकार नहीं है। सिंहपौरि (दरवाजे) पर पतितपावन भगवान्की मूर्ति है। अछूत लोगोंके लिये इनके [illegible] श्रीजगन्नाथजीके दर्शनोंका फल माना जाता है

जगन्नाथपुरी

नित्यानन्दैकरस सच्चिन्मात्र स्वयं
पुरुषोत्तममनीशं वन्दे श्रीयादवाद्रि

खरगपुर (जाजपुर) से पुरी स्टेशन १०० B N R का स्टेशन है। यहींतक गाड़ी जाती है। स्टेशनके निकट पहुँचती है तो जगन्नाथजीके मन्दिरका शिखर लगा हुआ है उसके दर्शन होने लगते हैं। भगवान्को प्रणाम करके स्टेशनपर उतर पड़ते हैं। यात्रियोंका ऐसा विश्वास है कि जिन्हें चक्रके दर्शन हो गये भगवान्के भी दर्शन हो ही जायँगे।

पुरी स्टेशनपर यहाँके पण्डे और उनके कर्मचारी अपने यात्रियोंकी खोजमें मौजूद रहते हैं, जो उनके नाम, निवासस्थान आदिका पता पूछने लगते हैं। यदि यात्री अपने तीर्थपुरोहितका नाम मालूम होता है तब तो उसका छूट जाता है अन्यथा जहाँ वे ठहरते हैं, वहाँ सैकड़ों पण्डे अपने वहीखाते लेकर पहुँचते हैं। पुरी स्टेशनसे तीर्थ (भगवान्का मन्दिर) दो मीलकी दूरीपर है। यहाँसे टैम्म या घोड़ागाड़ी मिल जाती है। पुरीक्षेत्रमें बहुत सी धर्मशालाएँ हैं

यात्रीलोग अपनी सुविधा देखकर जहाँ रुचि होती है ठहर जाते हैं। पुरीकी प्रधान प्रधान धर्मशालाएँ ये हैं।

१—श्रीधनजी मूलजीकी धर्मशाला जो भाटियाकी धर्मशाला भी कहलाती है।

२—सर हरीराम गोयनकाकी धर्मशाला—यह पुरी स्टेशनसे आती बार सदर सड़कपर बायें हाथको है।

३—सेठ हजारीमल दुधवेवालेकी धर्मशाला—यह पुरीके राजा साहबके महलके सामने है।

४—श्रीआशाराम मोतीलालजीकी धर्मशाला—यह धनजी मूलजीकी धर्मशालाके पास है।

५—श्रीगनपतराय खेमकाकी धर्मशाला—यह जगन्नाथजीके मन्दिरकी पूर्वदिशामें समुद्रकी ओर है।

६—श्रीकन्हैयालालजीकी धर्मशाला—यह चन्दनसरोवरके मार्गमें है।

यात्रीलोग धर्मशालामें ठहर जाते हैं और भगवान् श्रीजगन्नाथजीके मन्दिरमें जाकर दर्शन करते हैं। मन्दिरके भीतर जाकर अछूतोंको भगवान्के दर्शन करनेका अधिकार नहीं है। सिंहपौरि (दरवाजे) पर पतितपावन भगवान्की मूर्ति है। अछूत लोगोंके लिये इनके दर्शनसे ही श्रीजगन्नाथजीके दर्शनोंका फल माना जाता है।

मार्कण्डेयसरोवर—यात्रियोंके निवासस्थानसे मार्कण्डेय सरोवर प्रायः आधा मीलकी दूरीपर है। पुरीके तीर्थपुजारी पहले यहींपर तीर्थविधि करनेका विधान बतलाते हैं। यहाँ यात्रीलोग सरोवरमें स्नान करके तर्पण एवं पिण्डदानादि करते हैं। स्नानके पश्चात् श्रीमार्कण्डेय महादेवके दर्शन करते हैं। इस स्थानपर मार्कण्डेयने दीर्घायु-लाभके लिये श्रीमहादेवजीकी आराधना की थी। तब उनकी अनन्य भक्तिसे प्रसन्न होकर श्रीभोलानाथने प्रकट होकर उन्हें यमराजके पाशसे छुड़ाया और सात कल्पपर्यन्त दीर्घायुका वर देकर कृतार्थ किया।

भगवान्‌के दर्शन—मार्कण्डेयसरोवरमें स्नान और श्रीमहादेवजी की पूजा कर यात्रीलोग भगवान्‌के दर्शनोंको जाते हैं। भाव यह है कि दर्शनोंसे पूर्व स्नानादि विधि कर लेनेसे उसके मनमें पवित्रता आ जाती है। प्रायः सभी तीर्थोंमें यही नियम है। ऐसा करनेसे दर्शन करनेमें विशेष आनन्द आता है।

भगवान्‌का मन्दिर नीलगिरि पर्वतपर बना हुआ है। जिसकी ऊँचाई अनुमान पचीस फुट है। मन्दिरके बाहर कोट बना हुआ है। उसमें चारों दिशाओंमें चार दरवाजे हैं। इनमें पूर्व दिशाका द्वार सबसे बड़ा और उत्तम है। इस दरवाजेपर सिंहकी दो मूर्तियाँ हैं, इसलिये इसे सिंहद्वार नामसे पुकारा जाता है। अधिकांश यात्री इसी द्वारसे भगवान्‌के दर्शनार्थ आते हैं।

इसी द्वारके सामने काले पत्थरका अरुणस्तम्भ है। इसकी ऊँचाई लगभग ४० फुट है। उसपर सूर्य भगवान्‌के सारथी अरुणकी मूर्ति है। यात्रियोंको इस कीर्तिस्तम्भको दाहिनी ओर रखकर जाना चाहिये। यहींपर पतितपावन भगवान्‌का भी दर्शन होता है। अछूतलोग इन्हींके दर्शन करके लौट जाते हैं। उनको मन्दिरके भीतर जानेकी आज्ञा नहीं है। हाँ, यदि वे कोई फलादि या रुपया-पैसा भगवान्‌को समर्पण करना चाहते हैं तो वे स्वीकार कर लिये जाते हैं।

फाटकके भीतर जानेपर दूसरा परकोटा मिलता है। इसमें भी बाहरके परकोटेके दरवाजेके ठीक सामने चार द्वार हैं। भीतरी परकोटेमें कई मन्दिर हैं, जिनमें पातालेश्वरका मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है। श्रीजगन्नाथजीका मन्दिर चार भागोंमें विभक्त है। १ विमान, २ जगमोहन, ३ नृत्यमन्दिर और ४ भोगमन्दिर। विमानमें भगवान् विराजते हैं। उसके आगे जगमोहन है। जगमोहनसे आगे भोगमन्दिर है और इसके आगे नृत्यमन्दिर है। इस प्रकार चारों मन्दिर एक साथ सटे हुए हैं। इसलिये इनका आकार एक दुर्गके समान हो गया है।

भीतरी परकोटेमें प्रवेश करनेपर पहले पातालेश्वर महादेवके दर्शन मिलते हैं। यात्री उन्हें प्रणाम करके आगे बढ़ते हैं तो गरुडस्तम्भ मिलता है। यहाँ गरुडजीको पुष्पादि समर्पण करके आगे बढ़नेपर सामने भगवान्‌के दर्शन होने लगते हैं।

तक यहाँ निवासी मृत्युशय्यापर पड़े हुए व्यक्तिको स्वर्गद्वार दर्शन कराते हैं। यहाँ समुद्रमें बड़े हाथियोंकी गड़गड़ाहटके शब्द होता रहता है। जिन यात्रियोंके गाँवमें कोई बड़ा नद नहीं है उन्हें समुद्रके दर्शनसे ही भय उत्पन्न हो जाता है।

ऐसे ही कुछ भयभीत यात्रियोंको छोड़कर शेष सब समुद्रकी लहर लेकर स्नान करते हैं। समुद्रतटपर ब्राह्मण पुरोहित लिये बैठे रहते हैं। वे यात्रियोंसे तर्थविधि कराते हैं। यात्रीलोग पुरीसे ही नारियल आदि पूजनकी सामग्री और ब्राह्मण भोजन करानेके लिये मिष्टान्न ले जाते हैं क्योंकि समुद्रतटपर कोई खाद्य वस्तु नहीं मिलता।

जब यात्री तीर्थविधि कर चुकते हैं तो वे पास ही समुद्र अथवा अमृतकूप नामक एक मीठे जलके कूपपर पुनः स्नान करते हैं, क्योंकि समुद्रका जल इतना खारा होता है कि यदि मुँहमें चला जाय तो वमन हो जाता है। इसके सिवा समुद्र स्नानसे जो शरीरमें खारापन हो जाता है उसे मिटानेके लिए भी उन्हें दुबारा स्नान करना पड़ता है। इस कूपके जलसे स्नान करनेका एक पैसा दक्षिणा है।

करमाबाईका स्थान—समुद्रतटके उपर ही करमाबाईकी कुटी है। यहाँ प्रसादमें खिचड़ी मिलती है। करमाबाई बड़ी भगवद्भक्ता थी। जिस प्रकार माताका पुत्रपर स्वाभाविक स्नेह होता है उसी प्रकार उसका भगवान्‌के प्रति वात्सल्य था। वह प्रातःकाल बिना शौचादि गये ही अँगीठीपर खिचड़ी बनाकर भगवान्‌को भोग लगाती थी, जिससे उन्हें अधिक देर भूखा न रहना पड़े। उसके पश्चात् अपना दैनिक कार्य करती थी।

भगवान्‌की विशुद्ध भक्तिके सामने किसी प्रकारकी जाति-पाँति और पवित्रताका ध्यान नहीं रहता। वे जगदीश्वर तो एक भक्तिके ही भूखे हैं। एक बार भगवान्‌ने जगन्नाथ-मन्दिरमें प्रातःकालका भोग स्वीकार नहीं किया, विदुरके सागकी भाँति उन्होंने करमाबाईकी खिचड़ी ही खाया। तबसे अबतक भगवान्‌को प्रातःकालका भोग खिचड़ीका ही लगता है। इसलिये यात्रीलोग करमाबाईकी खिचड़ीका प्रसाद बड़े प्रेमसे लेते हैं।

मलूकदासका आश्रम—समुद्रतटपर यह मठ है। उनमें बाबा मलूकदासका आश्रम अधिक प्रसिद्ध है। ये महात्मा जिला इलाहाबादके कड़े ग्रामके रहनेवाले थे। इनका जन्म वैशाख वदी ५ संवत् १६३१ में हुआ था और १०८ वर्षकी आयुमें आप परलोक सिधारे थे। आप भगवान्‌के अनन्य भक्त और उच्चकोटिके महात्मा थे। भक्तमालमें इनका वृत्तान्त दिया है। आपका चलाया हुआ टुकड़ा आजतक यात्रियोंको दिया जाता है।

गोवर्द्धनमठ—जगद्गुरु श्रीशंकराचार्यजीने भारतवर्षके आध्यात्मिक शासनके लिये चारों दिशाओंमें चार मठ स्थापित किये थे। उन्होंने जगन्नाथपुरीमें जिस मठकी स्थापना की थी वह गोवर्द्धनमठके नामसे प्रसिद्ध है। उसका भव्य-भवन समुद्रतटपर बना हुआ है।

तीन लोकका दर्शन—रास्तेमें यात्रियोंको गोस्वामी कुंजलाल भागवतरत्नका निर्माण कराया हुआ एक पक्का भवन मिलता है। उसके दरवाजेपर लिखा हुआ है—मर्त्यलोक, यमलोक और स्वर्गलोक। यहाँके दर्शनकी दक्षिणा एक आना है।

मन्दिरके भीतर घुसनेपर आँगन मिलता है। उसमें सामने मर्त्यलोक, पाताल और यमलोक और ऊपरके तल्लेपर स्वर्गलोक है। सबसे पहले यात्री मर्त्यलोकका दर्शन करते हैं।

इन चारों लोकोंका दिग्दर्शन मूर्तियोंद्वारा ही कराया गया है। इन मूर्तियोंपर सफेद रंगकी काठकी तख्ती लगी हुई है, जिनपर लाल अक्षरोंमें संक्षिप्त परिचय दिये हुए हैं। इन लोकोंका दर्शन करनेसे यात्रियोंकी बुद्धिपर अच्छा असर पड़ता है। इससे यात्रियोंको यह शिक्षा लेनी चाहिये कि चौरासी लक्ष योनियोंमें मनुष्य जन्म मिलना बड़े पुण्य और तपस्याका फल है। प्रत्येक शरीरधारी प्राणी दुःखकी निवृत्ति और सुखकी प्राप्तिकी कामना करता है, किंतु सुख-दुःख तो अपने कर्मोंके अधीन है। जो प्राणी अपने पूर्वजन्ममें जैसा बीजारोपण करके आता है उसीके अनुसार ही इस जन्ममें फलकी प्राप्ति होती है। जीवन अपने नियत समयसे आगे नहीं बढ़ सकता, इसलिये मर्त्यलोकरूपी इस शरीरमें आकर चित्तको यमलोकरूपी पापवासनाओंसे निकालकर उनकी जगह सद्विचाररूप स्वर्गलोकको बसाना चाहिये।

श्वेतगंगा सरोवर—यह पवित्र कुण्ड लोकनाथ महादेवके पास है। यात्रीलोग यहाँ भी स्नानादि करते हैं। इसके तटपर भगवान् श्वेतेश्वरका मन्दिर है। इनकी प्रतिमा भी काष्ठकी ही है और जब १२ वर्षमें श्रीजगन्नाथजीका कलेवर बदला जाता है तो यह मूर्ति भी बदली जाती है।

चक्रतीर्थ—स्टेशनके समीप समुद्रके किनारे चक्रतीर्थ है। कहते हैं, इसमें भगवान्‌का सुदर्शनचक्र पड़ा हुआ है। इसका जल

मीठा है। यह समुद्रसे प्राय २०-२५ कदमकी दूरीपर है। भगवान्‌की अद्भुत महिमा है कि समुद्रका जल इतना खारी और उसके बिल्कुल समीप कुण्डका जल ऐसा मीठा है।

साखीगोपाल—जगन्नाथपुरीसे ग्यारह मीलकी दूरीपर रेलवे लाइनके पास साखीगोपालका मन्दिर है। यहा श्रीकृष्ण और राधिकाजीकी सुन्दर मूर्तियाँ हैं। यहा इसके अतिरिक्त और भी कई मन्दिर हैं तथा एक पक्का तालाब भी है।

कोणार्क—यह जगन्नाथपुरीसे १८ मील है। इसे सर्वसाधारण लोग 'कनारक' कहते हैं। 'कोणार्क' संस्कृत शब्द है। इसका अर्थ [उडीसाके] कोनेका सूर्य है। यहाँका मार्ग बड़ा सुहावना है। मार्गमें कुशभद्रा नामकी एक छोटी नदी मिलती है। यात्रा-लोग भोजनादिकी सामग्री पुरीसे ही ले जाते हैं। इस जगह माघ शुक्ल सप्तमीको बड़ा मेला होता है। यहा 'चन्द्रभागा' नामकी एक छोटा सा नदी है। उसमें यात्रालोग प्राय स्नान करते हैं। कोणार्कमें सूर्यभगवान्‌का बड़ा प्रसिद्ध मन्दिर है। इसको राजा नृसिंहदेवने उड़ीसाकी बारह वर्षकी आमदनी खर्च करके सन् १२३० और १२८२ ईसाके मध्यमें बनवाया था। इस समय यह मन्दिर जीर्ण शीर्ण दशामें है। इसका वर्तमान शिखर १२४ फुट ऊँचा है। इसकी दीवारोंपर तरह-तरहकी चित्रकारी हो रही है। जो तत्कालीन कलाका अच्छा नमूना है। जगन्नाथजीके मन्दिरके सिंहद्वारपर जो १६ कोणका अरुणस्तम्भ है वह यहींसे ले जाकर वहा लगाया गया है। यह मन्दिर केवल पत्थरका ही बना हुआ है। इसके प्रस्तरखण्ड एक-दूसरेसे लोहेद्वारा जड़ दिये गये हैं।

पुरीकी परिक्रमा और दर्शन—यहाँके तीर्थ पुजारी यात्रियोंको सब दशाक्योक्त दर्शन करानेके अनन्तर पुरीकी परिक्रमा कराते हैं और फिर नित्य नेमे समय दर्शन करानेको ले जाते हैं। जगन्नाथ-मन्दिरमें मुक्तामण्डप नामका एक सुन्दर स्थान है यहांपर यात्रियोंसे तीर्थगुरु अपनी दक्षिणा लेते हैं। यहां यात्रियोंसे अटका नामकी एक भारी दक्षिणा भी माँगा जाता है। उसके विषयमें यह बतलाया जाता है कि अटकाके लिये दिया गया धन भगवान्के अटका फण्डमें बढ़ा दिया जाता है और उसके अनुसार जगन्नाथजीके प्रसाद बढ़ानेमें सहायक होता है। यात्री तीर्थगुरुका पूजनकर अपनी श्रद्धानुसार उन्हें यथाशक्ति भेंट करते हैं और तीर्थविधि करके देवमन्दिर श्रीजगन्नाथस्वामीका माहात्म्य श्रवण करके अपनी पहले धामकी यात्रा समाप्त करते हैं।

जगन्नाथक्षेत्र साधुओंके लिये सुखद हो रहता है। यहाँका जलवायु पहले तो अच्छा नहीं था किन्तु अब तो इतना स्वास्थ्यप्रद है कि स्वस्थ होनेके लिये लोगोंको जगन्नाथजी (पुरी) आकर कुछ महीना निवास करनेके लिये डाक्टरलोग अपनी व्यवस्था देते हैं। यहां सदावर्त, संस्कृतपाठशाला, गोशाला अनाथालय डाकखाना, तारघर आदि कई संस्थाएँ हैं। अस्पताल और धर्मार्थ औषधालय आदि कई लोकोपकारी संस्थाएँ भी हैं। उड़ीसा प्रान्तमें चावलका ही खर्च अधिक है। आटेमें भी चावलका आटा मिला रहता है। यद्यपि उड़िया भाषा भली प्रकार समझमें नहीं आती तथापि पण्डेलोग तथा और भी तीर्थ पुजारी आदि ऐसे बहुत मनुष्य हैं, जो अच्छी तरह हिन्दीमें बोल सकते हैं।

जगन्नाथपुरी बड़ी रमणीक है। यहा कुष्टियोंकी सख्या अधिक है। कहा जाता है कि कुछ दिन निरन्तर रहनेपर यहाके जलवायुसे कुष्ट रोग शान्त हो जाता है। कितने ही श्रद्धालु यहा मरणपर्यन्त निवास करते हैं।

श्रीजगन्नाथमाहात्म्य–एक समय लोक-कल्याणके लिये अठासी सहस्र ऋषियोंने सूतजीसे प्रश्न किया कि मनुष्यको पवित्र करनेवाला इस भारतवर्षमें कौन तीर्थ है जो कृपा करके बतलाइये। सूतजी महाराज उस समय व्यासगद्दीपर विराजमान थे। उन्होंने कहा कि उडीसा प्रान्तमें १० योजन लम्बा और ५ योजन चौडा पुरुषोत्तमक्षेत्र है, जहा नीलगिरि पर्वतपर भगवानका सदैव निवास रहता है। यहाकी शास्त्रविधिके अनुसार यात्रा करनेपर और महाप्रसाद ग्रहण करनेसे प्राणी पापमुक्त हो जाता है।

भगवान्की दारुमयी मूर्तिका ब्रह्माजीने स्थापित किया है। पद्मपुराणमें लिखा है कि पुरुषोत्तमपुरीमें निवास करनेवालेका जन्म-मरणसे छुटकारा मिल जाता है। जो पुरुष यहा शरीरत्याग करते हैं वे धन्य हैं। यहाके महाप्रसादका ऐसा प्रभाव है कि उससे पितृकर्म करनेपर पितृगण तृप्त होकर विष्णुलोकको चले जाते हैं। देवतालोग भगवान्के दर्शनोंकी अभिलाषासे नित्य ही पुरुषोत्तमपुरीमें आते हैं। इसलिये हे मुनिवरो! यदि आपलोगोंको पुण्यकी वृद्धि और पापक्षयकी कामना है तो अपना जन्म सार्थक करनेके लिये आप जगन्नाथक्षेत्रकी पवित्र यात्रा करें।

साक्षीगोपाल

पतितपावन श्रीजगन्नाथजीके दर्शनके पश्चात् भगवान् साक्षी-गोपालके दर्शन किये जाते हैं। भगवान्‌के मन्दिरमें स्थान प्रायः एक-सा है। मन्दिरमें भगवान् गोपालकी मनोमोहिनी मूर्ति है। यात्रीगण उन्हें अपनी यात्राका साक्षी बनाते हैं।

साक्षीगोपालके विषयमें ऐसा कहा है कि बहुत पहले हुआ एक वृद्ध ब्राह्मण और उनके एक युवक साथीकी अभिलाषा हुई कि वृन्दावनकी यात्रा करें। इस इच्छासे वे दोनों पैदल ही श्रीवृन्दावन-को चल दिये। धीरे-धीरे वे वहाँ पहुँच गये और बड़ी श्रद्धापूर्वक भगवान्‌के दर्शन कर कुछ समय वहाँ रहे किन्तु मार्गकी थकानके कारण बूढ़े बाबा बीमार पड़ गये। उनके युवक साथीने उनकी तन-मन-से बड़ी सेवा की। उससे प्रसन्न होकर उन्होंने नीरोग होनेपर घर लौटते समय भगवान् वृन्दावनविहारीके मन्दिरमें यह प्रतिज्ञा की कि मैं घर पहुँचनेपर इस युवकके साथ अपनी कन्याका सम्बन्ध कर दूँगा।

दोनों यात्री भगवान्‌का दर्शन कर घरको चल दिये। परंतु अपने पुत्र और जातिभाइयोंके भयवश वृद्ध महाशय दरिद्र युवकके साथ अपनी कन्याका पाणिग्रहण करनेमें आनाकानी करने लगे। जब युवकने जातिके पञ्चोंसे इसका निर्णय करनेको कहा तो वे बोले, 'इन वृद्ध महाशयने जिनके सामने तुमसे प्रतिज्ञा की है, यदि

वह आकर कह दे तो हम इन्हें तुम्हारे साथ अपनी कन्याका विवाह करनेके लिये विवश कर सकते हैं।'

तब भगवान्‌से साक्षी दिलानेके लिये वह युवक फिर वृन्दावन गया और उनसे साथ चलकर साक्षी देनेकी प्रार्थना करते हुए यह प्रतिज्ञा की कि यदि आप नहीं चलेंगे तो मैं अनशन करके यहाँ प्राण त्याग दूँगा। जब अनशन करते-करते उसे सात दिन हो गये तो भगवान्‌को उस हठीले भक्तकी बात माननी पड़ी, और उन्होंने स्वप्नमें उसे दर्शन देकर आज्ञा दी कि हम अलक्ष्य रहकर तुम्हारे साथ उत्कलदेश चलेंगे किन्तु तुम पीछेकी ओर मत देखना, यदि इस प्रतिज्ञाके विरुद्ध करोगे तो हम उसी स्थानपर ठहर जायँगे।

युवक अपनी सफलता और भगवान्‌की कृपासे कृतकृत्य हो दूसरे दिन घरकी ओर चल दिया। उसके पीछे भक्तवत्सल भगवान् भी चल दिये। उसे केवल भगवान्‌के नूपुरोंकी ध्वनि सुनायी देती थी, किन्तु जब समुद्रके रेतीले तटपर पहुँचे तो वह ध्वनि सुनायी न दी, इससे उसे सन्देह हुआ कि भगवान् लौट तो नहीं गये। इस सन्देहमें पड़कर उसने ज्यों ही पीछेकी ओर देखा कि भगवान् साक्षात् मर्त्यरूपमें दर्शन देकर अन्तर्धान हो गये। बस, उसी स्थानपर भगवान् साक्षीगोपालकी स्थापना हुई। तबसे जो यात्री श्रीजगन्नाथकी यात्राको आते हैं वे भगवान्‌को उसकी साक्षी बनानेके लिये यहाँ भी अवश्य आते हैं।

यहाँपर रायबहादुर श्रीविश्वेश्वरलाल हल्वासियाकी धर्मशाला है, जिसमें यात्रियोंकी सुविधाका अच्छा ध्यान रक्खा जाता है। इसका प्रबन्ध हल्वासिया स्टेटकी ओरसे ट्रस्टियोंद्वारा होता है।

रामेश्वरखण्ड

गोदावरी

रामेश्वरकी ओर जानेवाले यात्री मासागापालमें गुन्टरोड जिसे जटना जङ्क्शन भी कहते हैं आते हैं। इस स्टेशनपर प्राय चार घंटेका अवसर मिलता है। यात्रीगण यहाँसे आटा-दाल आदि आवश्यक सामान लेकर रख लेते हैं क्योंकि दक्षिणमें शुद्ध आटेका अभाव है। यहाँ मुसाफिरखानेके आस पास वृक्षोंके नीचे ही भोजनादि बनाना पड़ता है। स्टेशनके पास कोई अन्य विश्राम-स्थान नहीं है। यहाँ एक अच्छी धर्मशालाकी बहुत आवश्यकता है।

खुर्दारोडसे यात्रियोंको वाल्टेयर एक्सप्रेससे जाना चाहिये। श्रीरामेश्वरजीके पण्डे या उनके गुमास्ते यहींसे यात्रियोंके साथ हो लेते हैं। यात्रियोंको उनके साथ चलनेमें दक्षिणाकी बात खोल लेनी चाहिये, नहीं तो पीछे झगड़ा होनेकी सम्भावना रहती है।

खुर्दारोडसे शामको चार बजे चलकर यात्री दूसरे दिन प्रातःकाल पाँच बजे वाल्टेयर स्टेशनपर पहुँचते हैं। स्टेशनपर दूसरी ओर गाड़ी तैयार मिलती है। उसमें बैठकर दोपहरको ग्यारह बजेके लगभग गोदावरी स्टेशन पहुँच जाते हैं। स्टेशनपर बैलगाड़ियाँ तैयार रहती हैं। यहाँसे तीर्थ प्रायः एक मील है, इसलिये अधिकांश यात्री पैदल ही चले जाते हैं। जिनके पास बोझा अधिक होता है वे बैलगाड़ी कर लेते हैं। पुरीसे गोदावरी स्टेशन M S M रेलवेलाइनपर ४१३ मीलकी दूरीपर है।

गोदावरी ग्राम गोदावरीतटके तटपर बसा हुआ है। यहाके तीर्थपुजारी सम्पन्न होते हैं। गोदावरीमें दूर्वासेतुमतादेवीकी धर्मशाला है। इन देवीजीके जीवनकालमें इस धर्मशालामें अन्नक्षेत्र भी था, किंतु अब वह बन्द कर दिया गया है और धर्मशाला भी म्युनिसिपैल्टीके अधीन कर दी गयी है।

गोदावरीनिवासी भी प्रायः गोदावरीजीका ही जल सेवन करते हैं। यहाँ पिण्डदान करनेकी विधि है। कर्म करानेवाले ब्राह्मण धर्मशालाहीमें आ जाते हैं और वे ही उसके लिये आवश्यक सामग्री जुटा देते हैं। पिण्डदान गोदावरीके तटपर एक फूँसके मण्डपमें होता है। यहाँके तीर्थपुरोहित कर्मविधिके

होता होता है । ये बहुत विधिपूर्वक सब कर्म कराते हैं । बङ्गालमें [illegible] और दक्षिणवालोंका जैसा आग्रह दक्षिणमें है वैसा अन्यत्र नहीं देखा जाता । यहाँकी स्त्रियाँ पर्दा नहीं करतीं । ये स्नान [illegible] कपड़ामें लिये ही [illegible] भरकर ले जाती हैं ।

स्नान और तीर्थविधिके पश्चात् मन्दिरमें जाकर दर्शन करना चाहिये । गोदावरीके तटपर जो वन हैं उसमें रहनेवाले कोल-भीलोंको देखकर भगवान् रामचन्द्रके वनवासी सखाओंका स्मरण होता है । ये अत्यन्त श्यामवर्ण सरलस्वभाव और श्रद्धालु होते हैं । दरिद्रतासे तो मानो इनकी मित्रता है । इनके पास शरीर ढकनेके लिये पर्याप्त वस्त्रादि भी नहीं होते । जब ये धर्मशालामें आते हैं तो यात्री उनके जङ्गली फलोंको बड़ी प्रसन्नतासे खरीदते हैं । ये फल रूपमें सीताफल, बेर, शकरकन्द, आम तथा जामुन आदिके समान होते हैं, किंतु स्वादमें सब मीठे और बहुत रुचिकर होते हैं । यहाँके निवासी इन्हें बहुत स्वास्थ्यवर्धक बताते हैं ।

गोदावरीका जल स्वच्छता और गुणमें गङ्गाजलसे बहुत समानता रखता है । जिस प्रकार गङ्गाजीको राजा भगीरथ तपस्या करके लाये थे उसी प्रकार गोदावरीजी महर्षि गौतमकी तपस्याका प्रताप है । गोदावरी ग्राममें संस्कृतपाठशाला, औषधालय, डाकखाना और तारघर भी है । यहाँकी जलवायु अच्छी है । पाठशालाका तो अभाव ही है ।

—:o:—

कृष्णगङ्गा-पन्ना-नृसिंह

कृष्णगङ्गास्नान और पन्ना-नृसिंह भगवान्के दर्शन करनेवाले यात्रियोंको बेजवाडा स्टेशनपर उतरना पडता है। यह गोदावरी स्टेशनसे ९१ मीलकी दूरीपर है। स्टेशनपर गाडी पहुंचनेपर इतनी भीड और कोलाहल होता है कि यात्रियोंकी निद्रा भंग हो जाती है। यहाके निवासी पन्ना नृसिंह-यात्राका बड़ा माहात्म्य बतलाते हैं। स्टेशनपर ही पण्डेलोग मिल जाते हैं। उनके कारण यात्रामें कोई असुविधा नहीं होती।

बैजवाडामें सेठ रामगुलामकी धर्मशाला है। धर्मशाला-से अनुमान दो मीलपर कृष्णगङ्गा (कृष्णा) है। प्रातःकालका

समय होनेके कारण स्नानके लिए अधिकांश यात्री पस्त हो चल जाते हैं। कृष्णगङ्गाका जल यमुनाजीके समान है। इसे दर्शन करनेपर यह मालूम होता है कि श्रीयमुनाजी ही हैं, किन्तु इनका प्रवाह बहुत तेज है।

कृष्णगङ्गामें स्नान और तीर्थविधि करके यात्री मङ्गलगिरि पर पना-नृसिंहदेवके दर्शनार्थ जाते हैं। इस पर्वतपर अनुमान चार सौ सीढ़ियाँ चढ़नेपर भगवानके दर्शन होते हैं। भगवानको शर्बतका भोग लगाया जाता है और वही प्रसादमें मिलता है। इसलिये दर्शनार्थियोंको नीचेसे ही गुड़ या चीनी ले जानी चाहिये।

पर्वतके ऊपर भगवान्‌का सुन्दर मन्दिर है। यात्री दर्शन करके कृतकृत्य हो जाते हैं। अहा! भक्तवत्सल भगवान्‌ने भक्तशिरोमणि प्रह्लादकी रक्षा करनेके लिये ही ऐसा भीषण रूप धारण किया था। इससे उनकी अहैतुकी कृपाका स्मरण करके हृदय गद्गद हो जाता है। मन्दिरमें अहर्निश अखण्ड दीपक जलता है। पुजारी लोग रामानुजसम्प्रदायके हैं। यहाँ विधिवत् पूजा करानेकी पाँच आना दक्षिणा है। दक्षिणमें बड़े मन्दिरोंमें पाँच आना दक्षिणा लेकर विधिवत् पूजन करानेकी प्रथा सी देखनेमें आता है। भगवान्‌के सौ नामोंका पाठ करनेपर पूजा समाप्त होता है। पर्वतके ऊपरसे उत्तरकी ओर बस्ती और कृष्णगङ्गाका मनोहर दृश्य देखते ही बनता है। दर्शनादिसे निवृत्त होकर फिर धर्मशालाको ही लौटकर आना होता है।

चिदम्बरम्

बेजवाडासे मद्रास होते हुए चिदम्बरम् आना [illegible]
यात्रा खुर्दारोड या जटनीसे कोई रामेश्वरका पण्डा [illegible]
यहाँसे अवश्य किसीको साथ ले लेना चाहिये । [illegible]
सुविधा रहती है । यहाँ उनके कर्मचारी स्वयं [illegible]
हुए आ जाते हैं । बैजवाडासे मद्रासतक [illegible]
१२ घंटेकी यात्रा है । मद्राससे छोटी [illegible]
उससे श्रीचिदम्बरमतक प्राय १२ घंटे [illegible]
कर बैजवाडा जंक्शनसे चिदम्बरम् [illegible]
सदर्न इण्डिया रेलवेका स्टेशन है । [illegible]
मिलती हैं । दक्षिणमें सवारीके [illegible]

है। यों यहाँ कहीं नहीं रेल नहीं जाती वहाँ मोटरसर्विसका भी प्रचार होने लगा है। यात्री अधिक संख्यामें पैदल ही चल देते हैं।

चिदम्बरम् बस्तीमें प्रवेश करते ही एक फाटक मिलता है, उसके ऊपर गुम्बजोंपर राम-जानकीकी बड़ी मनोहर मूर्तियाँ हैं, जो हाथसे चिदम्बरम् पुरीके मार्गकी ओर सङ्केत कर रही हैं। रास्तेमें निकट जलके तो सुन्दर सरोवर भी है। यहाँ कई धर्मशालाएँ हैं। अधिकांश यात्री म्युनिसिपैलिटीकी धर्मशालामें ठहरते हैं। यह न अधिक बड़ी है न अधिक छोटी। इसके सिवा अन्यत्र भी अपनी सुविधाके अनुसार यात्रीलोग ठहरते हैं। दक्षिणकी धर्मशालाओंमें शौचादिके लिये उचित प्रबन्ध किसी-किसी धर्मशालामें ही देखा जाता है।

धर्मशालामें ठहरकर यात्रीलोग पहले शिवगङ्गासरोवरमें स्नान करते हैं। कहते हैं इस सरोवरमें नियमानुसार नित्य स्नान करनेसे महाराज हिरण्यवर्माका कुष्ठरोग जाता रहा था। तभीसे इसके प्रति लोगोंकी श्रद्धा उत्तरोत्तर बढ़ता गया है। यहाँ स्नान करके ही यात्री भगवान् नटराजके दर्शनार्थ जाते हैं। भगवान् नटराज या नटेश महादेवके मन्दिरके चारों ओर ऊँचा परकोटा है जिसमें चार फाटक हैं। दक्षिणमें इन्हें गोपुर कहते हैं। इन गोपुरोंकी ऊँचाई १४० फीटके लगभग है। इनमें मूर्तियाँ हैं, तथा दीवारोंपर दक्षिण भारतीय शैलीकी बड़ी सुन्दर चित्रकारी है।

गोपुरके भीतर प्रवेश करनेपर बड़ा सहन मिलता है तथा परकोटेसे लगे हुए बहुत-से छोटे-छोटे कमरे भी हैं। यहाँके तीर्थ

पुजारियोंसे पूछनेपर यह मालूम हुआ कि पहले इस मन्दिरमें वेद-पाठशाला था, उसके छात्रोंके रहनेके लिये ये स्थान बनाये गये थे।

आगे चलकर एक दूसरा दरवाजा आता है। उसके पार जानेपर श्रीकाशी-विश्वनाथके मन्दिरकी भाँति श्रीनटराजके मन्दिरका दर्शन होता है। इसका शिखर सुवर्णपत्रसे मढ़ा हुआ है। मन्दिरके जगमोहनतक जानेके लिये चाँदीसे मढ़ी हुई सीढ़ियाँ हैं। जगमोहन-में पहुँचकर यात्री भगवान्‌के दर्शन करके मन्त्रमुग्ध-से होकर खड़े रह जाते हैं। यहाँके पुजारी जब रुद्राष्टाध्यायीका पाठ करते हुए भगवान्‌का स्तवन करते हैं तो उनका यह वेदघोष सुनकर चित्त आनन्दमें मग्न होने लगता है। यहाँ भगवान्‌का एक हीरेका विग्रह है, जो अत्यन्त स्वच्छ और देदीप्यमान है तथा नर्मदेश्वर महादेवके समान प्रायः ढाई इञ्च लम्बा है। पुजारीलोग इनका विधिवत् पूजन कर इन्हें भानमें ढक देते हैं। फिर दूसरे दिन पूजनके समय ही उनके दर्शन होते हैं। दूसरा शिवलिङ्ग मन्दिरके भीतर है। इसके ऊपर सुवर्णका हार सुशोभित है तथा पास ही सुवर्णमयी अन्नपूर्णाजीका भी दर्शन होता है। तीसरी मूर्ति नीलमणिकी है, जिसका दर्शन समाप्त होनेपर तीर्थपुजारी मूर्तिके पीछे घृतका दीपक रखकर पुनः नीराजन कराते हैं। यह शिवलिङ्ग प्रायः आठ इञ्च लम्बा और चार इञ्च चौड़ा है। इसके भीतर दीपकके प्रकाशमें शिवजीके स्पष्ट दर्शन होते हैं।

इस प्रकार भगवान्‌के दर्शन कर यात्रीलोग मन्दिरके प्राचीरके अन्तर्गत अन्य देवमूर्तियोंके दर्शन करते हैं फिर भगवान्‌के जय-

धारके साथ परिक्रमा करते हुए वे विष्णु भगवान्के मंदिरमें प्रवेश करते हैं। मन्दिरके द्वारपर उन्हें चालीस फीट ऊँचे सुवर्णमण्डित गरुड़स्तम्भके दर्शन होते हैं और फिर तीसरे द्वारके भीतर दीपकके प्रकाशमें भगवान्के दर्शन कराये जाते हैं। चतुर्भुजमूर्ति भगवान् शेषशय्यापर शयन किये हुए हैं। विचित्र वस्त्राभूषणोंसे आपकी अनुपम शोभा है। आप यहाँ गोविंद भगवान्के नामसे विख्यात हैं। आपका विग्रह मनुष्यके आकारसे ना बड़ा है। आपकी मनोहर छविको देखकर यात्री मुग्ध हो जाते हैं और बड़े भक्ति भावसे आपको श्रद्धाञ्जलि समर्पित करते हैं। इसके पश्चात् परिक्रमा में और भी बहुत से देवमंदिरोंमें दर्शन-पूजन करते तथा सहस्र मण्डप देखते हुए यात्री फिर उसी महलमें आ जाते हैं।

यह विशाल देवालय बहुत-सा प्राचीन संस्कृति और कलाओं का स्मरण कराता है। किसी समय इसमें सैकड़ों वैष्णव भगवान्की सेवा करते होंगे। इसके विद्यालयमें सहस्रों छात्र वेद-वेदाङ्गोंकी शिक्षा प्राप्त करते होंगे, अहर्निश वेदध्वनि होती होगी। मन्दिरके परिष्कारादिका सनातनतक प्रबन्ध होगा। यहाँका वायु हर समय अगर आदि सुगन्धित द्रव्योंसे सुवासित रहता होगा। यह सुविशाल मंदिर करोड़ों रुपया व्यय कर बनाया गया है। इसके स्वरूपके अनुसार अब तो इसका कुछ भी प्रबन्ध नहीं है। फिर भी भारतके अन्य स्थानोंकी अपेक्षा यहाँ वेदविद्याका बड़ा आदर है। हालहीमें श्रीपन्नम्मलाई चेटी महोदयने इस मंदिरको कई लाख रुपया दान

दिया है जिससे कि सरकारसे भी सहायता लेकर यहाँ एक संस्कृत महाविद्यालय स्थापित किया जाय। इस समय भी यहाँ संस्कृतकी चार अच्छी पाठशालाएँ हैं।

जगन्नाथपुरीकी भाँति यहाँ भी तीर्थपुजारियोंके सैकड़ों घर हैं और उन सबका अपने-अपने पूजनका समय भी बँटा हुआ है। सायंकालके पश्चात् शिवमन्दिरमें पुजारियोंके सुप्रबन्धसे दीपमालिका-सी हो जाती है। पण्डेलोग यात्रियोंसे मन्दिरके आँगनमें दक्षिणा लेकर प्रमाणरूपमें काशीविश्वनाथकी भाँति शिवजीपर चढ़ा हुआ केशर-कस्तूरीमिश्रित सुगन्धित चन्दन देते हैं।

दक्षिण प्रान्तमें चिदम्बरमका मन्दिर बहुत प्राचीन बताया जाता है। इसके प्रति यहाँके निवासियोंकी बड़ी श्रद्धा है। अधिकांश यात्री चिदम्बरम्‌पुरीकी परिक्रमा करते भी देखे जाते हैं।

यहाँ अन्नक्षेत्र, अनाथालय, डाकखाना और औषधालय आदि भी हैं। एक दातव्य औषधालय है जिसमें विदेशी यात्रियोंकी चिकित्सा आदिका अच्छा प्रबन्ध है।

इस पुरीमें नारियलके वृक्षोंकी अधिकता है। इसकी शोभा देखकर यात्रियोंको बड़ा आनन्द होता है। चिदम्बरमक्षेत्र अत्यन्त पवित्र है। यहाँ महर्षि पतञ्जलिने तप किया था। स्कन्दपुराणमें सेतुबन्धमाहात्म्यके प्रसङ्गमें लिखा है कि चिदम्बरमक्षेत्रमें निवास और तप करनेवालेको उत्तम धर्म करनेवालेके लोकोंकी प्राप्ति होती है।

मदूरा

चिदम्बरम स्टेशनसे मदूरा १५६ मील है। यहाँ सदर्न इण्डियन रेलवेका स्टेशन है। मीनाक्षी भगवतीका मन्दिर स्टेशनसे एक मीलकी दूरीपर है। सवारी मिल जाती है। यहाँ देवस्थान है उसके पास ही रामेश्वरम् नामकी एक विशाल धर्मशाला है। उसके सिवा और बहुत से स्थान हैं। मदूरा काफी बड़ा शहर है। यहाँ ठहरनेके स्थानोंकी कमी नहीं है।

भगवती मीनाक्षीके मन्दिरमें दक्षिणकी शिल्पकलाका बड़ा ही अनूठा प्रदर्शन किया गया है। इसका विस्तार बहुत अधिक है। यह पाय चार सौ गज लम्बा और उतना ही चौड़ा है। उसके चारों ओर चार गोपुर अर्थात् मुख्यद्वार हैं जो ग्यारह ग्यारह मंजिल ऊँचे हैं। मन्दिरके फाटकसे यात्रीलोग अष्टशक्तिमण्डपम होते हुए मीनाक्षी देवीके दर्शनार्थ जाते हैं। इस मण्डपमें शक्तिजीकी आठ मूर्तियाँ हैं। इसी प्रकार और भी कई मण्डप पार करने होते हैं तब सुवर्णपुष्करिणी नामका सरोवर आता है। जगन्नाथजीकी भाँति इस सरोवरमें भी मुख्य मुख्य उत्सवोंके अवसरपर भगवती आदि देवताओंकी मूर्तियोंको नौकामें उठाकर जलविहार कराया जाता है। यहाँ बारह स्तम्भ हैं, जिनपर पाण्डवोंकी प्रतिमाएँ बनी हुई हैं।

तीन पौरियोंको पार करनेपर दीपकके प्रकाशमें भगवतीके दर्शन होते हैं। भगवतीका शरीर श्यामवर्ण और वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित है। इस प्रकार अभयकरी वरदायिनी जगन्माताका दर्शन कर यात्री प्रफुल्लित हो जाते हैं। मन्दिरके द्वारपर सिंहोंकी दो विशाल मूर्तियाँ हैं, ये भगवतीके द्वारपाल हैं। दर्शन करके लौटते समय यात्रीलोग इन्हें भी मस्तक नवाते हैं। जिस यात्रीकी इच्छा होती है उससे दक्षिणा लेकर पुजारीलोग उसकी ओरसे भगवतीका विधिवत् पूजन कर देते हैं।

यह मन्दिर १५६५ ई० के लगभग बना बताया जाता है। इसकी दीवारोंपर पुराणोंकी कथाएँ और उन्हींके अनुसार तरह-तरहके चित्र अंकित हैं। मन्दिरके भीतर बाजार भी लगता है। बहुत से यात्री इस मन्दिरका फोटो भी उतरवाकर ले जाते हैं।

इसी मन्दिरमें सुन्दरेश्वर महादेवका भी एक विशाल मन्दिर है। अपने नामके अनुसार जैसा भगवान्‌का विग्रह सुन्दर है वैसा ही यह मन्दिर भी है। मन्दिरके सामने एक सुनहरा स्तम्भ है। भगवान् रामचन्द्रजी जब लङ्काविजय करनेके लिये जा रहे थे उस समय उन्होंने सुन्दरेश्वर शंकरका पूजन किया था। यहाँ दर्शन पूजन कर यात्रियोंको बड़ी प्रसन्नता होती है। यह मन्दिर २८२ गज लम्बा, २४८ गज चाडा और प्राय १४२ फुट ऊँचा है। मदूराकी कारीगरी भारतवर्षमें प्रसिद्ध है।

यहाँ राजा तिरमलाई नामका महल भी देखनेयोग्य है। जिस प्रकार बिठूरकी यात्रा करनेपर नाना साहबके महलोंके खण्डहर

देखकर यात्रियोंको समारसे उदासीनता हो जाती है उसी प्रकार यहाँ राजा तिरुमलाई नामके महलोंको देखकर भी महाराज भर्तृहरिके वैराग्यशतकका कथा स्मरण हो आती है।

मदरासे पाँच मीलकी दूरीपर एक पर्वत है। कहते हैं, जिस समय सीताजीको खोजते हुए वानरोंको पता लगा कि वे समुद्रपार लंकामें हैं तो वहाँ पहुँचनेका कोई उपाय न देखकर सब प्रायोपवेश करके समुद्रतटपर बैठ गये। किसीको भी सौ योजन समुद्र लँघनेका साहस नहीं हुआ। उस समय इसी पर्वतपर ऋक्षराज जाम्बवान्‌ने हनुमान्‌जीको उनके बलका स्मरण कराया था, जिससे वे समुद्र लाँघनेके लिये तैयार हुए थे। बहुत से भावुक और श्रद्धालु यात्री इस पर्वतके दर्शनार्थ जाते हैं। यहाँ कोई धर्मशाला आदि बन जाय तो यात्रियोंको ठहरनेकी सुविधा हो जाय।

यहाँके ब्राह्मण वेदपाठी और बड़े कर्मनिष्ठ होते हैं। यहाँ संस्कृत विद्याका अच्छा प्रचार है। यह जिलेका स्थान है, जलवायु अच्छा है। भोजनकी सब सामग्री मिल जाती है। फलादिका भी अभाव नहीं है। डाकखाना, तारघर, कई संस्कृत पाठशालाएँ तथा औषधालय आदि हैं। भगवती मीनाक्षी और भगवान् सुन्दरेश्वरका दर्शन-पूजन सब प्रकारके पापोंका नाश करनेवाला और दरिद्रताको दूर करनेवाला है। इस स्थानका माहात्म्य शिवभक्तिविलास और महाभारतमें कई जगह आया है। पाण्ड्यवंशके राजालोग मीनाक्षी देवीका सदासे पूजन करते रहे हैं।

श्रीरामेश्वरम्

लङ्का विजेतु कपिभालुमुख्यै-
र्निबध्य सेतु सरिता पतौ च।
श्रीरामचन्द्रेण सुपूजित वै
रामेश्वराख्य सतत नमामि॥

मद्रासे रामेश्वरम् १३८ मील है। रामेश्वरपुरी रामराजाकी जमींदारीमें है, परन्तु रामेश्वरजीका प्रबन्ध ब्रिटिश गवर्नमेण्ट करती है। जिस स्थानपर रामेश्वरजीकी स्थापना हुई है उसे शास्त्रोंमें गन्धमादनपर्वत कहा गया है। यह अनुमान आठ-दस मील लम्बा चौड़ा एक टापू-सा है। वानरोंने जो सेतु बाँधा था वह

सम्भवत उसीका एक खण्ड है। यात्रीलोग मदूरासे रामेश्वरम् जानेके लिये जिस गाड़ीमें बैठते हैं, वह सीधी धनुष्कोटितीर्थको चली जाती है। यहाँ समुद्रतीरपर वानरसेनाने डेरा डाला था, इसलिये यह प्रान्त 'वानरवनम्' के नामसे प्रसिद्ध है। यहाँसे रामेश्वरम्तक बीचमें समुद्रकी खाडी है। उसपर रेलवे कम्पनीने सेतुबन्धपर ही लोहेके गार्टर खडे करके पुल बनाया है, उसीके ऊपर होकर रेल आती-जाती है। सेतुके खण्डोंके ऊपर समुद्रका जल हिलोरें ले रहा है, कहीं किसी खण्डके दर्शन हो जाते हैं।

जिस समय गाडी सेतुके ऊपर होकर जाने लगती है उस समय उसकी गति मन्द पड़ जाती है। तीर्थपुजारियोंके सेवक यात्रियोंको समुद्रके नीचे स्थित सेतुके दर्शन कराते हैं। उस समय श्रद्धावान् यात्री खिड़कियोंसे सिर निकालकर श्रीरामचन्द्रजीकी जय बोलते हुए सेतुकी पूजाके लिये पुष्प, सुपारी, पैसा, रुपया, यज्ञोपवीत, नारियल आदि वस्तुएँ समुद्रके जलमें छोड़ देते हैं। सेतुकी लंबाई चार सौ कोस और चौड़ाई ४० कोस बतलायी जाती है। कहते हैं, कभी-कभी सूर्योदयके समय, जब समुद्रकी तरङ्गें उतरी होती हैं, सेतुके दर्शन भी हो जाते हैं। इसके बीचमें कई जगह गहरी खाइयाँ हैं। उनके विषयमें ऐसी कहावत है कि विभीषणकी प्रार्थनासे भगवान् रामने सेतुको तोड़ दिया था।

इस प्रकार पुल पार करके गाड़ी रामेश्वरम् स्टेशनपर पहुँचती है। पुरी तथा मन्दिर स्टेशनसे बहुत दूर नहीं है। स्टेशनपर

पहुँचते ही यात्रीलोग आनन्द और उत्साहपूर्वक रामनाथबाबाका जयघोष करते हुए अपना-अपना सामान लेकर पैदल या बैलगाड़ियोंपर चढ़कर चल देते हैं। पुरीमें प्रवेश करनेसे पूर्व सदर सड़ककी बायीं ओर सर हरीराम गोयनकाकी धर्मशाला है। इसके सामने सड़कके किनारे पानीका नल लगा हुआ है। दूसरी धर्मशाला श्रीरामेश्वरजीके मन्दिरसे कुछ ही दूरीपर नशीलाल अमीरचन्दकी है। यह भी बहुत अच्छी है। तीसरी रायबहादुर भगवानदास बागलाकी है। यह रामझरोखाको जाते समय उस रास्तेमें दाहिने हाथकी ओर है। इसमें सब प्रकारकी सुविधाएँ हैं। इन्हींमें यात्रीलोग अपनी-अपनी सुविधाके अनुसार ठहर जाते हैं।

ऊपर कहा जा चुका है कि रामेश्वरका मन्दिर जिस टापूपर है वह गन्धमादनपर्वत कहलाता है। इसके विषयमें ऐसी कथा प्रचलित है कि यह पर्वत सेतुके बीचमें पड़ता था। इससे सेतुके काममें अड़चन पड़ती देख भगवान् रामने हनुमान्जीको इसे दबानेकी आज्ञा दी। हनुमान्जीने इसे अपने पैरोंसे दबाकर सेतुसे समतल कर दिया, तब भगवान्ने सेतुकी प्रतिष्ठा करते समय इसके ऊपर एक शिवलिंग स्थापित करनेका विचार किया और हनुमान्जीको कैलाससे शिवलिङ्ग लानेकी आज्ञा दी, किन्तु हनुमान्जीके आनेपर कार्यमें अधिक विलम्ब होता देख भगवान्ने यहाँ बालुकामय शिवलिङ्गकी स्थापना कर दी और अपने धनुषकी कोटि (नोक) से प्रकटकर भगवान् रामेश्वरका अभिषेक किया। इतने-

तीर्थ हनुमान्‌जी शिवलिङ्ग लेकर लौट आये, किन्तु यहाँ पहले ही स्थापना हुई देखकर उन्हें चित्तमें कुछ खेद हुआ। तब भगवान्‌ने उनके लाये हुए लिङ्गकी स्थापना श्रीरामेश्वरजीके पार्श्व और हनुमदीश्वरके नामसे कर दी और कहा कि जो स्त्री पुरुष श्रीरामेश्वरके साथ हनुमदीश्वरपर भी गङ्गोत्तरीका जल चढ़ावेंगे वे भव सागरसे पार हो जायँगे।

तीर्थ विधि

गङ्गापूजन—यहाँ पहले गङ्गापूजन करना होता है। जिन यात्रियोंके पास गङ्गाजल होती है व उसे लेकर अपने तीर्थपुरोहितके घर जाते हैं, जिनके पास नहीं होती उन्हें दक्षिणा देनेसे यहाँ गङ्गाजल मिल जाता है। यहाँके तीर्थपुजारी बड़े विद्वान् होते हैं। वे सबसे पहले यात्रियोंके मस्तकपर धारण करनेके लिये भस्मभस्म देते हैं। फिर विधिवत् पूजन कराते हैं।

रामेश्वरपूजन—पण्डेलोग पूजनकी सब सामग्री बाजारसे मँगा देते हैं। उसके साथ यात्रीलोग रामेश्वरपुरीके बाजारमें होकर मन्दिरके शिखरका दर्शन करते हुए चले जाते हैं। जिस समय यात्री मन्दिरके पास पहुँचते हैं उस समय भगवान् रामेश्वरकी जयध्वनि करते हैं। इस विशाल देवालयको देखकर उनका हृदय उत्साहसे भर जाता है। यह प्राय एक हजार फीट लम्बा, साढ़े छ सौ फीट

चौड़ा ओर सवा सो फाट ऊँचा हे । इसके प्राचीरमे चारों दिशाओं-में चार द्वार हैं । प्राचीरमे प्रवेश करनेपर मन्दिरका बाजार मिलता है । उसमे शङ्ख, सीपी, त्रह्मभस्म, नारियल और तरह तरहके चित्रोंकी दूकानें हैं । मन्दिरकी परिक्रमामें श्रीराम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, महादेवजी, गणेशजी और महावीरजी आदिक दर्शन होते हैं । जहाँ तहाँ खम्भोंसे लगे हुए अनेको राजा महाराजाओंके चित्र हैं, जिन्हे देखनेसे ऐसा जान पडता है मानो ये इस मन्दिरका भार उठाये हुए हैं ।

परिक्रमाकी सड़क काफी चोड़ी है । इस प्रकार कई परिक्रमाएँ करके यात्री श्रीरामेश्वरजीके जगमोहनके समीप पहुँच जाते हैं । यहाँ एक ओर मोटे-मोटे सीकचोंसे घिरे हुए दरवाजेपर सङ्गीनी पहरा लगा हे । पूछनेपर मालूम हुआ कि यह शिवजीका खजाना है । इसका प्रबन्ध गवर्नमेण्टके हाथमें है । यहाँ एक परीक्षा-गृह भी है जिसमें ब्राह्मण यात्रियोंकी परीक्षा होती है । मन्दिरके जगमोहनमें जाकर तो चारों वर्ण भगवान्के दर्शन कर सकते है, किन्तु ब्राह्मणोंको यदि वे साक्षर हों और सन्ध्याके मन्त्र तथा गायत्रीका शुद्ध उच्चारण कर सकते हों तो दूसरे दरतक जानेके लिये एक टिकिट मिलता है जिसको देखकर मन्दिरका पुजारी उन्हें वहाँतक जानेकी आज्ञा दे देता है । भगवान् रामेश्वर तीसरे दरमें हैं । उस साक्षर ब्राह्मणके साथ उसके घरकी देवियाँ भी जा सकती हैं । इसी जगह, जो लोग श्रीरामेश्वरजीपर चढ़ानेके लिये गङ्गाजल लाते हैं, वे उसे एक टिकिटके सहित पुजारीको दे देते हैं और पुजारीजी उनके सामने ही उसे भगवान्पर चढ़ा देते हैं ।

इस प्रकार भगवान् रामेश्वरका दर्शन करके आगे बढ़नेपर कीर्तिस्तम्भके पास श्रीगमन लगाये बृहत्काय श्रीनन्दीश्वरके दर्शन होते हैं। आप श्रीरामेश्वरजीके ठीक सामने जगमोहनके बाहर विराजमान हैं और अपनी जिह्वासे ओठोंको चाट रहे हैं। जगमोहन की कुर्सी प्रायः चार फीट ऊँची है, उसके सामने प्रायः पन्द्रह फीट लम्बा और चार फीट चौड़ा मोटे मोटे सीकचोंसे घिरा हुआ एक स्थान है, उसीके बीचमें श्रीनन्दीश्वरकी मूर्ति विराजमान है। मन्दिरके दाहिनी ओर जगज्जननी श्रीपार्वतीजीका मन्दिर है, जिसे श्रीअन्नपूर्णाजीका मन्दिर कहते हैं तथा बायीं ओर श्रीहनुमदीश्वरका मन्दिर है इन्हें विश्वनाथजी भी कहते हैं। इन तीनों मन्दिरोंके जगमोहनमेंसे ही दर्शन होते हैं। यात्रीलोग गङ्गाजल तथा पुष्पादि अन्य पूजनकी सामग्री लिये खड़े रहते हैं। जिस समय रामेश्वरजीके पट खुलते हैं, उनके हर्षका कोई ठिकाना नहीं रहता। पुजारीजी क्रमशः एक-एक व्यक्तिसे गङ्गाजल लेते जाते हैं। इस प्रकार जब सब यात्रियोंका गङ्गाजल शिवार्पण हो जाता है तब पट बन्द कर दिये जाते हैं। इस समय भगवान्का शृङ्गार होता है। जब पट खुलते हैं तो वे उत्तम श्वेत वस्त्र, सुवर्णमय त्रिपुण्ड्र और पुष्प तथा बिल्वपत्रोंका हार धारण किये होते हैं। उस समय कर्पूरादिसे उनकी आरती की जाती है। भगवान्के दर्शन पाकर यात्री भोलानाथकी जय बोलते हुए आनन्दमग्न हो जाते हैं। जबतक पुनः पट बन्द नहीं होते तबतक दर्शकोंमें आनन्दोत्साहकी लहर-सी उठती रहती है। इसी प्रकार जब यात्रियों-का एक दल दर्शन कर चुकता है तो पट बन्द हो जाते हैं और

इसी क्रमसे दूसरा दल दर्शन करता है। इसी प्रकार रात्रिके दस बजेतक दर्शन पूजनका क्रम चलता है।

समुद्रस्नान—मन्दिरके पूर्वकी ओर समुद्रपर एक घाट है। उसका नाम अग्नितीर्थ है। यहाँ समुद्रस्नान किया जाता है। यहींपर लङ्कासे आते समय भगवान्‌का पुष्पक विमान उतरा था। उस जगह अन्नदान करनेका बड़ा माहात्म्य है।

रामेश्वरधामके अन्य तीर्थ

इस धाममें बहुत-से तीर्थ हैं। वे प्राय कुण्डोंके रूपमें ही हैं। उन सभीका जल मीठा है। उनके सिवा और किसी कुएँका जल मीठा नहीं है। नीचे उनका संक्षिप्त विवरण दिया जाता है।

१—लक्ष्मणसरोवर—यह रामेश्वरपुरीसे प्राय २ मील है। रास्ता अच्छा न होनेके कारण गाडी भाड़ा प्राय ।।) सवारी लगता है। सरोवरमें जल अधिक है, इसके तटपर पक्का घाट और श्रीलक्ष्मणजीके स्थापित किये हुए श्रीलक्ष्मणेश्वर महादेव हैं। इस सरोवरमें स्नान तथा पिण्डदान करनेकी विधि है।

२—रामसरोवर—यह एक पक्का कुण्ड है। जल बहुत स्वच्छ है। किनारेपर भगवानका मन्दिर है।

३—सीतासरोवर—इसका जल सूख गया है।

४—चक्रतीर्थ—यहाँ गालव मुनिने कठोर तपस्या करके श्रीविष्णुभगवान्‌को प्रसन्न किया था। इसमें स्नान करनेसे गङ्गा, यमुना, नर्मदा, गोदावरी, कावेरी आदि नदियोंमें स्नान करनेका पुण्य होता है और भगवान्‌के चरणोंमें भक्ति बढ़ती है।

५–मङ्गलतीर्थ–इस पवित्र तीर्थमें श्रीलक्ष्मीजीका निवास है। यहाँ तीर्थविधि करनेसे उनकी प्रसन्नता होती है और दरिद्रता नष्ट हो जाती है।

६–अमृतवापीतीर्थ–इस स्थानपर भगवान् राम सीताजी, लक्ष्मणजी तथा हनुमान्‌जीके सहित निवास करते हैं, इसका सेवन करनेसे निर्मल ज्ञानकी प्राप्ति होती है।

७–ब्रह्मकुण्ड–यहाँ श्रीब्रह्माजीने बहुत-से यज्ञ किये हैं, इसका दूसरा नाम 'ब्रह्महत्याविमोचनतीर्थ' भी है। यहाँ तीर्थविधि करनेसे बड़े से बड़ा पाप नष्ट हो जाता है।

८–लक्ष्मीतीर्थ–जिस समय महाराज युधिष्ठिर वनवासके कारण दुःखी हो गये थे उस समय भगवान् कृष्णने द्वारकासे आकर उनको सान्त्वना देते हुए यह उपदेश किया था कि तुम रामेश्वर-पुरीमें जाकर लक्ष्मीतीर्थमें स्नान और तीर्थविधि करो। उसके प्रभावसे तुम्हें राज्यसुख प्राप्त होगा। युधिष्ठिरने ऐसा ही किया और इसीसे वे कुरुक्षेत्रके महासमरमें विजयी हुए।

९–शुक्रतीर्थ–यह तीर्थ अहिर्बुध्न्य ऋषिकी तपस्यासे प्रकट हुआ है। यहाँ विधिवत् स्नानादि करनेसे अङ्गहीन पुरुष भी दिव्य देह प्राप्त करते हैं।

१०–शिवतीर्थ–जब कालभैरवने ब्रह्माजीका पाँचवाँ सिर काट लिया था उस समय उस हत्याको दूर करनेके लिये उन्होंने शिवतीर्थपर आकर स्नान किया। यहाँ स्नानादि करनेसे सम्पूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं।

११–शङ्खतीर्थ–इस तीर्थको प्रकट करनेके लिये शङ्खमुनिने सहस्रों वर्ष कठोर तप किया था और विष्णुभगवान्‌से यह वर माँगा

था कि रामेश्वरमें आकर जो यात्री इस पवित्र तीर्थमें स्नानादि करे वे माता-पिताके निरादर-जैसे पापोंसे भी मुक्त हो जायँ ।

१२–**साध्यामृततीर्थ**–इस पुनीत तीर्थमें स्नानादि करनेसे सूर्य जैसे अन्धकारको और इन्द्रका वज्र जैसे दैत्योंको नष्ट कर देता है उसी प्रकार सारे पाप नष्ट हो जाते हैं ।

१३–**सर्वतीर्थ**–कहते हैं, यज्ञ, दान, जप, वेदपाठ, व्रत तथा भगवान् विष्णु और शिवकी भक्तिसे जो फल प्राप्त होते हैं वे सभी इस तीर्थमें स्नान करनेसे मिल जाते हैं । मनुष्यके शरीरमें पाप तभीतक रहते हैं जबतक वह 'सर्वतीर्थ' में स्नान नहीं करता ।

१४–**धनुषकोटितीर्थ**–नर्मदातटपर तपस्या करनेसे, भागीरथी-तटपर मरण होनेसे, कुरुक्षेत्रमें दान देनेसे जिस फलकी प्राप्ति होती है वही फल धनुषकोटितीर्थमें स्नान करनेसे मिलता है ।

१५–**पापविनाशनतीर्थ**–इस तीर्थमें स्नान करनेसे ही समस्त पापोंका नाश होकर विष्णु भगवान्‌में भक्ति बढ़ने लगता है ।

१६–**कपितीर्थ**–लङ्कासे विजय प्राप्त करके जब भगवान्‌ने पुष्पक विमानको उतारकर रामेश्वरजीका पूजन किया तो उनका अभिषेक करनेके लिये उन्होंने गङ्गाजीका आवाहन किया । उस समय उन्होंने अपने धनुषकी नोकसे गङ्गाजलको प्रकट किया था । जो यात्री गङ्गाजल नहीं ले जा सकते वे कोटितीर्थके जलसे ही भोलानाथको प्रसन्न करते हैं ।

१७–**वैतालवरदतीर्थ**–इस तीर्थपर स्नान करनेसे निर्बल मनुष्य बलवान् हो जाते हैं । यहाँ वैतालवरदने तप किया था और भगवान्‌से

यहाँ वर माँगा था कि यहाँपर जो प्राणी स्नान एवं जलपानादि करें उनके जठराग्निकी वृद्धि हो। कहते हैं, इस जलमें पाचनशक्ति अधिक है। इसका नियमपूर्वक सेवन करनेसे प्राणी रोगमुक्त हो जाते हैं।

१८-सीताकुण्डतीर्थ—इस कुण्डमें सभी तीर्थोंका निवास है। काशी आदि तीर्थ भी इस पुनीत तीर्थका सेवन करते हैं। इन्द्रकी ब्रह्महत्या इसी तीर्थमें स्नान करनेसे दूर हुई थी। इसके जीर्णोद्धारकी आवश्यकता है।

१९-जटातीर्थ—भगवान्‌ने लङ्कासे लौटकर इस तीर्थपर अपनी जटाएँ धोकर स्नान किया था। इसमें स्नान करनेसे गोदावरी आदिके स्नानका फल मिलता है।

२०-गङ्गा-यमुना-सरस्वतीतीर्थ—इस पवित्र तीर्थकी बड़ी महिमा है। यह रैक्व मुनिका प्रकट किया हुआ है। कहते हैं, वे पङ्गु थे। जब कोई पुनीत पर्व पड़ता तो गन्धमादनपर्वतनिवासी समस्त ऋषि-मुनिगण तीर्थस्नानके लिये चले जाते थे। रैक्व मुनि अकेले ही रह जाते थे। इससे उन्होंने दुःखी होकर राजा भगीरथकी भाँति तपस्या करनी आरम्भ कर दी। उन्होंने प्रण किया कि जबतक गङ्गा, यमुना और सरस्वती आकर प्रकट न होंगी तबतक मैं अन्न-जल ग्रहण नहीं करूँगा। इस प्रकार सहस्रों वर्ष निराहार रहकर तपस्या करनेपर गङ्गा, यमुना और सरस्वती तीनोंहीको अलग-अलग तीन धाराओंमें प्रकट होना पड़ा। इस प्रकार यह तीर्थ त्रिवेणीके समान है और इसमें स्नान करनेसे त्रिवेणीस्नानका फल प्राप्त होता है।

२१–**चन्द्रतीर्थ**–इसमे स्नानादि करनेसे हृदयके दाहका रोग शान्त होता है और शरीरकी कान्ति बढ़ जाती है। इसका नित्य सेवन करनेवाले भक्तको चन्द्रलोकका प्राप्ति होती है।

२२–**सरस्वतीतीर्थ**–यहाँ तीर्थविधि करनेसे मूर्ख मनुष्य भी विद्वान् हो जाता है। इस तीर्थमें सरस्वतीदेवी लोककल्याणके लिये सदा ही निवास करती हैं।

२३–**गायत्रीतीर्थ**–इस तीर्थपर गायत्रीदेवीका निवास है। यहा प्राचीनकालसे ही भक्तजन गायत्रीका पुरश्चरण करते रहे हैं। इस स्थानपर नियमपूर्वक गायत्रीजप करनेवालेको अब भी गायत्रीदेवीका दर्शन हो सकता है।

२४–**रामझरोखा**—यह पवित्र स्थान रामेश्वरपुरीसे प्राय दो मीलकी दूरीपर है। रास्ता रेतीला है। प्राय ॥), ।॥) में बैलगाड़ी हो जाती है। मार्गमें पहले सुग्रीवतीर्थ आता है। कहते हैं, एक बार वानरी सेनाके अत्यन्त तृषाकुल होनेपर वानरराज सुग्रीवने कुपित होकर पृथ्वीपर अपनी गदा दे मारी। उससे एक जलकी धारा प्रकट हुई। वही इस समय एक छोटे-से कुण्डके रूपमें विद्यमान है। उससे आगे एक हनुमानजीका मन्दिर आता है। इसके सामने जो बागीचा है उसका जल बहुत ठण्डा और मीठा है। यहाँ पुजारीलोग हनुमान्‌जीके प्रसादरूपसे घीमें छुके हुए चने देते हैं। इसके आगे रामझरोखा है। यह बालूके टीलेके ऊपर एक दो मंजिला खुला हुआ स्थान है। इसके तीन ओर समुद्र लहरा रहा है। वर्षा-ऋतुमें यहाँ बड़ा आनन्द रहता होगा। बड़ा

द्वारकाखण्ड

श्रीरङ्गजी

श्रीरङ्गम् जानेके लिये त्रिचनापल्ली स्टेशनपर उतरना पड़ता है। यह सदर्न इण्डिया रेल्वेका स्टेशन है और श्रीरामेश्वरम्से १०६ मीलकी दूरीपर है। स्टेशनसे मन्दिर प्राय दो मील है। यह जगत्प्रसिद्ध मन्दिर इतना बड़ा है कि दूरसे एक किलेके समान जान पड़ता है। इसमें सात परकोटे हैं जिनमेंसे प्रत्येक इतना चौड़ा है कि एक साथ सहस्रों मनुष्य परिक्रमा दे सकते हैं। परिक्रमामें ही बहुत सी दूकानें हैं, जिनके कारण बड़ा अच्छा खासा बाजार ही लगा रहता है। मन्दिरके द्वारपर हाथियोंकी दो

विशाल मूर्तियाँ हैं, तथा जगमोहनके सामने प्राय पचास फीट ऊँची गरुडजीकी मूर्ति है। गरुडजीकी इतनी बड़ी मूर्ति भारतवर्षमें सम्भवत और कहीं नहीं होगी। इस मन्दिरमें दाक्षिणात्य शिल्पकला-का बड़ा सुन्दर प्रदर्शन किया गया है। कई जगह सुवर्णका भी काम है। जगमोहनसे ही भगवान्के दर्शन होते हैं। मन्दिरके भीतर अँधेरा रहता है, इसलिये अहर्निश एक घृतका दीपक जलता रहता है उसके प्रकाशमें भगवान्के दर्शन होते हैं। भगवान् शेषशय्यापर शयन किये हुए हैं, उनके शिरपर सुवर्णका मुकुट है, चार भुजाएँ हैं, गलेमें सुवर्णका यज्ञोपवीत है, वे श्यामशरीर-पर सुन्दर पीताम्बर और पुष्पहार धारण किये हैं। भगवान्की भव्य छविका दर्शन करके यात्री कृतकृत्य हो जाते हैं। भगवान्के आस-पास लक्ष्मीजी तथा विभीषणजी आदिकी प्रतिमाएँ भी विराज-मान हैं। यहाँ प्रसादमें मिष्टान्न तथा भगवान्के अङ्गका उतरा हुआ सुगन्धित चन्दन मिलता है।

भगवान्की प्रतिमा बहुत प्राचीन है। वर्तमान मन्दिरका पुनरुद्धार भगवान् रामानुजाचार्यने सन् ११३२ ई० मे किया था। तबसे यह मन्दिर उन्हींकी गद्दीके अधीन है। श्रीवृन्दावन धामका रङ्गजीका मन्दिर इसी मन्दिरकी प्रतिकृति है।

इस मन्दिरसे कुछ दूरीपर श्रीजम्बुकेश्वर महादेवका मन्दिर है। यह भी सुन्दरता और विस्तारमें श्रीरङ्गजीके मन्दिरकी होड करता है। इसमें पाँच परिक्रमाएँ हैं। इसकी सेवाके लिये १५ गाँव लगे हुए हैं, जिनकी वार्षिक आय प्राय दश हजार रुपया

श्रीबालाजी

श्रीबालाजीके दर्शनोंके लिये यात्रियोंको तिरुपती स्टेशनपर उतरना होता है। काञ्चीवरम्से तिरुपती जानेके लिये रेनीगुण्टामें गाड़ी बदलनी पड़ती है। स्टेशनके पास ही कई धर्मशालाएँ हैं। यहाँसे प्राय एक मील सुवर्णमुखी नदी है और पास ही कपिल-गंगासरोवर है, उसके पास अश्वत्थामाजीका मन्दिर है। अश्वत्थामाजी द्रोणाचार्यजीके पुत्र हैं और अभीतक जीवित माने जाते हैं। यहाँ उन्होंने तपस्या की है। तीर्थपुजारियोंका कथन है कि भारतवर्षमें अश्वत्थामाजीका केवल यही एक मन्दिर है।

इसके पश्चात् बालाजी जानेके लिये यात्रियोंको वेंकटाचल पर्वतपर चढ़ना होता है। यह पर्वत समुद्रके धरातलसे प्राय पचीस सौ फीट ऊँचा है। जो चढ़नेमें असमर्थ हैं उनके लिये नीचे डोली मिल जाती है। पर्वतके ऊपर कुछ दूर चढ़ चुकनेपर स्वर्गद्वार आता है। यहासे ऊपरको सीधी सीढ़िया जाती हैं।

यहाँ बहुत से यात्री सीढ़ियोंपर अपना नाम खुदवाते हैं। चढ़ाईकी जगह विश्राम करनेके लिये जगह बनी हुई है जहाँ जलपानके लिये कुछ फल आदि भी मिल जाते हैं और जलके कुण्ड भी हैं। यात्री उठते-बैठते पर्वतपर पहुँच जाते हैं। यहाँ एक मैदान है और एक धर्मशाला भी बनी हुई है। इस स्थानपर पहुँचकर यात्री कुछ देर आराम करते हैं और फिर सरोवरमें स्नान कर देवाधिदेव श्रीबालाजीके दर्शन करते हैं।

भगवान्का मन्दिर अच्छा विशाल है। तीन परकोटोंसे घिरा हुआ है। बीचमें गुम्बजदार मन्दिर है, जिसके द्वारपर जय और विजयकी मूर्तियाँ हैं। मन्दिरमें अहर्निश घृतका दीपक जलता रहता है, उसके प्रकाशमें चतुर्भुजमूर्ति भगवान् विष्णुके रूपमें श्रीबालाजीकी झाँकी होती है। मन्दिरके किवाड़, चौखट चाँदी-सोनेके पत्रोंसे मढ़े हुए हैं। यहाँ नित्य सैकड़ों यात्री दर्शनार्थ आते हैं, विशेष पर्वोंपर तो सहस्रोंकी भीड़ हो जाती है। मन्दिरके निकट स्वामिपुष्करिणी नामका सरोवर है जिसमें चारों ओर सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। सरोवरके पास एक मण्डप है और वाराह भगवान्के दर्शन भी हैं।

मन्दिरकी वार्षिक आय प्रायः दो लाख रुपया है और ऐसा ही खर्च भी है। सन् १८४३ ई० तक इस मन्दिरका प्रबन्ध गवर्नमेण्टके हाथमें था, फिर एक महन्तके हाथमें रहा और अब एक कमेटी इसका प्रबन्ध करती है। मन्दिरके पुजारी श्रीसम्प्रदायके वैष्णव हैं।

श्रीबालाजी

श्रीबालाजीके दर्शनोंके लिये यात्रियोंको तिरुपती स्टेशनपर उतरना होता है। काञ्चीवरम्‌से तिरुपती जानेके लिये रेनीगुण्टामें गाड़ी बदलनी पड़ती है। स्टेशनके पास ही कई धर्मशालाएँ हैं। यहाँसे प्राय एक मील सुवर्णमुखी नदी है और पास ही कपिल गंगासरोवर है, उसके पास अश्वत्थामाजीका मन्दिर है। अश्वत्थामाजी द्रोणाचार्यजीके पुत्र हैं और अभीतक जीवित माने जाते हैं। यहाँ उन्होंने तपस्या की है। तीर्थपुजारियोंका कथन है कि भारतवर्षमें अश्वत्थामाजीका केवल यही एक मन्दिर है।

इसके पश्चात् बालाजी जानेके लिये यात्रियोंको वेंकटाचल पर्वतपर चढ़ना होता है। यह पर्वत समुद्रके धरातलसे प्राय पच्चीस सौ फीट ऊँचा है। जो चढ़नेमें असमर्थ हैं उनके लिये नीचे डोली मिल जाती है। पर्वतके ऊपर कुछ दूर चढ़ चुकनेपर स्वर्गद्वार आता है। यहाँसे ऊपरको सीधी सीढ़ियाँ जाती हैं।

यहाँ बहुत से यात्री सीढ़ियोंपर अपना नाम खुदवाते हैं। चढ़ाईकी जगह विश्राम करनेके लिये जगह बनी हुई है जहाँ जलपानके लिये कुछ फल आदि भी मिल जाते हैं और जलके कुण्ड भी हैं। यात्री उठते-चढ़ते पर्वतपर पहुँच जाते हैं। यहाँ एक मैदान है और एक धर्मशाला भी बनी हुई है। इस स्थानपर पहुँचकर यात्री कुछ देर आराम करते हैं और फिर सरोवरमें स्नान कर देवाधिदेव श्रीबालाजीके दर्शन करते हैं।

भगवान्का मन्दिर अच्छा विशाल है। तीन परकोटोंसे घिरा हुआ है। बीचमें गुम्बजदार मन्दिर है, जिसके द्वारपर जय और विजयकी मूर्तियाँ हैं। मन्दिरमें अहर्निश घृतका दीपक जलता रहता है, उसके प्रकाशमें चतुर्भुजमूर्ति भगवान् विष्णुके रूपमें श्रीबालाजीकी झाँकी होती है। मन्दिरके किवाड, चौखट चाँदी-सोनेके पत्रोंसे मढ़े हुए हैं। यहाँ नित्य सैकड़ों यात्री दर्शनार्थ आते हैं, विशेष पर्वोंपर तो सहस्रोंकी भीड़ हो जाती है। मन्दिरके निकट स्वामिपुष्करिणी नामका सरोवर है जिसमें चारों ओर सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। सरोवरके पास एक मण्डप है और वाराह भगवान्के दर्शन भी हैं।

मन्दिरकी वार्षिक आय प्राय दो लाख रुपया है और ऐसा ही खर्च भी है। सन् १८४३ ई० तक इस मन्दिरका प्रबन्ध गवर्नमेण्टके हाथमें था, फिर एक महन्तके हाथमें रहा और अब एक कमेटी इसका प्रबन्ध करती है। मन्दिरके पुजारी श्रीसम्प्रदायके वैष्णव हैं।

यात्रीलोग यहाँ भण्डारे भी कराते हैं और जिनके साथ बाल बच्चे होते हैं वे उनका मुण्डन भी कराते हैं। यहाँ ठहरनेके लिये धर्मशालाएँ हैं तथा कुछ दूकानें भी हैं।

मन्दिरसे प्रायः तीन मीलकी दूरीपर पापनाशिनी गङ्गा है, जो पहाड़ोंके बीचमें बहती हुई इसी स्थानसे नीचेको गिरती है। फिर बालाजीकी ओर लौटनेपर आकाशगङ्गाके दर्शन होते हैं। इस पर्वतके ऊपर ही हाथीबाबा नामके एक महात्माका स्थान है, जिन्होंने यहाँ बारह वर्षतक एक प्रकारकी पत्ती खाकर तपस्या की थी। यह पहाड़ लाल पत्थरका है। ऊपर जानेको जो सीढ़ियाँ बनी हैं वे किन्हीं एक ही सज्जनकी बनवायी हुई बतलायी जाती हैं। पर्वतके ऊपर जानेमें जैसी थकान होती है, नीचे उतरनेमें वैसा कुछ भी कष्ट नहीं होता। नीचे आकर यात्री तीर्थगुरुको दक्षिणा देकर विदा कर देते हैं और फिर तिरुपतीसे आगेकी यात्रा आरम्भ करते हैं। तिरुपती भी अच्छा दर्शनीय स्थान है।

दक्षिणके तीर्थोंमें बालाजीका बड़ा महत्त्व है। कहते हैं, इस वेंकटेश पर्वतको गरुड़जीने वैकुण्ठसे लाकर यहा स्थापित किया था। यह पर्वत शेषभगवान्‌का ही विग्रह है। इस पर्वतको भगवद्विग्रह समझकर इसके ऊपर महाराज अम्बरीष, प्रह्लाद और भृगु आदि ऋषियोंने बहुत दिनोंतक तपस्या की थी।

किष्किन्धा

किष्किन्धा जानेके लिये यात्रियोंको रेनीगुण्ठा जकशन होकर होसपेट स्टेशनपर उतरना चाहिये। रेनीगुण्ठासे होसपेट ७१ मीलकी दूरीपर है। यहाँसे किष्किन्धा ७ मील है, यहींपर वानरराज सुग्रीवकी राजधानी थी। यहाँतक जानेके लिये होसपेट स्टेशनपर बैलगाडियाँ मिल जाती हैं। किष्किन्धामें धर्मशाला या पण्डोंके स्थान-पर ठहरकर यात्री तुगभद्रानदीमे तीर्थविधि करते हैं और फिर विरुपाक्ष महादेवका दर्शन करते है। यह मदिर भी बहुत बड़ा है। इसके पास ही एक सुनहरी स्तम्भ है।

मदिरके पास एक सरोवर है और कुछ दूर हेमकूट नामक पर्वतके ऊपर कई देवमदिर बने हुए हैं। तुगभद्राके निकट ही ऋष्यमूक पर्वत है। यहाँ भगवान्का एक मदिर है, जिसमें श्रीरामचन्द्रजी तथा अन्य देवी देवताओंके भी दर्शन हैं। यहाँ भगवान वनवासी थे, इसलिये उन्हें फल-फूल ही समर्पण किये जाते हैं।

तुगभद्राको चक्रतीर्थ भी कहते हैं। उसके निकट ही सीताकुण्ड है तथा भगवान् राम, सीता और लक्ष्मणजीके चरणचिह्नोंके दर्शन हैं।

चक्रतीर्थसे प्राय तीन मील स्फटिकशिला है, जहाँ माल्यवान् पर्वतपर भगवान्ने वर्षाऋतुमें निवास किया था। यहाँपर एक गुफामें राम, सीता, लक्ष्मण, सुग्रीव और हनुमान्जीके दर्शन होते हैं।

किष्किन्धासे तीन मीलकी दूरीपर पम्पासरोवर है। यह दो सौ फीट लम्बा और इतना ही चौड़ा है। इसके निकट बहुत-से प्राचीन देवमदिर हैं। इसीके तटपर भक्तिमता शबरीने भगवान्

रामकी पहुनाई की थी। कहते हैं, शवरी जंगलमें रहा करती थी। उसकी पम्पातारनिवासी महर्षि मतंगके प्रति स्वभावत ही बड़ी श्रद्धा थी। उनकी कोई सेवा करनेके लिये वह सदा ही उत्सुक रहती थी। वह रात्रिके समय अज्ञातरूपसे महर्षिके आश्रमपर सूखी लकड़ियाँ पहुँचा जाती और आश्रमका चौक बुहार जाती। जब महर्षिको उसकी इस अहैतुकी सेवाका पता लगता तो वे उसपर बहुत प्रसन्न हुए और उसे अपने आश्रममें रहनेकी आज्ञा दे दी। जिस समय महर्षि योगमार्गसे अपना शरीर त्यागने लगे तो उन्होंने शवरीको बुलाकर कहा, 'तू यहीं रहकर भगवान्का भजन कर, त्रेताके अन्तमें तुझे उनका दर्शन होगा।' शवरी गुरुजीकी आज्ञासे वहीं रहकर भगवद्भजन करने लगी। वह निरन्तर भगवान्के पधारनेकी बाट देखती रहती थी, रोज बहुत दूरतक जाकर मार्ग बुहार आती, जिससे प्रभुके पादपद्मोंको किसी प्रकारका कष्ट न हो। अन्तमें उसकी साध पूरी हुई और उसने प्रभुके पादपद्मोंकी सन्निधिमें ही देहत्याग करके सद्गति लाभ की।

इसके सिवा यहाँ उस स्थानके भी दर्शन कराये जाते हैं जहाँसे भगवान्ने वालीको बाणसे मारा था तथा वानरराज सुग्रीवका मधुवन भी दिखाया जाता है, जिसे सीताजीकी सुधि लेकर लौटे हुए वानरोंने उजाड़ा था।

यहाँ भोजनोंका सब सामान मिल जाता है, घी अच्छा मिलता है, परन्तु फलादिका अभाव है। पद्मपुराणमें लिखा है कि भगवान् रामचन्द्रजीने फाल्गुनमासकी अष्टमी तिथिको किष्किन्धापुरीसे वानरी सेनाके सहित लङ्काको प्रस्थान किया था। सब सरोवरोंमें पम्पासर श्रेष्ठ माना गया है तथा तुंगभद्राका स्नान भी अत्यन्त पुण्यप्रद है।

पञ्चवटी

पञ्चवटी गोदावरीके उद्गम स्थानके पास है। किष्किन्धापुरीसे पञ्चवटी आनेमें रेनीगुण्टा, धोधजक्शन और मनमाडमें गाड़ी बदलनी पड़ती है तथा नासिक स्टेशनपर उतरना पड़ता है। गोदावरीके बायें तटपर जो नासिक बस्ती है उसीको पञ्चवटी कहते हैं। नासिक बड़ा अच्छा शहर है। इसमें ट्रामगाड़ी भी चलती है।

यात्रीलोग धर्मशालामें ठहरकर रामघाटमें, जिसे रामगया भी कहते हैं स्नान तथा पिण्डदान करते हैं। इस स्थानपर भगवान् रामने महाराज दशरथको पिण्डदान किया था, इसीसे यह रामघाट

कहलाता है। यहाँ कइ कुण्ड बने हैं, जिनमें गोदावरीका जल आता जाता रहता है। एक झरनेका जल गोमुखीद्वारा रामकुण्डमें गिरता है, इसे अरुणसगम कहते हैं और इसी प्रकार एक दूसरे झरनेका जल दूसरे कुण्डमें गिरता है उसे वरुणसगम कहते हैं।

पञ्चवटीमें गोदावरीके किनारे बहुत से देवमन्दिर हैं। इनमें एक राम मन्दिर बहुत बड़ा है। पुजारीका कहना है कि इसके बनवानेमें आठ लाख रुपया लगा था। एक स्थानपर पाँच वटवृक्ष हैं, जो एक ही वृक्षकी जटाओंसे बने जान पड़ते हैं। यही मुख्य पञ्चवटी है। यहीं भगवान्‌ने महारानी सीता और लक्ष्मणजीके सहित निवास किया था।

पञ्चवटीतीर्थके अन्य स्थान

१–गोतमतपोवन–यहा गोतम ऋषि तपस्या करते थे। इसके पास ही वह स्थान है जहाँ श्रीलक्ष्मणजीने शूर्पणखाके नाक कान काटे थे।

२–पञ्चतीर्थ–यहा पर्वतसे गिरती हुई गोदावरी और कपिलाका सगम हुआ है। यहा पाँच कुण्ड हैं, जो पञ्चतीर्थ कहलाते हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं–(१) मुक्तयोनि, (२) अग्नियोनि, (३) विष्णुयोनि, (४) ब्रह्मयोनि आर (५) रुद्रयोनि। इनमें अग्नियोनिमें जल अधिक है।

३–सप्तर्षि-आश्रम–सगमके उस पार यह पवित्र आश्रम है। यहाँ सप्तर्षियोंने तपस्या की थी।

और

रिपर्वतके
की दूरीपर
जो प्राय
है । उद्गम-
दावरीजीकी
होती हुई
चक्रतीर्थ-

गुणदायक
। जटाओं-
ल होनेके
ल होनेसे

ां कुम्भका
पर आता
-महात्मा

ीस्नानसे
े पश्चात्
केश्वरका

त्र्यम्बकेश्वर

यह ज्योतिर्लिंग पञ्चवटीसे १८ मीलकी दूरीपर है। मोटर, ताँगा या बैलगाड़ीसे यात्रा की जा सकती है। मार्गका दृश्य बहुत सुन्दर है। पास ही धर्मशालाएँ हैं। उनमें ठहरकर यात्री कुशावर्त सरोवरपर स्नानार्थ जाते हैं। इस सरोवरपर चारों ओरसे पक्की सीढ़ियाँ बनी हुई हैं तथा इसमें गोदावरीका जल आता है। यहाँ तीर्थविधि की जाती है। इसके पास ही गंगासागर नामका एक अन्य सरोवर है। उसके तटपर भगवतीका मन्दिर है।

कुशावर्तमें स्नानादि करके यात्री त्र्यम्बकेश्वरका दर्शन करते हैं। यह मन्दिर भी बहुत ही बड़ा है। दक्षिणके अन्य मन्दिरोंके समान इसमें भी जगमोहनमेंसे ही दर्शन किये जाते हैं, केवल सन्ध्या गायत्री जाननेवाले ब्राह्मण ही भीतर घुस सकते हैं। यह शिवलिंग अलग-अलग तीन भागोंमें विभक्त सा दिखायी देता है। इसकी जलहरीमें जल भरा रहता है। इसकी गणना प्रसिद्ध द्वादश ज्योतिर्लिंगोंमें है। भगवान् त्र्यम्बकेश्वरकी

सेवा-पूजाके लिये सहस्रों रुपया वार्षिकका आमदनी है और आवश्यकतानुसार गवर्नमेण्टसे भी सहायता मिलती है।

गंगाद्वार—यह गोदावरीका उद्गमस्थान है और ब्रह्मगिरिपर्वतके ऊपर है। ब्रह्मगिरिपर्वत त्र्यम्बकेश्वरसे प्राय पौन मीलकी दूरीपर है। ऊपर गंगाद्वारतक जानेके लिये सीढ़ियाँ बनी हुई हैं जो प्राय एक सहस्र होंगी। इन्हें बम्बईके सेठ करमजीने बनवाया है। उद्गम-स्थानपर एक कुण्ड बना हुआ है उसमें गोमुखीमेंसे गोदावरीजीकी धारा गिर रही है। यही धारा रामकुण्ड, लक्ष्मणकुण्ड होती हुई कुशावर्तमें जाती है। आगे यह अदृश्य रहती है और फिर चक्रतीर्थ-में प्रकट होकर गोदावरीके नामसे विख्यात होती है।

गोदावरीजीका जल श्रीगंगाजलके समान ही पवित्र और गुणदायक माना जाता है। कहते हैं, इनका प्रादुर्भाव भी श्रीमहादेवजीकी जटाओं-से ही हुआ है। गंगाजी राजा भगीरथकी तपस्याका फल होनेके कारण भागीरथी कहलाती हैं और ये गौतमजीके तपका फल होनेसे गौतमी कही जाती हैं।

नासिकका कुम्भ—प्रयागकी भाँति यहाँ भी बारह वर्षमें कुम्भका मेला होता है। यह महापर्व सिंहराशिके बृहस्पति होनेपर आता है। उस समय यहाँ देश-देशान्तरोंके लाखों यात्री और साधु-महात्मा एकत्रित होते हैं।

माहात्म्य—शिवेश्वरसंहितामें लिखा है कि गोदावरीस्नानसे गोहत्या और ब्रह्महत्या-जैसे पाप भी नष्ट हो जाते हैं तथा मृत्युके पश्चात् शिवलोककी प्राप्ति होती है। कूर्मपुराणमें लिखा है कि त्र्यम्बकेश्वरका विधिवत् पूजन करनेसे ज्योतिष्टोमयज्ञका फल प्राप्त होता है।

डाकोर

श्रीद्वारकाधीशजीका मुख्य प्रतिनिधि डाकोरमें है। नासिकसे डाकोर पहुँचनेके लिये बम्बई और आनन्द दो स्टेशनोंपर गाड़ी बदलनी होती है। बहुत-से यात्री मार्गमें बम्बईकी भी सैर करते हैं। नासिकसे बम्बई ११३ मील है। यात्रियोंके ठहरनेके लिये इसमें बहुत सी धर्मशालाएँ और होटलादि हैं। श्रीलक्ष्मीनारायण, महालक्ष्मी, कालबादेवी, मुम्बादेवी और द्वारकाधीशका मन्दिर— ये यहाँके प्रधान देवालय हैं। इनके सिवा जुहू, चौपाटी, अजायबघर, विक्टोरियापार्क और तुलसी-तालाब भी दर्शनीय जगह हैं। यों तो यह सारा शहर ही देखने योग्य है, परन्तु जिन्हें केवल तीर्थदर्शनकी ही अभिलाषा है उनके लिये तो उपर्युक्त मन्दिरोंके दर्शन और समुद्रस्नान ही यहाँके आवश्यक कृत्य हैं।

बम्बईसे आनन्द २६६ मील है, यहाँसे ३० मील डाकोरजी हैं। डाकोरका स्टेशन तो छोटा सा ही है, परन्तु मुसाफिरखाना काफी बड़ा है। यहाँ प्रतिवर्ष लाखों यात्री श्रीरणछोड़जी महाराजके दर्शनोंसे अपने नेत्रोंको कृतार्थ करनेके लिये आते हैं। स्टेशनपर ही तीर्थपुजारियोंका दल मिल जाता है, वे अपने अपने बही-खातोंमें दर्शकोंके पूर्वजोंके नाम ढूँढ़ने लगते हैं, यात्री नाम बताते बताते थक जाते हैं, आखिर उन्हें किन्हींको अपना पुरोहित स्वीकार करना ही पड़ता है।

डाकोर पहुँचकर यात्री श्रीदामोदरभवन अथवा किसी अन्य धर्मशालामें ठहर जाते हैं। दामोदरभवनमें यात्रियोंसे ५) पेशगी लेकर जमा कर लिये जाते हैं, जिससे यदि कोई टूट फूट हो जाय तो उसकी मरम्मत करा दी जाय। ये रुपये यात्रीको जाते समय लौटा दिये जाते हैं।

यहाँ गोमतीसरोवरमें तीर्थविधि की जाती है। यह सरोवर दामोदरभवनके पास ही है। इसका जल बड़ा स्वच्छ है तथा किनारेपर महात्माओंकी कुटियाँ हैं। इसमें स्नानादि करके चित्त बहुत प्रसन्न होता है। सरोवरके तीरपर ही डकेश्वर महादेवका मंदिर है। कहते हैं, इस क्षेत्रका असली नाम भी डकेश्वरक्षेत्र ही है। अपभ्रंश होते-होते डकेश्वरका डाकोर हो गया है। पूर्वकालमें यहाँ डंक ऋषिने तपस्या करके श्रीमहादेवजीको प्रसन्न किया था इसीसे उनके नामानुसार इस क्षेत्रका नाम डकेश्वरक्षेत्र पड़ा।

डकेश्वर शिवलिंग अनगढ़ है। यात्री इसके पास जाकर स्वयं ही इसका पूजनादि कर सकते हैं, कोई रोक-टोक नहीं है। डकेश्वरके पास गोमतीसरोवरके तीरपर ही गंगाबाईकी विश्रान्ति है। इसमें एक तुला रक्खी हुई है। कहते हैं, यहाँ भगवान् द्वारकाधीश-को गंगाबाईके कानकी बालीसे तोला गया था। यह उसीका स्मारक है। इस घटनाका यहाँके निवासी इस प्रकार वर्णन करते हैं कि बहुत दिन हुए डाकोरमें रामदास नामक एक भक्त रहते थे। उनकी धर्मपत्नीका नाम गंगाबाई था। भक्तजीका नियम था कि वे प्रत्येक पूर्णिमाको पैदल ही श्रीद्वारकाधीशके दर्शनार्थ द्वारकाको जाया करते थे। यह नियम उनका वृद्धावस्थातक चलता रहा।

एक बार वे द्वारकानाथकी परिक्रमा करते-करते मन्दिरमें ही सो गये। मार्गके परिश्रमसे श्रान्त होनेके कारण उन्हें निद्रादेवीने स्वयं ही घेर लिया। भगवदिच्छासे पुजारियोंकी दृष्टि भी उनपर नहीं पड़ी। रात्रिमें उन्हें भगवान्‌ने स्वप्न देकर कहा कि यदि तुम्हारा मेरे इस विग्रहसे ही विशेष प्रेम है तो तुम मुझे डाकोर ले चलो। मैं प्रत्येक पूर्णिमापर तुम्हारा यहाँ आनेका कष्ट सहन नहीं कर सकता। मन्दिरके द्वारपर बैलगाड़ी खड़ी है, उसीसे मुझे ले चलो। भगवान्‌का यह आदेश पाकर भक्त रामदासका रोम-रोम आनन्दविभोर हो गया। उन्होंने भगवान्‌की प्रतिमाको गाड़ीमें रख कर डाकोरकी राह ली। मार्गमें उन्हें इसका भी कुछ पता नहीं लगा कि कौन गाड़ी हाँक रहा है और पीछे इस चोरीका क्या परिणाम होगा।

डाकोर पहुँचकर उन्होंने सब वृत्तान्त गंगाबाईको सुना दिया बस, दोनों पति-पत्नी प्रभुके इस अनुग्रहसे कृतकृत्य हो गये। इधर पुजारियोंने मन्दिरको सूना देख इधर-उधर खोज आरम्भ की और कुछ लोग डाकोर भी पहुँचे। उन्हें आया देख रामदासजीने भगवान्‌की प्रतिमाको गोमतीसरोवरमें छिपा दिया। पुजारियोंने रामदासके घरकी खोज करके फिर सरोवरमें ढूँढना आरम्भ किया और अन्तमें उन्हें वह प्रतिमा मिल गयी।

इधर रामदास और गंगाबाईने पुजारियोंके आनेके समयसे ही उपवास आरम्भ कर दिया था और यह निश्चय कर लिया था कि यदि ये लोग भगवान्‌को यहाँ नहीं छोड़ेंगे तो इसी प्रकार निराहार रहकर प्राण त्याग देंगे। उनके इस दृढ़ सङ्कल्पसे डाकोरकी जनता

भी उन्हींके पक्षमें हो गयी। सब लोगोंने पुजारियोंपर जोर डाला कि रामदास भगवान्‌की इच्छासे ही उन्हें यहाँ लाये हैं, इसलिये आप लोगोंको हठ नहीं करना चाहिये। इसपर पुजारियोंने यह प्रस्ताव रक्खा कि या तो रामदास इस प्रतिमाके बराबर सुवर्ण देकर इसे यहाँ रख ले या हमसे इसके बराबर सुवर्ण लेकर इसे हमें दे दें।

बेचारे निर्धन रामदासके पास इतना सुवर्ण कहाँ था? इसलिये वे बड़े चिन्तित हुए। रातमें उन्हें भगवान्‌ने स्वप्न दिया कि तुम गंगाबाईकी बालीके साथ मुझे तौल देना। उतने सुवर्णसे ही मैं तुल जाऊँगा। दूसरे दिन रामदासने पुजारियोंकी शर्त स्वीकार कर ली और भगवान्‌को एक तराजूके पलडेमें रखकर दूसरे पलडेमें गंगाबाईके कानकी बाली रखी। इतनेसे जब पलड़ा न उठा तो उन्होंने उसमें तुलसीदल और रक्खा। उसके रखते ही बालीका पलडा नीचा हो गया और प्रतिमाका ऊँचा। इससे पुजारी बहुत लज्जित और दुःखी हुए तथा उन्हें प्रतिमा डाकोरमें छोड़नी पड़ी। रात्रिके समय भगवान्‌ने उन्हें भी स्वप्न दिया कि तुम द्वारका लौट जाओ, वहाँ चक्रतीर्थमें मेरी एक प्रतिमा है उसे पधरा दो। मैं सात मुहूर्त डाकोरमें रहूँगा और एक मुहूर्त द्वारकामें।

इस प्रकार अपने भक्तकी प्रसन्नता करनेके लिये भगवान् द्वारकासे डाकोर पधारे थे। डाकोरजीका मन्दिर सन् १२१५ ई० के लगभग बना है। इसकी लागत पाँच लाख रुपया बतायी जाती है। पत्थरका बड़ा सुन्दर मन्दिर है। भगवान्‌का

शृंगार भी बड़ा ही मनोहर है। आपका श्याम वर्ण है, सुंदर पीताम्बर धारण किये हैं, अंग प्रत्यंगोंमें रत्नजटित मनोहर आभूषण हैं, शिरपर मणिमय मुकुट है और करकमलोंमें बाँसुरी सुशोभित है। यात्रीलोग सुगन्धित पुष्पादि समर्पण करके अपनेको धन्यभाग्य समझते हैं। इस मन्दिरमें भक्त रामदास और गंगाबाईकी प्रतिमाएँ भी हैं। यहाँ भगवान्‌को माखन मिश्रीका भोग लगता है। डाकोरकी मिश्री बहुत अच्छी होती है।

इसीसे सटा हुआ स्वर्गधाम है। इसकी सजावटमें सहस्रों रुपया व्यय हुआ है। इसमें चित्रोंद्वारा पुण्यात्माओंको प्राप्त होनेवाले स्वर्गीय भोगोंका प्रदर्शन किया गया है।

डाकोरसे कपिध्वज जाते समय प्रायः १८ मीलपर एक गर्म पानीका कुण्ड है। इसमें स्नान करनेसे बहुत से रोग निवृत्त हो सकते हैं। यहाँ सहस्रों यात्री प्रतिवर्ष आते हैं।

डाकोरजीमें ही द्वारकाधीशजीकी मुख्य प्रतिमा है। इसलिये द्वारका जानेवाले प्रायः सभी यात्री यहाँ भी उतरते हैं। यहाँ पूर्णिमापर अधिक भीड़ रहती है, कार्तिकी पूर्णिमापर तो लाखों यात्री आते हैं। यहाँ भोजनकी सब सामग्री मिल जाती है। जलवायु भी अच्छा है।

श्रीडाकोरजीकी यात्राका बड़ा माहात्म्य है। कहते हैं, गोमतीसरोवरमें स्नान तथा श्रीडंकेश्वर और श्रीरणछोड़जीके दर्शन करनेसे मनुष्यके समस्त पाप इसी प्रकार भस्म हो जाते हैं जैसे अग्निमें डालनेसे तृण।

सावरमती

(वेदाश्रम)

डाकोरके बाद यात्री प्रभासक्षेत्र जाते हैं । यहीं पारस्परिक कलहसे यदुवंशका विनाश हुआ था और यहां भगवान्‌ने भी अपने दिव्यमङ्गलविग्रहके सहित स्वधामको प्रस्थान किया था । इस क्षेत्रकी पवित्रता सर्वलोकप्रसिद्ध है । यहासे यात्रियोंको श्रीद्वारकापुरीके दर्शनार्थ जाना होता है । किन्तु डाकोरमे ही लेखकके चित्तमें एक प्रकारका ऐसा उद्वेग हुआ कि उसने प्रभासक्षेत्रकी यात्रा स्थगित करके साबरमती जाना निश्चय कर लिया । साबरमतीमें लेखकका गुरुस्थान है जो वेदाश्रम नामसे प्रसिद्ध है । उसकी पावनस्मृतिने इसे अपना प्रोग्राम बदलनेके लिये विवश कर दिया । इसलिये डाकोरजीसे आनन्द होता हुआ साबरमती आ गया । आनन्दसे साबरमती ४६ मील है । साबरमती जानेके लिये अहमदाबाद स्टेशनपर भी उतर सकते है । मै अहमदाबाद स्टेशनपर ही उतरा था । वहांसे अहमदाबाद शहर देखता हुआ साबरमतीनदीपर

आया और यहाँ स्नानादि किया। परन्तु मेरा चित्त तो वेदाश्रमके दर्शनोंके लिये उतावला हो रहा था। इसलिये मैं स्नानादिसे निवृत्त हो नागरमतीनदी पारकर भूतनाथ महादेवके मन्दिरपर होता हुआ वेदाश्रमकी ओर चला। यह रास्ता जङ्गलमें होकर जाता है। भूतनाथका मन्दिर भी बहुत एकान्तमें है। यहाँ पुरश्चरण और एकान्तसेवन करनेका अच्छा सुभीता है। यहाँके पुजारियोंका कथन है कि यह शिवलिङ्ग स्वयं ही प्रकट हुआ है, किसीने स्थापित नहीं किया। यहाँ प्रसादमें भस्मका गोला मिलता है।

भूतनाथ महादेवजीका पूजन कर तरह-तरहके भावोंमें डूबता-उतराता गुरुदेवके आश्रमकी ओर चला। पूज्य श्रीमहाराजजी इस नश्वर संसारको सं० १९६९ में छोड़ चुके हैं। आज उनकी स्मृतिने इसके चित्तको शून्य कर दिया था। इसके मानसिक नेत्रोंके सामने उनकी परमकरुणामयी दिव्यमूर्ति अङ्कित हो रही थी। तरह-तरहकी उधेड़-बुन करता यह वेदाश्रम पहुँचा।

आश्रमको सूना देखकर चित्तमें बड़ी व्यथा हुई। अब भी आश्रम तो ज्यों-का-त्यों था, परन्तु इसके आराध्यदेवके बिना यह इसे सूना मालूम होता था। इस आश्रममें किसी प्रकारका आडम्बर नहीं है। यह एक खपरैलसे छाये हुए घरके रूपमें है। आँगनमें एक अनारका वृक्ष है। सामनेकी ओर विष्णुभगवान्‌का मन्दिर है और दाहिनी ओर शिवमन्दिर है। दोनों मन्दिरोंके बीचमें एक जगमोहन है। मन्दिरके दाहिनी ओर वेदपाठशाला थी। वेदाध्ययन और गोसेवा ये ही विद्यार्थियोंके काम थे।

श्रीमहाराज जगमोहनमें बाघम्बरपर बैठकर तपस्या किया करते थे। आप बड़े कर्मकाण्डी थे। अपने जीवनमें आपने बारह ज्योतिर्लिङ्गयज्ञ और कई विष्णुयाग किये थे। यज्ञोंके लिये उनके बम्बई आदि स्थानोंके बहुत-से सेवक आवश्यक सामग्री जुटा देते थे। सायंकालकी आरतीके समय आप कुछ चुने हुए विद्यार्थियोंके साथ सामश्रुतियोंसे भगवान्‌का स्तवन करते थे। आप प्रायः एक कौपीनमें ही रहते थे, केवल यज्ञ करते समय पीताम्बर धारण करते थे। अपने पूर्वाश्रममें आप दक्षिणकी किसी स्टेटके दीवान रह चुके थे।

गुरुजीका जैसा सरल जीवन था वैसा ही उनका उपदेश भी बड़ा सीधा-सादा होता था। आप मिथ्याके त्याग और सत्यके अनुसंधानपर विशेष जोर देते थे। आप प्रवृत्तिप्रधानोंको परोपकार और स्वधर्मपालनका उपदेश करते थे तथा निवृत्तिपरायणोंको विवेक वैराग्यपर जोर देनेका आदेश करते थे। इस आश्रममें आकर वे सारी बातें एक-एक करके इसके सामने आने लगीं। उनकी वह अमृत-वाणी इसके हृदयमें गूँजने लगी। आज गुरुदेवकी अनुपस्थितिने इसे बहुत बेचैन कर दिया और हठात् इसके नेत्रोंसे कुछ आँसू निकल पड़े। गुरुदेवका स्वर्गवास सं० १९६९ के अगहन मासकी शु० ११ को हुआ था। उनका तैलचित्र इस समय भी श्रीद्वारकानाथके मन्दिरमें लगा हुआ है।

इस प्रकार चार घण्टे वेदाश्रममें बिताकर तथा गुरुजीके शिष्य स्वामी श्रीपूर्णानन्दसे मिलकर इसने उनसे विदा ली।

गिरनार पर्वत

डाकोरसे गिरनार पर्वतपर चढनेके लिये यात्री जूनागढ़ आते हैं। वेदाश्रमका प्रसङ्ग तो लेखकका हृदयोद्गार है। डाकोर से ८६ मील साबरमती है, यहाँसे १४८ मील धोला जङ्क्शन है और धोलासे १११ माल जतलसर एव जतलसरसे १७ मील जूनागढ़ है। इस प्रकार इन सब स्टेशनोंपर उतरते चढ़ते यात्री जूनागढ़ स्टेशनपर उतरते हैं। यहाँसे ९ मील गिरनार पर्वत है। जूनागढ़-से ही उसका शिखर दिखायी देता है। जो यात्री पर्वतपर स्वय नहीं चढ सकते उन्हें प्राय ४) में डोली मिल सकती है। कोई-कोई यात्री तो एक ही दिनमें चढ़कर उतर भी आते हैं।

गिरनारपर चढ़नेके लिये चोडी चोड़ी सीढ़ियाँ हैं। बीचमें कई जगह विश्राम करनेके भी स्थान हैं। पर्वतके बीचमें जैनमन्दिरके समीप एक सुन्दर धर्मशाला है। जो यात्री लौटकर नहीं आ सकते वे उसीमें ठहर जाते हैं। कुछ दूर चढ़नेपर गोमुखीगगा नामका एक स्थान है। यहा गोमुखसे जलकी धारा गिरती है। यहाँ कई कुण्ड हैं। बहुत से यात्री उनमें स्नानादि करते हैं। इससे आगे गोरखनाथजीकी धूनी है। यहा उन्होंने तपस्या की थी। यात्री इस धूनीकी भस्म मस्तकपर चढ़ाते हैं। धूनीमें पहले एक देवीका

मन्दिर भी मिलता है। वहाँ पौमाला लगा हुआ है। इसलिये बहुत-से यात्री यहाँ शीतल जल पीकर उत्तरीमें विश्राम करते हैं।

बीचमें जो जैनमन्दिर आता है उससे नीचेकी ओर देखनेपर और भी बहुत से जैनमन्दिर दिखायी देते हैं। यह पर्वत जैसा हिन्दुओंका तीर्थ है वैसा ही बौद्ध और जैनियोंका भी है। यहाँ नेमिनाथजीका एक विशाल मन्दिर है और उसके आस-पास और बहुत से छोटे-मोटे मन्दिर हैं।

इससे आगे पाण्डवगुफा और मुचुकुन्दगुफा हैं। मुचुकुन्द-गुफामें ही भगवान्‌ने राजा मुचुकुन्दकी दृष्टिसे कालयवनको भस्म कराया था। इस जगह रामानुजस्वामीकी चरणपादुकाओंके दर्शन होते हैं। आस-पास और भी बहुत-सी गुफाएँ हैं। किन्तु उनके इतिहासका यहाँके पण्डोंको कोई सन्तोषजनक ज्ञान नहीं है।

इस प्रकार उठते-बैठते और दर्शन करते यात्री श्रीदत्तात्रेयजीके पर्वतपर पहुँचते हैं। यहाँ दत्तभगवान्‌का छोटा-सा मन्दिर है। उसमें उनके चरणोंके दर्शन होते हैं। भगवान् दत्तात्रेय महर्षि अत्रिके यहाँ देवी अनसूयाके गर्भसे अवतीर्ण हुए थे। इनकी गणना भगवान्‌के चौबीस अवतारोंमें है। इस प्रान्तमें इनकी उपासनाका बहुत प्रचार है। इनका जन्म अगहन मासमें हुआ था। इसलिये उन्हीं दिनों यहाँ यात्रियोंकी विशेष भीड़ रहती है।

यहाँसे प्राय दो सौ फीटकी ऊँचाईपर कमण्डलुतीर्थ है। श्रीदत्तभगवान् यहीं स्नान करते थे। यहाँतक पहुँचना बहुत कठिन है। यहाँ केदारनाथजी हैं और उनसे आगे एक स्थान है, जहाँसे

पूर्वकालमें यहाँ लोग मुक्तिप्राप्तिके लिये कूदकर आत्मघात करते थे। किन्तु अब यह प्रथा सर्वथा बन्द हो गयी है। इस पर्वत पर महाराज अशोक तथा अन्य कई पुरानी राजाओंके शिलालेख खुदे हुए हैं। उनकी लिपि सर्वसाधारणके लिये अपरिचित है, परन्तु उनका देवनागरी लिपिमें अनुवाद हो गया है। इस प्रकार गिरनारकी यात्रा कर यात्री नीचे आते हैं तथा दामोदरकुण्ड और रेवतीकुण्डमें स्नान करके तीर्थगुरुओंको दक्षिणा देते हैं। गिरनारको ही पहले रैवतकपर्वत कहते थे। यह श्रीबलभद्रजी आदि यादवोंका प्रधान क्रीडास्थल था।

गिरनारपर्वतसे फिर जूनागढ़ लौटकर आगे जाना होता है। जूनागढ़ सुप्रसिद्ध भक्त श्रीनरसी मेहताका जन्मस्थान है। यहाँ आकर उनकी निश्छल भगवन्निष्ठाका स्मरण हो आता है। प्रेमदिवाने नरसी हर समय भगवच्चिन्तन और भगवन्नामकीर्तनमें ही तल्लीन रहते थे। वे गृहस्थ थे, बालबच्चेदार थे, परन्तु इसकी उन्हें कोई चिन्ता नहीं थी। ऐसे कर्मशून्य व्यक्तियोंका घरमें निरादर रहता ही है। इसलिये उनके भाईने उन्हें उनके परिवारके सहित घरसे अलग कर दिया था। परन्तु नरसीको इसकी कोई परवा नहीं थी। उन्होंने अपने निर्वाहके लिये कभी कोई उद्योग नहीं किया। उनकी सारी आवश्यकताओंको किसी न किसी प्रकार श्रीभगवान् ही पूरा करते थे।

एक बार नरसीको किसी आवश्यक कृत्यके लिये कुछ रुपयेकी आवश्यकता थी। उसी समय द्वारकाधामको जानेवाले चार यात्री उनके पास आये और ५००) लेकर द्वारकाके किसी सेठके नाम

हुण्डी देनेकी प्रार्थना की। उन दिनों चोरोंका भय होनेके कारण रुपया लेकर यात्रा करना सम्भव नहीं था। इसलिये यात्रीलोग किसी धनी पुरुषके यहाँ रुपया जमा करके उससे हुण्डी लिखा लेते थे। ये यात्री जूनागढ़के लोगोंसे किसी सेठका पता पूछ रहे थे। कुछ धूर्त्तलोग नरसी मेहताकी भगवन्निष्ठासे जलते रहते थे और उन्हें तरह-तरहसे नीचा दिखानेका अवसर खोजते रहते थे। उनसे जब इन यात्रियोंने किसी साहूकारका पता पूछा तो उन्होंने नरसीका नाम बता दिया। अतः उन्होंने उनके पास आकर हुण्डी देनेकी प्रार्थना की। नरसीने यह भगवत्प्रेरित सहायता समझकर रुपये ले लिये और उन्हें सामन्तसाहके नाम हुण्डी लिखकर दे दी।

वे यात्री हुण्डी लेकर द्वारकामें पहुँचे और वहाँ सेठ सामन्तसाहका पता लगाने लगे। परन्तु उन्हें उनका कहीं पता न लगा। उस समय भगवान्‌को अपने भक्तकी लज्जा रखनी पड़ी। वे स्वयं सामन्तसाह बनकर एक मुनीमके साथ आये और उस हुण्डीके रुपये भरकर हुण्डी ले ली। इसी प्रकार भगवान्‌ने कई बार भक्तराज नरसिंहकी लज्जा रखखी थी। नरसिंह वर्तमान युगके प्रसिद्ध भक्त हो गये हैं। जूनागढके एक मन्दिरमें उनके और उनके भगवान्‌के दर्शन होते हैं।

जूनागढ अच्छी बडी बस्ती है। यहाँ प्रायः सभी आवश्यक वस्तुएँ मिल जाती हैं तथा डाकखाना, तारघर, औषधालय और पाठशालाएँ आदि भी हैं।

प्रभासक्षेत्र

प्रभासक्षेत्रका दूसरा नाम सोमनाथपट्टन भी है। इसका रेलवे स्टेशन वेरावल है, जो जूनागढ़से ५७ मील है। स्टेशनसे बस्ती ढाई मीलके लगभग है। यहाँ बहुत सी धर्मशालाएँ हैं, उन्हींमेंसे किसीमें यात्री ठहर जाते हैं। प्रभासक्षेत्र भारतके प्रधान पुण्यस्थानोंमेंसे है। जिस समय दक्षके शापसे चन्द्रमाकी प्रभा क्षीण हो गयी थी उस समय उसे इस क्षेत्रमें स्नान करनेसे ही पुनः प्रभा प्राप्त हुई थी। इसीसे इसका नाम प्रभासक्षेत्र पड़ा है। यहाँके प्रधान प्रधान तीर्थोंका विवरण इस प्रकार है—

१ त्रिवेणीसंगम—इस स्थानपर सरस्वती, हिरण्या, इक्षु, कपिला और वृजिनी इन पॉच नदियोंका संगम हुआ है। भगवान् कृष्ण इसी स्थानसे स्वधामको सिधारे थे।

२ बाणतीर्थ—यह वह स्थान है जहा भगवान्‌के चरणमें जरा नामक व्याधने बाण मारा था। यदुवंशका विध्वंस होनेपर भगवान् इस स्थानपर अश्वत्थवृक्षके नीचे पालथी लगाये बैठे थे। उन्हें दूरसे कोई मृग समझकर जरा व्याधने बाण छोड़ा। इस बाणकी नोकमें यदुवंशविनाशक मूसलका बचा हुआ टुकड़ा लगा था। वह बाण भगवान्‌के चरणमें लगा और उसके पीछे ही भगवान् सदेह गोलोकको पधारे, तथा अपने अपराधके कारण भयभीत हुए जराको भी उन्होंने सद्गति प्रदान की।

३ पद्मतीर्थ—यह वह स्थान है जहा बाण लगनेपर भगवान्‌ने अपने पादपद्मको धोया था।

४ सोमनाथ—यहाँ भगवान् सोमनाथका एक प्राचीन मंदिर है। इसे सन् १०२४में मुहम्मद गजनवीने तोड़ा था। सोमनाथ द्वादश ज्योतिर्लिंगोंमेंसे एक हैं। इस मंदिरमें उन दिनोंमें अतुलित धनराशि थी। उसके लोभमें गजनवीने मंदिर और मूर्तिको तोड़कर इसका सारा धन लूट लिया और वह करोड़ोंकी सम्पत्ति अपनी राजधानीको ले गया, वर्तमान मंदिर उसीका भग्नावशेष है।

इसके स्थानपर महारानी अहिल्याबाईने एक नवीन मंदिर बनवाकर उसमें सोमनाथजीको स्थापित कर दिया है। यह मंदिर सन् १८६०के लगभग बना है। इसमें बीसों सीढ़ियॉ

पटरानीके भी भगवान्‌के दर्शन होते हैं। यहाँ अखण्डित दीपक जलता रहता है।

इस निजमन्दिरके पीछे और [illegible] मन्दिर हैं, जिनमें एक भगवान् [illegible] है और एक [illegible]। इस मन्दिरमें भगवान् [illegible] दर्शन होते हैं तथा जिस स्थानपर [illegible] यादवगणोंने शरीर त्याग था उसके भी दर्शन होते हैं।

प्रभासक्षेत्रमें आकर यदुवंशियोंका परस्पर लड़कर मरना बताया जाता है। अहो! जिनके सखा, गुरु और पिता साक्षात् भगवान् कृष्ण थे उन छप्पन कोटि यादववीरोंको भी उनके मदने एक क्षणमें नष्ट कर दिया! फिर औरोंका तो कहना ही क्या है! यद्यपि यह प्रसंग बहुत प्रसिद्ध है, फिर भी यहाँ संक्षेपसे इसका उल्लेख कर देना अप्रासंगिक न होगा। जिस समय महाभारतमें युद्धमें संसारके समस्त उद्धत और अत्याचारी वीरोंका नाश हो गया उस समय भगवान्‌ने अपने अवतारका प्रयोजन पूर्ण हुआ देखकर स्वधामगमनका विचार किया। परन्तु उन्होंने देखा कि मेरे आश्रयमें रहकर बढ़ा हुआ यह यदुवंश बहुत समृद्ध है, मेरे पीछे यह समृद्धि इसके उन्मादका कारण होगी। इसलिये इसकी भी मेरे सामने ही समाप्ति हो जानी चाहिये।

उन दिनों दुर्वासा आदि कुछ मुनिगण द्वारकाके पास तपस्या कर रहे थे। एक दिन कुछ यदुवंशी राजकुमार खेलते खेलते उधर जा निकले। ऋषियोंको देखकर भगवान्‌की प्रेरणासे उन युवक राजकुमारोंको एक चञ्चलता सूझी। उन्होंने भगवान्

कृष्णके पुत्र साम्बका स्त्रीवेश बनाया और उसे ऋषियोंके पास ले जाकर कहने लगे, 'मुनिगण ! यह स्त्री गर्भवती है, आपलोग त्रिकालदर्शी हैं, यह आपसे पूछना चाहती है कि मेरे पुत्र होगा या पुत्री ?' ऋषि योगबलसे सब रहस्य जान गये और बालकोंके कपटसे कुछ क्षुब्ध होकर बोले, 'यह तुम्हारे कुलका नाश करनेवाला एक मूसल जनेगी !'

ऋषियोंके शापसे बालक बहुत भयभीत हुए और उन्होंने साम्बके पेटका वस्त्र खोला तो उसमें एक लोहेका मूसल निकला । उन्होंने वह मूसल राजा उग्रसेनके आगे रखकर सारा हाल कह सुनाया । महाराज उग्रसेनने उसका चूरा कराकर समुद्रमें फिंकवा दिया, एक टुकड़ा रह गया था उसे भी समुद्रमें ही डलवा दिया । किंतु समुद्रकी तरंगोंसे वह चूरा किनारेपर आ गया और उससे एरका नामकी घास उत्पन्न हो गयी, तथा उस मूसलखण्डको एक मछली निगल गयी, जिसे जरा नामक व्याधने जालमें फँसाया और उसे चीरनेपर जब वह लोहखण्ड निकला तो उसे उसने अपने बाणकी नोंकपर लगा लिया ।

इधर तरह-तरहके अपशकुनोंसे यादवोंका अन्तकाल उपस्थित हुआ देख भगवान् कृष्णने उन सबको प्रभासक्षेत्र जाकर उन अमंगलोंकी शान्ति करनेकी सम्मति दी । भगवान् कृष्ण और बलदेवजीके सहित समस्त यादव प्रभासक्षेत्र चले आये । वहाँ एक दिन मैरेय नामकी मदिरा पीकर उन्मत्त हुए वे सब वीर समुद्रतटपर बैठे थे । वहां बातों ही-बातोंमें उनमें परस्पर विवाद होने लगा ।

यह महानन्द हुआ कि पहले हाथापाई और फिर शस्त्रास्त्रोंसे युद्धकी नौबत आ गयी। जब शस्त्र समाप्त हो गये तो वे समुद्रतटपर उगी हुई एरका घास उखाड़कर उससे लड़ने लगे। उस घासने तलवारका काम किया और उससे थोड़ी ही देरमें समस्त यादवोंका खात्मा हो गया। केवल भगवान् कृष्ण और बलरामजी, जो इस युद्धसे अलग इसके द्रष्टा बन बैठे थे, बच रहे। इस अन्तिम भूभारको भी निवृत्त हुआ देख उन्होंने स्वयं भी महाप्रस्थानका विचार किया। श्रीबलदेवजीने योगमार्गसे शरीर त्याग दिया। उनके मुखसे एक महासर्प निकलकर समुद्रमें घुस गया, क्योंकि वे शेषावतार थे तथा भगवान् जरा व्याधके बाणको निमित्त बनाकर सदेह गोलोक-धामको चले गये।

यह कथा धनमद, शक्तिमद और मदिरापानके दुष्परिणामका अच्छा निदर्शन है। पाठकोंको इससे शिक्षा लेकर सर्वदा सावधान रहनेका प्रयत्न करना चाहिये।

प्रभास अच्छी बड़ी बस्ती है। यहाँ डाकखाना, तारघर, औषधालय और अन्नक्षेत्रादि कई संस्थाएँ हैं, भोजनका भी सब सामान मिल जाता है। जलवायु अच्छा है। यहाँकी बोली गुजराती है, परन्तु हिन्दी भी प्रायः सब लोग समझ लेते हैं। वामनपुराणमें लिखा है कि त्रिवेणीसंगममें तीर्थविधि करके भगवान् सोमनाथके दर्शन करनेसे राजसूययज्ञका फल मिलता है और अन्तमें कैलासमें निवास होता है।

सुदामापुरी

सुदामापुरी जानेके लिये पोरबन्दर स्टेशनपर उतरना होता है। वेरावलसे जतलसर होकर पोरबन्दर आते हैं। वेरावलसे जतलसर ६७ मील है और वहाँसे पोरबन्दर ७८ मीलकी दूरीपर है। पोरबन्दरके पास ही सुदामापुरी है। यहाँ पहुँचकर भक्त सुदामाकी सरलता, सन्तोष और भगवन्निष्ठाका चित्र सामने आने लगता है। सुदामाजीके पास पेटभर अन्नका भी प्रबन्ध नहीं था। त्रिभुवननाथ लक्ष्मीपति भगवान् कृष्ण उनके बालसखा थे, फिर भी उनसे कभी कोई सहायता लेनेको उनका मन नहीं हुआ। वे अपने तपोमय जीवनमें बहुत सन्तुष्ट थे। जब अपनी धर्मपत्नीके आग्रहसे वे द्वारका गये तो वहाँ भी उन्होंने किसी प्रकारकी याचना नहीं की। परन्तु अकारण कृपालु दीनबन्धु श्रीभगवान् तो घट-घटवासी हैं, उनसे उनकी आवश्यकता और निःस्पृहता छिपी थोड़े ही थी।

उन्होंने अपने दरिद्र बालसखाका आदर्श पहुनाई की। हजारों दास दासियोंके होते हुए भी अपनी पटरानियोंके सहित स्वय ही स्नान और भोजनादि कराया तथा अपने स्नेहमय सरस व्यवहारसे सुदामा को निहाल कर दिया।

भोजनादि करानेके पश्चात् जब सुदामाजीको मखमली शय्यापर शयन कराया गया तो स्वय भगवान् उनकी चरणसेवा करने लगे। घरसे चलते समय ब्राह्मणीने एक सूखे चावलोंकी मोट भेटके लिए दी थी। राजराजेश्वर यदुराजको यह नगण्य भेट देनी अनुचित समझकर सुदामाजी उसे बड़े जतनसे बगलमें दबाये हुए थे। भगवान्से यह बात कैसे छिपी रह सकती थी। उन्होंने भाभीकी इच्छा पूर्ण करनेके लिये एक लीला की। मित्रसे कहा, 'भाई साहब, भाभीने हमारे लिये क्या दिया है?' सुदामाजी सङ्कोच करने लगे परतु कृष्णचन्द्रने फुर्तीसे उनकी बगलसे भाभीकी सौगात खटक ली और झटपट दो मुट्ठी तन्दुल चबा गये। तीसरी मुट्ठी खानेको थे कि रुक्मिणीजीने हाथ पकड़ लिया। इस प्रकार दो मुट्ठी तन्दुलके बदले दो लोकोंका ऐश्वर्य देकर भाभीको निहाल कर दिया, परन्तु भिखारी सुदामाको इसका कुछ भी पता नहीं था। दूसरे दिन सुदामाजी मित्रसे विदा होकर अपनी कुटीको चल दिये। मार्गमें अपना निःस्पृहतासे प्रसन्न होते जाते थे और यह सोचकर भगवान् को धन्यवाद देते थे कि मैंने कृष्णसे कुछ माँगा नहीं। धीरे धीरे जब वे अपनी झोंपड़ीके स्थानपर पहुँचे तो वहाँका दृश्य देखकर हक्के-बक्के रह गये। 'हैं! एक ही रातमें यहा ये किसके महल बन गये? मेरी झोंपड़ी कहाँ गयी? बेचारी ब्राह्मणीका क्या हुआ?'

इस प्रकार वे तरह-तरहकी उधेड़-बुन कर रहे थे कि एक सर्वालङ्कारविभूषिता रमणीरत्नने बहुत-सी सखियोंके साथ आकर उनका परिछन किया और प्रार्थना की कि भगवन्! यह सब श्यामसुन्दरकी कृपा है। मैं आपकी दासी हूँ। उन्हींके आदेशसे विश्वकर्माने एक रातमें ही ये सब महल तैयार किये हैं और हमें यह सब ऐश्वर्य प्राप्त हुआ है। सुदामाजीने ध्यान देकर देखा तो अपनी ब्राह्मणीको पहचान लिया और उसके साथ महलमें चले गये। उन्होंने अपनी धर्मपत्नीको धन तथा विषयभोगके दोष दिखाते हुए निर्लिप्तभावसे रहकर भगवान्का भजन करनेका ही उपदेश किया और दोनों पति-पत्नी जलकमलवत् असङ्ग रहकर भगवान्का ही भजन करते रहे।

इस पुरीमें पहुँचकर इन सब बातोंकी स्मृति होने लगती है। वास्तवमें, सन्तोषके समान कोई ऐश्वर्य नहीं है और भजनानन्दके समान कोई सुख नहीं है। जिन्हें ये प्राप्त हैं वे ही सच्चे श्रीमान हैं।

इस पुरीमें सुदामाजीका सङ्गमरमरका मन्दिर है, उसमें भगवान् कृष्ण और सुदामाजीकी प्रतिमाओंके दर्शन होते हैं। उत्सवोंपर यहाँ बड़ी भीड़ होती है और सुमधुर सङ्कीर्तन सुननेका सौभाग्य प्राप्त होता है। पोरबन्दरमें ही लोकविख्यात महात्मा गान्धीजीका जन्म हुआ है। यहाँका जलवायु अच्छा है तथा समुद्रतट होनेके कारण दृश्य भी बड़ा सुन्दर है।

या बैलगाड़ियोंसे जाना होता था। उसमें काबालोगोंसे लुट जानेका भय रहता था तथा मार्गमें थूहर आदिके सिवा अन्य छायादार वृक्षोंका अभाव होनेके कारण यात्रियोंको कष्ट भी अधिक होता था। अब वैसी कोई असुविधा नहीं है।

द्वारका स्टेशनसे द्वारकाधीशका मन्दिर प्रायः २ मील है। यहींसे उसकी ध्वजाके दर्शन करके यात्री प्रणाम करते हैं। रेलसे जानेवाले यात्रियोंको राजकोट या जामनगरसे ही पण्डे मिल जाते हैं। द्वारका स्टेशनपर बहुत से अपरिचित पुरुष रहते हैं, वे किसी-न-किसी बहाने यात्रियोंका ध्यान अपना ओर आकर्षित कर लेते हैं और इसी बीचमें उनके दूसरे साथी यात्रियोंके सामानमेंसे जो कुछ हाथ लगता है उड़ा ले जाते हैं। इसलिये यहाँ पण्डोंके सहित स्वयं भी बहुत सावधान रहना चाहिये।

स्टेशनके पास ही रा० ब० बलदेवदास बसन्तलाल दुधवेवालेकी विशाल धर्मशाला है। इसमें पीनेको मीठा पानी है। परन्तु यहाँसे मन्दिर डेढ़ मील दूर पड़ता है, इसलिये दिनमें २-३ बार दर्शन करनेकी इच्छा रखनेवाले यात्रियोंको आने-जानेमें गाड़ी-भाड़ा अधिक खर्च करना पड़ता है। इसलिये अधिकांश लोग बस्तीमें ही ठहरते हैं।

धर्मशालामें ठहर चुकनेपर पहला काम गोमतीजीमें स्नान करना है। स्नानको जाते समय मार्गमें बड़ोदा स्टेटकी ओरसे १=)

प्रति यात्रीपर लिया जाता है। पहले, जबतक रेल नहीं निकली थी, ५) कर था। उसकी रसीद मिल जाती है। इसके बाद फिर और किसी दिन टैक्स नहीं देना पड़ता। गोमतीका घाट पक्का बना हुआ है। उसके ऊपर बारादरी भी है। उसमें तर्पणादि कराये जाते हैं। गोमतीमें मछलियाँ अधिक हैं। उन्हें यात्रीलोग जौके आटेकी गोलियाँ खिलाते हैं।

द्वारकाधीशमन्दिर—गोमतासे थोड़ी ही दूर द्वारकाधीशका मन्दिर है। ५६ सीढ़ियाँ चढ़नेपर मन्दिरका मुख्य द्वार आता है। सीढ़ियोंपर ही माखन मिश्री और पट इत्यादिकी दूकानें सजी रहती हैं। उनसे भगवान्‌के लिये भोग लेकर कीर्तन करते हुए मन्दिरमें प्रवेश करते हैं। ऊपर पहुँचते ही समुद्रका दर्शन होता है। ऊँचाईसे देखनेके कारण उसका दृश्य बड़ा सुन्दर जान पड़ता है तथा उसकी गड़गड़ाहट और शीतलवायुसे यात्रियोंका सारा परिश्रम दूर होकर चित्त प्रसन्न हो जाता है।

मन्दिरमें प्रवेश करनेपर मालियोंकी दूकानें मिलती हैं, उनसे पुष्प तथा पुष्पहार लेकर आगे बढ़ते हैं। सामने भगवान्‌की अन्तर्वेदीका जगमोहन है। उसके बायें हाथकी ओर बलदेवजीका मन्दिर है। भगवान्‌के मस्तकपर रत्नजटित मनोहर मुकुट सुशोभित है, श्यामवर्ण चतुर्भुज मूर्ति है, हाथोंमें शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हैं, कानोंमें मकराकृत कुण्डल, गलेमें वैजयन्तीमाला और वक्ष स्थलपर कौस्तुभमणि सुशोभित हैं। शरीरमें पीला झगा और जामा सुशोभित है। यहाँ भगवान् राजराजेश्वर हैं। दर्शक

वृन्द तरह-तरहके स्तोत्र, पद और नामोंका कीर्तन करके अपनी श्रद्धाञ्जलि समर्पित करने लगते हैं। सर्वत्र आनन्दकी तरङ्ग-सी फैल जाती है। दक्षिणकी भाँति यहाँ यात्रियोंको भगवानसे दूर नहीं रहना पड़ता, पुष्पादि स्वयं ही चढ़ाये जा सकते हैं।

दर्शनके पश्चात् भगवान्की परिक्रमा की जाती है। परिक्रमामें कुशेश्वर महादेव, बलदेवजी, प्रद्युम्नजी, रुक्मिणी आदि आठ पटरानी, वेणीमाधवजी, लक्ष्मीनारायणजी, पुरुषोत्तमजी और माता देवकीजी आदिके मन्दिर हैं। इन मन्दिरोंमेंसे किसीमें।) ओर किसीमें ≈) दक्षिणा देनेसे यात्री स्वयं देवपूजन कर सकता है। द्वारकाधीशजीके मन्दिरका प्रवेशशुल्क ॥) है। इस दक्षिणाकी एक रसीद मिलती है। एक बार दक्षिणा देकर फिर रोज पूजन करनेका अधिकार मिल जाता है। कुशेश्वर महादेवके विषयमें यहाँ ऐसी कथा प्रचलित है कि इन्हें श्रीवामनभगवान्ने कुश नामक राक्षसको मारकर स्थापित किया था। माता देवकीजीका मन्दिर भगवान्के सामने है। माताजी अपने लालका मुख देखते नहीं अघातीं, इसीलिये वे मानो सर्वदा उनके सामने रहती हैं। इस प्रकार परिकरसहित श्रीद्वारकाधीशके दर्शनोंसे नेत्रोंको तृप्त करके यात्री अपने निवासस्थानपर लौट आते हैं। इस मन्दिरकी ऊँचाई १४० फीट है, अच्छा लम्बा-चौड़ा जगमोहन है और सब ओर सङ्गमरमरका फर्श है।

द्वारकाधीशके मन्दिर और गोमतीसरोवरके विषयमें यहाँ एक कथा प्रचलित है, उसे यहाँ दे देना अप्रासङ्गिक न होगा। कहते हैं, जिस समय समस्त यदुकुलका नाश हो गया और बचे हुए स्त्री

एन बचोंको अर्जुन हस्तिनापुर ले गये तो भगवान्‌की इच्छासे सूनी हुई उस सुवर्णपुरीको समुद्रने अपनी गोदमें स्थान कर लिया। वहाँ यादवोंके सुवर्णमय महल और मनोहर उद्यान थे, उस स्थानपर रत्नाकरकी उत्ताल तरङ्गे खेलने लगीं तथा उस सुवर्णपुरीका कोई भी चिह्न अवशिष्ट न रहा।

यह देखकर पितामह ब्रह्माजीने उस पुण्यपुरीका उद्धार करनेकी कामनासे समुद्रतटपर तप करना आरम्भ किया। कुछ काल तप करनेपर उन्हें आकाशवाणी हुई कि चक्रतीर्थमें मेरी प्रतिमा है। उसे निकालकर गोमतीगङ्गाके जलसे अभिषेक कराकर समुद्रतटपर स्थापित कर दो। उसमें मैं रहूँगा। तब ब्रह्माजीने चक्रतीर्थसे प्रतिमा निकालकर गोमतीजीका आवाहन किया। जब वे प्रकट हुईं तो उनके जलसे अभिषेक कराकर ब्रह्माजीने उस मूर्तिकी विधिवत प्रतिष्ठा की। उस समय विश्वकर्माने एक रातमें ही उसके लिये एक दिव्य मन्दिर तैयार कर दिया। इस प्रकार यह द्वारकाधीशजीकी प्रतिमा श्रीब्रह्माजीकी स्थापित की हुई है।

गोमतीजीकी विश्रान्ति—गोमतीजीकी विश्रान्ति धनुषाकार है। यह समुद्रतक चली गयी है। इसमें समुद्रका जल भी आता रहता है। इसलिये इसका जल खारी है। समुद्र दो बार दिनमें और दो बार रातमें इसे भर देता है, और समुद्रके उतरनेके साथ इसका जल भी उतर जाता है। इसके किनारे बहुत से मन्दिर और घाट बने हुए हैं। घाटोंके नाम इस प्रकार हैं—गोमती या सङ्गम-घाट, वासुदेवघाट, गङ्गाघाट, ब्रह्माघाट, पाण्डवघाट, रूपघाट और

पार्वतीघाट। इसके दक्षिणतटपर पाँच सरोवर हैं, उनमें आचमनादि करनेका विशेष माहात्म्य है। यहाका दृश्य बहुत सुन्दर है।

पुरीपरिक्रमा—पुरीकी परिक्रमामें बहुत-से तीर्थ हैं। उनमें स्वर्गद्वार, ब्रह्मपुरी, दामोदरकुण्ड, गयाकुण्ड, कृकलासकुण्ड और दुर्वासाकुण्ड प्रधान हैं। कृकलासकुण्ड वह स्थान है जहाँ भगवान्ने कृकलास (गिरगिट) बने हुए राजा नृगका उद्धार किया था। परिक्रमामें ही महारानी जाम्बवतीके देहत्यागके स्थान तथा नरसीकी हुण्डी सिकरनेके स्थानके भी दर्शन होते हैं। इनके सिवा सिद्धनाथ महादेव और जय विजयकी प्रतिमाएँ भी यहीं हैं।

ध्वजारोहण—जिस समय कोई श्रीमान् यात्री भगवान्के मन्दिरपर ध्वजारोहण करता है उस समय यहाँ बड़ी चहल-पहल होती है। ध्वजामें ५० गज कपड़ा लगता है। सब यात्री मन्दिरके आस पास इकट्ठे हो जाते हैं। ब्रह्मपुरीमें तरह-तरहके भोजन तैयार किये जाते हैं। पुजारीजी मन्दिरके ऊपर चढ़कर पुरानी ध्वजा उतार देते हैं तथा नयी ध्वजा लगाकर उसे फहराते हैं। उस समय ऊपरसे एक नारियल छोड़ दिया जाता है। वह महाप्रसादके रूपमें बाँटा जाता है। इसके पश्चात् ब्रह्मभोज होता है। इस कार्यमें प्राय एक सहस्र रुपया लगता है।

द्वारकानाथका पूजन—जो यात्री भगवान्का स्वय पूजन करना चाहे वे प्रात काल उसमें भाग ले सकते हैं। उसमें १।।) दक्षिणा लगती है। पूजनके समय पहुँचकर यात्री स्वयं ही स्नानादि

करा सकते हैं। जबतक शृङ्गार और पूजन होकर आरती होती है तबतक यहाँ रह सकते हैं। जो यात्री इतना खर्च नहीं कर सकते वे ॥) दक्षिणा देकर भगवान्‌के चरण स्पर्श कर सकते हैं। इसके सिवा जिनकी इच्छा हो वे शयनके समय उपस्थित रहकर भगवान्‌को पुष्पहार पहना सकते हैं। वह पुष्पहार रातभर भगवान्‌के गलेमें रहता है, इसलिये जिन्हें इसका पता है वे उस समय उपस्थित रहकर पुजारीको हार दे देते हैं और वे उसे भगवान्‌को पहना देते हैं।

मन्दिरका सेवाका प्रबन्ध बड़ोदा स्टेटकी ओरसे है। यात्रियोंसे भी सहस्रों रुपया सालाना आमदनी होती है। मन्दिरकी सेवाका ठेका दे दिया जाता है। उसमें यदि कुछ कमी रहती है तो उसे गायकवाड़ बड़ौदा पूरा कर देते हैं। द्वारकापुरी सप्तमोक्षदायिका पुरियोंमेंसे एक है और चारों धामोंके अन्तर्गत भी है। इसलिये यह बड़ा पवित्र स्थान माना जाता है। बहुत से श्रद्धालु भक्तजन यहाँ प्राणपरित्यागके लिये भी रहते हैं। यहाँ द्वारकापीठके जगद्गुरु शङ्कराचार्यजीकी भी गद्दी है। कभी कभी मन्दिरमें उनका उपदेश होता है।

गोपीकुण्ड

गोपीकुण्ड द्वारकाधामका एक प्रधान तीर्थ है। यहाँ जानेके लिये मोटर लारी और बैलगाड़ी दोनों ही मिल जाती हैं। एक

यात्रीके पीछे प्राय ।||) किराया पड़ता है । बहुत-से यात्री तो जिस दिन जाते हैं उसी दिन लौट आते हैं, जिन्हें रहना हो अथवा ब्राह्मणोंको भोजन कराना हो उन्हें साधारण वस्त्र और भोजनकी सामग्री साथ ले जानी चाहिये । यदि कोई लोग गोपीकुण्डसे पाल्नौका-द्वारा बेटद्वारका जाना चाहें तो उधरसे ही जा सकते हैं । इसमें कुछ खर्चेकी किफायत हो जाती है परन्तु समुद्रमें अधिक दूर चलना पड़ता है । जैसी जिसकी सुविधा हो उसके अनुसार वह कर सकता है ।

गोपीकुण्ड जाते समय मार्गमें जङ्गल पड़ता है । बीचमें नागेश्वर महादेव आते हैं । कोई-कोई इन्हें द्वादश ज्योतिर्लिङ्गोंमें बतलाते हैं । इस विषयमें 'नागेशो द्वारकावने' इस वचनका प्रमाण देते हैं । यह अत्यन्त निर्जन स्थान है ।

नागेश्वरके दर्शन करके यात्री गोपीतालाबपर पहुँचते हैं । यह एक छोटा-सा सरोवर है, सम्भव है पहले बड़ा रहा हो । इसके तटपर गोपीनाथजीका मन्दिर है तथा पास ही एक धर्मशाला और साधुओंके लिये क्षेत्र है । यात्रीलोग तालाबमें तीर्थविधि करके श्रीगोपीनाथजीका दर्शन करते हैं और फिर जिन्हें वहाँ ठहरना होता है धर्मशालामें ठहर जाते हैं इस सरोवरमें पीले रंगकी रज है । इसे गोपीचन्दन कहते हैं । यह बहुत पवित्र मानी जाती है । कोई यात्री इसे तालाबमेंसे निकालकर ले जाते हैं, वैसे इसका सूखा गोला मोल भी मिल जाता है ।

है। इस मन्दिरकी सेवाका प्रबन्ध भी बड़ोदास्टेटकी ओरसे ही है।

यह स्थान गोमतीद्वारकाकी अपेक्षा अधिक रमणीय है। चारों ओर समुद्र लहरा रहा है, समुद्रका शीतल पवन यात्रियोंके श्रान्त शरीरोंमें नवजीवनका सचार कर देता है तथा सायंकालका सुगन्धित धूप, आरती और शङ्खध्वनिसे उनका चित्त आनन्दमें विभोर हो जाता है। यहाँ एक स्थान सुवर्णकी द्वारका भी है। वह भगवान्‌की सुवर्णमयी द्वारकाकी नकल ही है। इसमें सब छोटे बड़े घर पीले रंगके बनाये गये हैं। इसके दर्शनकी दक्षिणा एक आना है। इसकी देख-रेखके लिये एक सेवक नियुक्त है, वह उसके सब स्थानोंका मर्म समझा देता है।

पीपा भक्तकी छाप—मन्दिरके बाहर एक पीपलके वृक्षके नीचे पीपा भक्तकी छाप लगती है। बहुत से साधु-वैराग यह छाप लगाते हैं। उनका ऐसा विश्वास है कि यह छाप लगवा लेनेपर यमराजका दण्ड नहीं हो सकता, तथा सन्ततिके अभावमें पिण्डदानादि न होनेपर भी दुर्गति नहीं होती। पीपाजी भगवान्‌के बड़े भक्त थे। उन्हें सुवर्णका द्वारकाके दर्शन होते थे। परन्तु लोग उनकी बातका विश्वास न करके हँसीमें टाल देते थे। एक दिन कुछ खिन्न होकर वे समुद्रमें कूद पड़े और कहा कि यदि

१ वैष्णवोंमें छाप लगवानेकी प्रथा तो बहुत प्राचीन है। मालूम नहीं यहाँ पीपाजीके नामसे ही यह क्यों प्रसिद्ध हुई। सम्भव है इसमें आगेका कथानक ही हेतु हो।

हमारी बात ठीक होगी तो हम भगवान्‌का कुछ चिह्न लेकर जीवित ही बाहर आ जायँगे। उस समय जब वे निकले तो उनकी भुजाएँ भगवान्‌के आयुध शङ्ख, चक्र, गदा, पद्मसे अंकित थीं। भगवान्‌ने उन्हें अपनी गोदमें लेकर स्वयं अङ्कित करके यह वर दिया कि इस घटनाके कारण ही लोग तुम्हारा स्मरण करेंगे। पीपाजी-ने बाहर आकर लोगोंको अपनी भुजाएँ दिखायीं और कहा कि जो कोई द्वारकाधाममें ऐसी छाप लगवावेंगे उन्हें मृत्युके पश्चात् यमका दर्शन नहीं होगा। तभीसे लोग छाप लगवाने लगे हैं। कोई-कोई पक्की छाप न लगवाकर कच्ची लगवाते हैं। परन्तु यह सब अपनी अपनी श्रद्धापर अवलम्बित है। सबके लिये छाप लगवाना जरूरी नहीं है।

शङ्खोद्धार तीर्थ

बेटद्वारकाके पास ही शङ्खसरोवर है। कहते हैं, यहाँ एक ऋषि तपस्या किया करते थे। उनके एक शिष्यने उनका शङ्ख इस सरोवरमें छिपा दिया। जब ऋषिको योगबलसे उसकी इस चञ्चलताका पता चला तो उन्होंने उसे शाप दिया कि तू शङ्ख होकर इसी सरोवरमें रह। इसपर उसने बड़ी करुणापूर्वक मुनिसे अपराध क्षमा करनेकी प्रार्थना की। तब उन्होंने कहा, 'अच्छा, द्वापरके अन्तमें भगवान्‌का अवतार होगा, वे तेरा उद्धार कर देंगे, तबसे यह सरोवर शङ्खोद्धार तीर्थके नामसे विख्यात होगा और जो कोई इसमें स्नान करेगा उसे गङ्गा, प्रभासक्षेत्र, गोदावरी और नर्मदादिके स्नानका फल प्राप्त होगा।'

बस, वह शिष्य उसमें शरण होकर रहने लगा। अन्तमें भगवान्ने उसका उद्धार किया और तभीसे यह सरोवर शङ्खोद्धारके नामसे विख्यात हुआ। इसके किनारे श्रीशङ्खनारायणका एक मन्दिर भी है। इस तीर्थका बड़ा माहात्म्य है।

इसके सिवा यहाँ समुद्रके किनारे श्रीमहावीरजीका एक मन्दिर है। उस स्थानकी रमणीयता देखते ही बनती है।

बेटद्वारकाकी परिक्रमा—जो यात्री बेटद्वारकाकी परिक्रमा करना चाहते हैं वे पाल्नाकाम चढ़कर उसके चारों ओर घूम आते हैं। यह एक छोटा सा टापू है। इसकी रेतीमें शालग्राम और चक्रका अनगढ़ मूर्तियाँ मिलती हैं। बहुत से यात्री उनमेंसे कुछ मूर्तियाँ साथ ले आते हैं। फिर जिन्हें वहाँ रात्रिवास करना होता है वे धर्मशालाम ठहर जाते हैं, नहीं तो उसी समय नौकाद्वारा ओखापोर्ट लौटकर फिर गोमतीद्वारका आ जाते हैं। यहाँ धर्मशालामें तीर्थगुरुकी चरणपूजा कर उन्हें दक्षिणा देकर यात्रा सुफल कराते हैं। फिर चलतीवार भगवान्के दर्शन कर उनसे विदा होकर आगेकी यात्रा आरम्भ करते हैं।

द्वारका मोक्षपुरियोंमेंसे एक पुरी और चार धामोंमेंसे एक धाम है। इसलिये इसका बड़ा माहात्म्य है। यहाँके तीर्थगुरु इसका माहात्म्य इस प्रकार सुनाते हैं—

"एक बार नैमिषारण्यमें एकत्रित हुए शौनकादि अट्ठासी सहस्र ऋषियोंने सूतजी महाराजसे प्रश्न किया कि संसारमें ऐसी किस तीर्थकी यात्रा है जिसे करनेसे पुरुष अनायास ही पापमुक्त हो जाते हैं?"

इसपर सूतजीने कहा कि द्वारकाकी यात्रा और वहा गोमती-स्नान करनेके इतने फल हैं कि उनका वर्णन नहीं किया जा सकता। शास्त्राने द्वारकाको मोक्षपुरी बतलाया है। कुरुक्षेत्रमें सूर्यग्रहणके समय स्नान करनेसे, सिंहराशिके बृहस्पति होनेपर गोदावरीस्नान करनेसे, निराहार रहकर ब्राह्मणोंको वेदाध्ययन करनेसे और भागीरथी, कावेरी तथा नर्मदामें सर्वदा स्नान करनेसे जिन फलोंकी प्राप्ति होती है वे सब द्वारकायात्रा करके गोमतीस्नान और द्वारकानाथके दर्शन करनेसे मिल जाते हैं।

पद्मपुराणमें लिखा है कि गोमतीचक्र और द्वादश शालग्रामोंका पूजन करनेसे पुरुष मृत्युके पश्चात् स्वर्ग प्राप्त करते हैं। जो पुरुष द्वारकामें तीन रात्रि निवास करते हैं उनके सब पाप नष्ट हो जाते हैं तथा जो अपने शरीरमें गोपीचन्दन लगाते हैं उनके भी बड़े-से-बड़े पाप नष्ट हो जाते हैं। जिस स्थानमें गोमती-द्वारकाके चक्र और शालग्रामकी मूर्ति रहते हैं वह पवित्र हो जाता है। द्वारकामें समुद्रके किनारे जो पाँच कुण्ड हैं उनमें स्नान करनेसे मनुष्यका कोई पाप नहीं बचता।

इसलिये हे मुनियो! द्वारकायात्रासे जीव निष्पाप हो जाता है। आपलोगोंकी इच्छा हो तो द्वारकायात्रा कीजिये।

इस प्रकार सक्षेपमें यह द्वारकाका माहात्म्य है। यहाँका जलवायु भी अच्छा है। भोजनादिकी आवश्यक सामग्री मिल जाती है। डाकखाना आदि सब हैं ही।

द्वारकाखण्ड समाप्त

बदरी-केदार-खण्ड

सिद्धपुर

द्वारकासे सिद्धपुर आनेके लिये राजकोट और अहमदाबादमें गाड़ी बदलनी पड़ती है। द्वारकासे राजकोट १३८ मील, राजकोटसे अहमदाबाद १५५ मील और अहमदाबादसे सिद्धपुर ४३ मील है। यह स्थान भगवान् कपिलदेवकी जन्मभूमि है। इसका दूसरा नाम मातृगया भी है। गयामें जैसे पितृपक्षके पूर्वजोंका श्राद्ध करनेकी विधि है उसी प्रकार यहाँ मातृपक्षके पूर्वजोंका श्राद्ध किया जाता है।

सिद्धपुर पहुँचनेसे पहले ही यहाँके तीर्थपुरोहित मिल जाते हैं, यदि न भी मिलें तो सिद्धपुर स्टेशनपर तो अवश्य ही उनसे भेंट हो जाती है। स्टेशनके पास ही बड़ौदा नरेशकी धर्मशाला है, परन्तु वह जीर्ण-शीर्ण अवस्थामें है, इसलिये यात्रीगण पण्डोंके यहाँ ही ठहर जाते हैं। सिद्धपुरका प्रधान तीर्थ बिन्दुसर है। यह बस्तीसे प्रायः एक मील है। कहते हैं, इसीके तटपर महर्षि कर्दमने तप किया था। उनकी तपस्यासे प्रसन्न होकर जब भगवान्‌ने उन्हें दर्शन दिया तो उनका भक्तिभाव देखकर भगवान्‌के नेत्रोंसे कुछ आँसूकी बूँदें इस सरोवरमें गिर गयीं। इसीसे इसका नाम बिन्दुसर हुआ, और यह महान् पवित्र समझा जाने लगा। इसके तटपर तीन मन्दिर हैं, जिनमें श्रीलक्ष्मीनारायण, श्री[illegible] भगवान् और श्रीसीतारामजीके दर्शन होते हैं। इनके सिवा एक मन्दिरमें महर्षि कर्दम और देवहूतिजीकी प्रतिमाएँ हैं और एक अन्य मन्दिरमें सिद्धेश्वर महादेव हैं। इनके पास ही ज्ञानवापी नामकी एक बावड़ी है। बिन्दुसर पक्का सरोवर है। इसके चारों ओरसे पत्थरकी सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। इसीके तटपर श्राद्धादि तीर्थविधि की जाती है। इसके पास एक दूसरा सरोवर है, जिसका जल सफाईकी अ[illegible] के कारण बिगड़ गया है। इसकी सफाईकी आ[illegible] कुछ महाभारत वनपर्वके अनुसार पाण्डवोंने भी नि[illegible] काल निवास किया था।

ऊपर कहा जा चुका है यह स्थान महर्षि कपिलकी ज[illegible] है। उन्होंने अपनी माता देवहूतिजीको सांख्यशास्त्रका उप[illegible]

था। माताको उपदेश करके वे तो गंगासागरको चले गये थे और देवहूतिजीने यहाँ अपना शरीर त्यागा था। श्रीमद्भागवतमें लिखा है कि उनका वह मृतक शरीर ही सरस्वतीनदीके रूपमें परिणत हो गया है। अतः यात्रीलोग यहाँ सरस्वतीमें बड़ी श्रद्धापूर्वक स्नान करते हैं। इस नदीमें एक प्रकारके सर्प होते हैं परन्तु वे किसीको काटते नहीं हैं।

इनके सिवा गोविन्दरायका मन्दिर और रुद्रमहालय भी यहाँके प्रधान स्थान हैं। रुद्रमहालयके अब केवल खण्डहर ही अवशिष्ट हैं। किसी समय यह श्रीमहादेवजीका एक प्रसिद्ध मन्दिर था। इसे सन् १२०० ई० में अलाउद्दीन खिलजीने नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था।

सिद्धपुरमें और भी बहुत से देवालय हैं। स्टेशनके पास एक मन्दिरमें शेषशायी भगवान्‌की बड़ी दर्शनीय मूर्ति है। यह बहुत प्राचीन सिद्ध स्थान है। यहाँ तीर्थगुरुओंके सहस्रों घर हैं। इस स्थानका जलवायु अच्छा है तथा सब प्रकारकी आवश्यक सामग्री मिल जाती है। डाकखाना आदि भी हैं ही।

पद्मपुराणमें लिखा है कि बिन्दुसरपर श्राद्ध-तर्पण करनेसे पितरोंको रुद्रलोककी प्राप्ति होती है। जो लोग यहाँ अपने मातृपक्षीय पितरोंका श्राद्ध करते हैं वे धन्य हैं। यह स्थान केदारतीर्थकी भाँति पवित्र माना गया है।

उज्जैन

उज्जैन सात मोक्षदा पुरियोंमेंसे एक है। यहाँ महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग है। यह पुरी क्षिप्रा नदीके तीरपर बसी हुई है। इसका प्राचीन नाम अवन्तिका[1] है। यह बहुत प्राचीन कालसे बड़े-बड़े सम्राटोंकी राजधानी और विद्वानोंका शिक्षापीठ रही है। जगद्गुरु शंकराचार्यके समय यहाँ राजा सुधन्वा राज्य करता था। उसने वैदिक धर्म छोड़कर जैनधर्म स्वीकार कर लिया था। उसीने इसका नाम अवन्तिकासे बदलकर उज्जैन[2] रखा। पीछे उसने भगवान् श्रीशंकराचार्यकी बहुत प्रशंसा सुनकर उन्हें आदरपूर्वक बुलवाया

---

१ इसके सिवा शास्त्रोंमें इसके अमरावती, अवन्ती, पद्मावती, शिवपुरी और विशाला आदि नाम भी मिलते हैं।

२ 'उज्जैन' शब्दका यौगिक अर्थ इस प्रकार होगा 'उन्नतो जैन जैनधर्मो यत्र' अर्थात् जहाँ जैनधर्मका उत्कर्ष हो।

था। माताको उपदेश करके वे तो गंगासागरको चले गये थे और दाहूनिमान यहीं अपना शरीर त्यागा था। श्रीमद्भागवतमें लिखा है कि उनका वह मनका शरीर ही सरस्वतीनदीके रूपमें परिणत हो गया है। अब यात्रीलोग यहाँ सरस्वतीनामें बड़ी श्रद्धापूर्वक स्नान करते हैं। इस नदीमें एक प्रकारके सर्प होते हैं, परन्तु वे किसीको काटते नहीं हैं।

इनके सिवा गोविन्दरायका मन्दिर और रुद्रमहालय भी यहाके प्रधान स्थान हैं। रुद्रमहालयके अब केवल खण्डहर ही अवशिष्ट हैं। किसी समय यह श्रीमहादेवजीका एक प्रसिद्ध मन्दिर था। इसे सन् १३०० ई० में अलाउद्दीन खिलजीने नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था।

सिद्धपुरमें और भी बहुत से देवालय हैं। स्टेशनके पास एक मन्दिरमें शेषशायी भगवान्की बड़ी दर्शनीय मूर्ति है। यह बहुत प्राचीन सिद्ध स्थान है। यहाँ तीर्थगुरुओंके सहस्रों घर हैं। इस स्थानका जलवायु अच्छा है तथा सब प्रकारकी आवश्यक सामग्री मिल जाती है। डाकखाना आदि भी हैं ही।

पद्मपुराणमें लिखा है कि बिन्दुसरपर श्राद्ध-तर्पण करनेसे पितरोंको रुद्रलोककी प्राप्ति होती है। जो लोग यहाँ अपने मातृपक्षीय पितरोंका श्राद्ध करते हैं वे धन्य हैं। यह स्थान केदारतीर्थकी भाँति पवित्र माना गया है।

उज्जैन

उज्जैन सात मोक्षदा पुरियोंमेंसे एक है। यहाँ महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग है। यह पुरी क्षिप्रा नदीके तीरपर बसी हुई है। इसका प्राचीन नाम अवन्तिका[1] है। यह बहुत प्राचीन कालसे बड़े-बड़े सम्राटोंकी राजधानी और विद्वानोंका शिक्षापीठ रही है। जगद्गुरु शंकराचार्यके समय यहाँ राजा सुधन्वा राज्य करता था। उसने वैदिक धर्म छोड़कर जैनधर्म स्वीकार कर लिया था। उसीने इसका नाम अवन्तिकासे बदलकर उज्जैन[2] रखा। पीछे उसने भगवान् श्रीशंकराचार्यकी बहुत प्रशंसा सुनकर उन्हें आदरपूर्वक बुलाया

---

१ इसके सिवा शास्त्रोंमें इसके अमरावती, अवन्ता, पद्मावती, शिवपुरी और विशाला आदि नाम भी मिलते हैं।

२ 'उज्जैन' शब्दका यौगिक अर्थ इस प्रकार होगा 'उद्गतो जैनधर्मो यत्र' अर्थात् जहाँ जैनधर्मका उत्कर्ष हो

और अपने जैनधर्मावलम्बी सभापण्डितोंसे उनका शास्त्रार्थ कराया। शास्त्रार्थमें आचार्यकी विजय होनेसे उसने पुन वैदिक धर्म स्वीकार कर लिया और फिर उसने उस धर्मके प्रचारमें आचार्यकी सहायता भी बहुत की। इसी प्रकार उज्जैनके साथ महाराज विक्रमादित्य और उनके कालिदासादि नवरत्नोंका भी सम्बन्ध है। अपने बडे भाई भर्तृहरिके विरक्त हो जानेपर राजा विक्रमादित्यने अतिसाम्राज्यकी बागडोर सँभाली और उसका ऐसा अच्छा सुप्रबन्ध किया कि वे आजतक भारतके आदर्श सम्राटोंमें गिने जाते हैं। उन्हींकी स्मृतिमें विक्रमी सवत् चलाया गया है। कहाँतक कहें, अवन्तिकापुरी भारतीय सभ्यता, साहित्य, कला, धर्म और शासन सभीका बहुत प्राचीन कालसे केन्द्र रही है। एक एक करके यहाँ कितने ही राजवंशोंका अधिकार हुआ, परन्तु सभीने इसके गौरवको अक्षुण्ण रखा। हा, जबसे यहा मुसल्मान शासकोंका पदार्पण हुआ तबसे इसकी वह पूर्वश्री स्थिर नहीं रह सकी। जो हो, आस्तिक हिन्दुओंका तो वह आज भी एक पवित्रतम तीर्थस्थान है। प्राचीन पुरी भूकम्प और क्षिप्रा नदीकी बाढ़से नष्ट हो गयी है। उसके केवल खण्डहर दिखायी देते हैं। अब रेलवे स्टेशनसे प्राय एक मीलकी दूरीपर नवीन ढगसे उज्जैन नगर बसाया गया है।

सिद्धपुरसे उज्जैन जानेके लिये अहमदाबाद, बडादा और नागदामें गाडियाँ बदलनी पडती हैं। ये सब B B & C I Ry के स्टेशन हैं। सिद्धपुरसे अहमदाबाद ४३ मील, अहमदाबादसे बडौदा ६२ मील, बडौदासे नागदा १६८ मील और नागदासे उज्जैन ३४ मील है।

इसके सिवा दूसरा रास्ता अहमदाबाद, गोधरा और रतलाम होकर है। यहाँ स्टेशनके पास ही सेंधिया सरकारकी एक विशाल धर्मशाला है, जिसमें प्रायः ३०० यात्रियोंके ठहरनेका स्थान है। दूसरा धर्मशाला क्षिप्रा नदीके रामघाटपर है और तीसरी कार्तिक चौकमें है। इनके सिवा यात्री अन्य धर्मशाला अथवा पण्डोंके मकानोंमें भी ठहर सकते हैं।

धर्मशालामें ठहर जानेपर यात्रीलोग क्षिप्रा नदीमें स्नानादि तीर्थविधि करके भगवान् महाकालेश्वरके दर्शनार्थ जाते हैं। महाकालेश्वरजीका मन्दिर पाँचमञ्जिला है। शिवलिङ्ग नीचेके मञ्जिलके भी नीचे है। इसके दर्शनार्थ दालानकी बगलसे एक अँधेरे रास्तेसे गुफाके भीतर जाना होता है। यहाँ घृतका अखण्ड दीपक जलता रहता है। यात्रीलोग महाकालेश्वरजीपर मेवा, मिष्टान्न और बिल्वपत्रादि चढ़ाते हैं तथा उनका प्रसाद भी ले जाते हैं। महाकालेश्वरजीके समीप गणेशजी और पार्वतीजीकी भी मूर्तियाँ हैं। मन्दिरका सेवा-पूजाका प्रबन्ध महाराज सिंधिया, महाराज होल्कर तथा अन्य राजा और रईसोंकी ओरसे है। यहाँके पुजारी तैलङ्ग ब्राह्मण होते हैं, जिनकी नियुक्ति सिंधिया सरकारकी ओरसे होती है। प्रतिदिन प्रातःकाल चार बजे प्रातःपूजा होती है। स्नानके बाद भगवान्‌के चिताभस्म लगायी जाती है। उसके पश्चात् पुष्प-पत्रादि चढ़ाकर आरती होती है। यात्रियोंको आरतीके समय शिव-दर्शन अवश्य करना चाहिये।

महाकालेश्वरजीके मन्दिरके चारों ओर सुन्दर मकान और धर्मशालाएँ हैं। मन्दिरके भीतर ही एक तालाब है, जिसे कोटितीर्थ

रहते हैं। आँगनके एक ओर मन्दिर है और तीन ओर पक्के मकान हैं। मन्दिरके दूसरे मञ्जिलपर श्रीओंकारेश्वर नामक शिवलिङ्ग है। मन्दिरके आँगनमें एक विशाल भवन है जिसमें सहस्रों मनुष्य बैठ सकते हैं तथा पास ही वृद्ध महाकालेश्वरका प्राचीन मन्दिर है।

यह ज्योतिर्लिङ्ग पद्मपुराणमें कहे हुए मुख्य लिङ्गोंमेंसे एक है—

आकाशे तारकं लिङ्गं पाताले हाटकेश्वरम्।
मृत्युलोके महाकालं लिङ्गत्रय नमोऽस्तु ते॥

इसके विषयमें शिवपुराणमें यह कथा है कि उज्जैनमें एक शिवभक्त ब्राह्मण रहता था। उसके चार पुत्र थे। वे भी अनन्य शिवभक्त थे। उन्हीं दिनों रत्नमाला पर्वतपर दूषण नामक एक दैत्यने जन्म लिया। उसने तपस्याद्वारा ब्रह्माजीको प्रसन्न कर उनसे वर प्राप्त किया और सबको कष्ट देने लगा। सर्वत्र त्राहि-त्राहि मच गयी। वह शिवभक्तोंको नष्ट करता हुआ उज्जैन पहुँचा। वहाँ उसने बहुत-से शिवभक्तोंको मार डाला और अन्तमें उपर्युक्त ब्राह्मणोंके पास पहुँचकर उन्हें भी ललकारा। इस समय वे सब शिवाराधनमें तत्पर थे, इसलिये उन्होंने उसकी कुछ भी परवा नहीं की। इससे दूषणका क्रोध और भी बढ़ गया, वह उन्हें नष्ट करना ही चाहता था कि भूकम्प और भयंकर शब्दके साथ पृथिवी फट गयी और उससे श्रीमहादेवजीने महाकालरूपसे प्रकट होकर उसे मार डाला। दूषणका नाश हो जानेपर उन भक्त ब्राह्मणोंने प्रार्थना की कि भगवन्! आप यहीं निवास करें। आपका दर्शन करनेसे

लोगोंके जन्म मरणके बन्धन नष्ट हो जायँ। आपने महाकालरूपसे दूषणका नाश किया है, इसलिये भक्तजन आपको महाकालेश्वर नामसे स्मरण करें। उसी समयसे उज्जैनमें श्रीमहाकालेश्वर विराजमान हैं।

उज्जैनके प्रधान तीर्थस्थान

हरसिद्धिदेवी—महाकालेश्वरके सामने रुद्रप्रयागतालके उस पार हरसिद्धिदेवीका मन्दिर है। ये महाराज विक्रमादित्यकी कुलदेवी थीं। उनकी इनमें बहुत श्रद्धा थी। तान्त्रिकोंके मतानुसार यह सिद्धपीठ है। जिस समय विष्णुभगवान्‌ने अपने चक्रसे सती-देवीके मृत शरीरके खण्ड किये थे उस समय इस स्थानपर उनकी एक कोहिनी गिरी थी। इनकी नवदुर्गाओंमें भी गणना है। यह मन्दिर बहुत विशाल और शिखरदार है। इसके सामने एक चौंपहला दीपस्तम्भ है, जिसपर उत्सवके समय सहस्रों दीपक रखे जाते हैं।

चौबीस स्तम्भोंका दरवाजा—यह एक बहुत प्राचीन दरवाजा है। इसमें चौबीस खम्भे हैं। लोग इसे महाराज विक्रमादित्यके किलेका एक भाग बतलाते हैं। इसके दोनों ओर देवमूर्तियाँ हैं और फाटकके भीतर चौबीस खम्भे हैं। लोग देवमूर्तियोंका पूजन करते हैं। नवरात्रमें ग्वालियर महाराजकी ओरसे यहा देवीका पूजन होता है।

गोपालमन्दिर—यह मन्दिर ग्वालियरकी महारानी बैजाबाईका बनवाया हुआ है। मन्दिर बहुत सुन्दर है। इसके शिखर और फर्श सगमरमरके हैं तथा चौखट और सिंहासनपर चाँदीका पत्र चढ़ा है। इसमें सदावर्त भी है।

विष्णुमन्दिर—गोपालमन्दिरसे प्रायः आधा मीलपर विष्णु भगवान्का मन्दिर है। इसके निकट क्षीरसागर नामक सरोवर है। मन्दिरके भीतर क्षीराब्धिनाथ भगवान् शेषशायीकी मूर्ति है। उनके साथ लक्ष्मीजी और ब्रह्माजी भी हैं तथा समीप ही राम, लक्ष्मण, जानकी और हनुमान्जीकी मूर्तियाँ हैं।

सिद्धवट—यह शहरसे तीन मील क्षिप्रानदीके तीरपर है। नीचे पत्थरका सुन्दर घाट बना हुआ है, पास ही धर्मशाला है। यहाँ कार्तिकशुक्ल चतुर्दशीको मेला लगता है। यहाँका दृश्य बड़ा मनोहर है।

श्रीनागचण्डेश्वर—ये महाकालेश्वरजीके दीवान कहे जाते हैं।

इनके सिवा और भी कई मन्दिर हैं, जिनमें सत्यनारायणजी, श्रीनाथजी और वैकुण्ठनाथजी आदि प्रधान हैं। ऊपरके वर्णनमें क्षीरसागर और रुद्रप्रयागनालेका उल्लेख हो चुका है। उनके अतिरिक्त यहाँ पाँच ताल और हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं—(१) विष्णुसागर, (२) गोवर्धनसागर, (३) पुरुषोत्तमसागर, (४) पुष्करसागर और (५) रत्नाकरसागर। ये सब मिलाकर सप्तसरोवर कहलाते हैं।

अन्य दर्शनीय स्थान

सान्दीपनि ऋषिका आश्रम—यह आश्रम बस्तीमें दो मील गोमतीगंगा नामक सरोवरके तटपर है। यहाँ सान्दीपनि मुनिका विद्यापीठ था। इसी विद्यापीठमें भगवान् कृष्ण, बलराम और उनके सखा सुदामाजीने साङ्गोपाङ्ग वेदाध्ययन किया था। इस समय यहाँ कई मन्दिर हैं, उनमें सान्दीपनि मुनि और इन तीनों गुरुभाइयोंकी मूर्तियाँ हैं।

भर्तृहरिकी गुफा—महाराज भर्तृहरि राजा विक्रमादित्यके ज्येष्ठ भ्राता थे। वे संस्कृतके बड़े विद्वान् और कवि थे। उन्होंने नीति, शृंगार और वैराग्यविषयक तीन शतकोंकी रचना की है, जो संस्कृतसाहित्यके सुप्रसिद्ध ग्रन्थरत्न हैं। अन्तमें वे राज्यभोगसे विरक्त हो गये थे। इस गुफामें उन्होंने बहुत दिनों तपस्या की थी। इसीमें उनके गुरु गोरखनाथजी भी रहते थे। उनकी धूनी इस समय भी इसमें मौजूद है।

गोपीचन्दकी गुफा—इस गुफामें राजा गोपीचन्दने तपस्या की थी। लोकोक्तिके अनुसार ये राजा भर्तृहरिके भानजे थे।

गोरखनाथजीकी गुफा—गुरु गोरखनाथजी एक सुप्रसिद्ध सिद्ध महात्मा हो गये हैं। भारतमें कई जगह उनके तपस्याके स्थान हैं। यहाँ भी यह गुफा उन्हींका स्मारक है।

कालियादह महल—यह उज्जैनका अत्यन्त प्राचीन और ऐतिहासिक महल है। पुराणोंमें इसे 'ब्रह्मकुण्ड' कहा गया है। प्राचीन कालमें यहाँ सूर्यभगवान्का मन्दिर होनेका प्रमाण मिलता है। खोज करनेसे यहाँ प्राचीन हिन्दूसंस्कृतिके बहुत-से चिह्न मिलते हैं। इस महलको माण्डवके सुल्तान नसीरुद्दीन खिलजीने एक प्राचीन स्थानको तोड़कर बनवाया था। यह क्षिप्रा नदीके तटपर बहुत ऊँचे स्थानपर बना है। इसमें क्षिप्राके जलसे भरे हुए ५२ कुण्ड हैं। इनमें क्षिप्राका जल सर्वदा इधरसे उधर कल्लोल करता आता-जाता रहता है, परन्तु इन कुण्डोंकी रचना ऐसी चतुराईसे की है कि जलके आवागमनका भान नहीं होता। यहाँपर चक्कीके

आकारका एक जलयन्त्र है। उसमें जल एक बार दायीं ओर और दूसरी बार बायीं ओर घूमता रहता है। यह देखनेमें ऐसा मनोमोहक है कि बहुत देरतक निरन्तर देखते रहनेपर भी तृप्ति नहीं होती।

इस महलपर सम्राट् अकबर और उसका पुत्र जहाँगीर भी मुग्ध थे। वे यहाँ आकर महीनों रहा करते थे। कहते हैं, इस महलमें रहनेके समय ही सम्राट् जहांगीर उज्जैनके जङ्गलमें रहनेवाले महान् योगी जयरूपके दर्शनार्थ जाया करता था। कुछ समय बाद यह महल जीर्ण होने लगा। तब सन् १८८६ में ग्वालियरराज्यके सेण्ट्रल इण्डिया विभागके सरसूबा सर माईकेल फिलोनने इसका जीर्णोद्धार कराया। उनके जानेके बाद यह यों ही पडा रहा। फिर सन् १९२० ई० में स्वर्गीय महाराज माधवराव सिंधियाने इसकी मरम्मत करायी है और एक सुन्दर उद्यानसे सुसज्जित करके इसकी शोभाको और भी बढ़ा दिया है। अब तो यह स्थान स्वर्गतुल्य हो गया है। सायंकालमें यहाकी शोभा बड़ी मनोहारिणी होती है। उज्जैन आनेवालोंको एक बार इस महलको अवश्य देखना चाहिये। यह उज्जैन नगरीसे ६ ७ मीलकी दूरीपर है।

न्यायालय—इस स्थानको महाराज विक्रमादित्यका न्यायालय बतलाया जाता है। यह जीर्ण-शीर्ण अवस्थामें है। इसकी मरम्मतकी आवश्यकता है।

उज्जैनके मेले

यहाँ हर कार्तिकी पूर्णिमाको एक बड़ा मेला लगता है। इसके अतिरिक्त शिवरात्रि और वैशाखपूर्णिमाको भी मेले लगते हैं। उज्जैन-

से डेढ़ मील क्षिप्रा नदीके बायें तटपर भैरवगढ़ है। यहाँ अम्बेश्वर महादेव हैं। वे उज्जैनके चौरासी लिंगोंमें ही गिने जाते हैं। वहाँ मा आषाढ़ शु० १५, वैशाख शु० १४ और कार्तिक शु० १४ को मेले लगते हैं।

उज्जैनका कुम्भ—प्रयाग और नासिककी भाँति यहा भी प्रत्येक बारहवें वर्ष जब सिंहराशिके बृहस्पति होते हैं कुम्भका मेला लगता है। यह मेला प्राय वैशाख मासके लगभग होता है। उस समय यहाँ लाखों यात्री और साधु सन्यासी एकत्रित होते हैं। उनमसे बहुत-से एक मास रहकर कल्पवास भी करते हैं। इस मेलेका प्रबन्ध ग्वालियरराज्यकी ओरसे होता है। प्रबन्ध अच्छा होनेपर भी कभी-कभी हैजेकी शिकायत हो जाती है। यात्रियोंको चाहिये कि ताजा और हल्का भोजन कर तथा उबाला हुआ [illegible] पीवें।

शास्त्रोंमें उज्जैनकी बहुत महिमा गायी गयी है। [illegible] लिखा है कि अवन्तिकापुरी पापोंको नष्ट करती है और [illegible] मोक्ष प्रदान करता है। जो लोग क्षिप्रा नदीमें [illegible] कालेश्वरके दर्शन करते हैं वे धन्य हैं।

यह बहुत प्राचीन पुरी है। इस समय [illegible] और साधु महात्माओंका एक केन्द्रस्थान है। [illegible] और साधु आश्रमोंकी अधिकता है। [illegible] मिल ही जाती हैं।

ओंकारनाथ

ओंकारनाथ भारतके प्राचीनतम तीर्थस्थानोंमें है। यहां द्वादश ज्योतिर्लिङ्गोंमेंसे ओंकारेश्वर और अमलेश्वर नामक दो ज्योतिर्लिङ्ग हैं। यहां आनेके लिये B I & C I रेल्वेके मोरटका स्टेशनपर उतरना होता है। उज्जैनसे मोरटका ७४ माल है। बीचमें फतिहाबाद और इन्दोरके स्टेशन पड़ते हैं। मोरटकासे ओंकारनाथ आठ मीलके लगभग है। वहाँ लारियों या बेलगाड़ियोंसे जा सकते हैं। स्टेशनके पास ही धर्मशाला है। यदि किसी समय सवारी न मिले तो उसमें ठहर सकते हैं।

ओंकारेश्वरका मन्दिर ओंकार मान्धाता नामक गाँवमें है। यह एक पहाड़के ऊपर है। इस पहाड़ीके दक्षिणी भागमें श्रीनर्मदाजी बहती हैं। उनमेंसे ओंकारपुरीसे एक मील ऊपर कावेरी नामकी एक शाखा निकली है, जो इस पहाड़के उत्तरकी ओर बहती हुई प्रायः डेढ़ मीलपर नर्मदाजीमें ही मिल जाती है। इस प्रकार यह एक टापू-सा बन गया है। लोग इस टापूको मान्धाता नामसे पुकारते हैं। स्कन्दपुराणके नर्मदाखण्डमें लिखा है कि प्राचीन कालमें सूर्यवंशी महाराज मान्धाताने इस पहाड़ीपर तपस्या करके भगवान् शंकरको प्रसन्न किया। जब उन्होंने प्रकट होकर वर माँगनेको कहा तो महाराजने प्रार्थना की कि मुझे तो आपकी अनन्य भक्तिके सिवा और किसी वस्तुकी अभिलाषा नहीं है, किन्तु आप जीवोंके कल्याणके लिये इसी पहाड़ीपर विराजमान रहनेकी कृपा करें। तबसे वे ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिङ्गके रूपमें यहाँ विराजते हैं।

मान्धाता टापूका क्षेत्रफल एक वर्गमीलसे भी कम है। इसके ऊपर एक छोटा-सा गाँव है, जो शिवपुरी कहलाता है। नर्मदाके दक्षिणतटपर विष्णुपुरी और ब्रह्मपुरी हैं। इन तीनों पुरियोंका दृश्य बड़ा ही नयनाभिराम है। टापूके एक किनारे पहाड़के शिखरपर यहाँके राजाका सुन्दर महल है। वहाँतक जानेके लिये नर्मदाके तटसे ढालू रास्ता बना हुआ है। यहाँका राजा भिलाला जातिका है। सन् ११६५ ई० मे भरतसिंह चौहानने इस पहाड़ीको नाथू-भीलसे छीन लिया था। तबसे यहाँ उसीके वंशधरोंका शासन है। अबतक ३० पीढ़ियाँ हो चुकी हैं। नर्मदाके दोनों तटोंके मन्दिरोंका

प्रबन्ध इसी राजवंशके हाथमें है और यही इन मन्दिरोंका पूजामें चढ़ा हुआ द्रव्य भी लेता है।

नर्मदातटसे राजमहलको जो रास्ता जाता है उसीके किनारे पहाड़के ढाल्पर श्रीओंकारेश्वरका मन्दिर है। ओंकारेश्वर और उनके आस-पासके मन्दिर पेशवाओंके बनवाये हुए हैं। मन्दिरका प्रधान द्वार उत्तरकी ओर है और दूसरा द्वार पश्चिमकी ओर। ओंकारेश्वर-जीकी मूर्ति अनगढ़ है, मूर्तिके आस पास एक निश्चित मर्यादातक हमेशा जल भरा रहता है। पुजारियोंका कथन है कि यह पाताल-गंगाका जल है। वे अनादिकालसे महादेवजीका अभिषेक करती रहती हैं। मन्दिरके दूसरे मञ्जिलमें गुम्बजके नीचे श्रीमहाकालेश्वर प्रतिष्ठित हैं। इस मन्दिरमें यह एक नयी बात है कि ओंकारेश्वर शिवलिङ्ग गुम्बजके नीचे नहीं हैं। इनके पास ही पार्वतीजीकी प्रतिमा है तथा एक दूसरी कोठरीमें शुकदेवजी और राजा मान्धाता-की मूर्तियाँ हैं। इस मन्दिरमें दो नन्दीश्वर हैं।

ओंकारेश्वरजीके पास अहर्निश घीका दीपक जलता रहता है। इनकी दिनमें तीन बार पूजा होती है और नियमित रीतिसे नित्य शृंगार कराया जाता है। मन्दिरके नीचे नर्मदाके तटपर कोटितीर्थ नामका पक्का घाट है। यहाँ यात्री स्नानादि तीर्थविधि करते हैं। ओंकारेश्वरके आस-पास अविमुक्तेश्वर, ज्वालेश्वर, केदारेश्वर और गणपति आदिके मन्दिर हैं।

परिक्रमा—टापूके भीतर ही ओंकारेश्वरकी छोटी और बड़ी दो परिक्रमाएँ हैं। छोटी परिक्रमामें पश्चिमको थोड़ी दूरपर खेड़ापति

हनुमान् तथा केदारेश्वरके दर्शन होते हैं। फिर कावेरीका पश्चिमी सगम मिलता है। इनके पास ही ऋणमुक्तेश्वर महादेवका मन्दिर है। वहासे फिर पूर्वकी ओर चलनेपर गौरी-सोमनाथका मन्दिर मिलता है। इसकी मूर्ति विशाल और मन्दिर पुराने ढगका है। इससे सौ गजकी दूरीपर एक २० फीट ऊँचा स्तम्भ है। छोटी परिक्रमावाले यहासे ओंकारेश्वरकी ओर चले जाते हैं। सोमनाथलिंगके विषयमें यहाँ यह कथा प्रसिद्ध है कि पहले यह शिवलिंग श्वेत था। इसमें देखनेवालेको अपने पूर्वजन्म और आगामी जन्मका चित्र दीख जाता था। एक बार इसकी सत्यताकी जाँचके लिये औरगजेबने इसमें अपना प्रतिबिम्ब देखा। उसे उसमें सूअरका रूप दिखायी दिया। इससे चिढ़कर उसने इस शिवलिंगको जलवा दिया। तबसे यह काला हो गया है।

बड़ी परिक्रमामें गौरी-सोमनाथसे पूर्वकी ओर थोड़ी दूरपर सिद्धेश्वरका मन्दिर है। यह यहाँके सब मन्दिरोंकी अपेक्षा प्राचीन और विशाल है। इसके खम्भोंमें देवताओंकी मूर्तियाँ हैं तथा फाटकपर भीमसेन और अर्जुनकी मनुष्याकार मूर्तियाँ हैं। मन्दिर कलापूर्ण है तथा हिन्दू शिल्पकलाका अच्छा नमूना है। लार्ड कर्जन अपने शासनकालमें इसे देखनेके लिये स्वय आया था। सिद्धेश्वरसे थोड़ी दूर कावेरीके दूसरे तटपर जैनियोंका प्रसिद्ध स्थान सिद्धवरकूट है। उसके पास ही श्रीविष्णुभगवान्‌के चौबीस अवतारोंके दर्शन हैं। इससे कुछ आगे नर्मदातटपर एक खड़ी पहाड़ी है। प्राचीन समयमें लोग मुक्ति पानेके लिये इस पहाड़ी-

पहले नर्मदाजीमें कूद पड़ते थे। अब सन् १८२४ ई० से यह प्रथा बन्द है। यह स्थान 'भैरवाल' कहलाता है। यहाँसे पश्चिम जाकर नर्मदाजीके किनारे किनारे आनेसे चक्रतीर्थ आ जाता है और यहाँ परिक्रमा पूरी हो जाती है।

ओंकारनाथके अन्य स्थान

अमलेश्वरज्योतिर्लिंग—नर्मदाके दक्षिणतटपर शिवपुरीके सामने ब्रह्मपुरी है। यह एक पहाड़ीके ऊपर है। इसके पश्चिमकी ओर दूसरी पहाड़ीपर विष्णुपुरी है। इन दोनों पहाड़ियोंके बीचमें जो धारा बहती है उसे कपिलधारा कहते हैं। यह एक गोमुखद्वारा नर्मदामें गिरती है। इसे कपिलासंगम कहते हैं। इस गोमुखसे कुछ ऊपर पहाड़ीके पास श्रीअमलेश्वर शिवलिङ्ग है। यह मन्दिर पत्थरके खम्भोंका बना हुआ है और बहुत सुन्दर है। यहाँ होल्कर सरकारकी ओरसे ब्राह्मण पार्थिवलिङ्गोंकी पूजा करते हैं। इस ज्योतिर्लिङ्गके विषयमें शिवपुराणमें ऐसी कथा है कि एक बार विन्ध्यपर्वत ओंकार यन्त्रमें पार्थिव शिवलिङ्ग बनाकर पूजन करने लगा। इससे प्रसन्न होकर कुछ समय बाद शिवजी प्रकट हुए। उन्होंने विन्ध्यसे यथेच्छ वर माँगनेको कहा। इसपर विन्ध्य तथा अन्य देवताओंने प्रार्थना की कि भगवन्! आप यहीं विराजनेकी कृपा कीजिये। तब यहाँ दो लिंग उत्पन्न हुए। ओंकारयन्त्रसे ओंकारेश्वर और पार्थिवलिङ्गसे अमलेश्वर। वे ही यहाँ स्थापित किये गये हैं।

ब्रह्मेश्वर महादेव—यह मन्दिर ब्रह्मपुरीमें है। इसीके कारण यह ब्रह्मपुरी कही जाती है।

विष्णुभगवान्‌का मन्दिर—यह विष्णुपुरीमें है। इसमें श्रीलक्ष्मीनारायणके दर्शन हैं।

मार्कण्डेय शिला—यह विष्णुपुरीके पश्चिमकी ओर नर्मदाजीमें एक चट्टान है। इसपर नर्मदाजीका जल बहता रहता है। यात्रीलोग यमके पाशसे मुक्त होनेकी कामनासे इसपर लोट लगाते हैं। इसके पास ही पहाड़ीपर मार्कण्डेय ऋषिका मन्दिर है।

कुबेरभण्डारी—ओंकारेश्वरसे डेढ़ मील पूर्व नर्मदाके दक्षिण-तटपर कावेरी नदीका सगम हुआ है। परन्तु यहा लोगोंकी ऐसी धारणा है कि उसका जल नर्मदाजीमें मिलता नहीं है। वह एक मील नीचे नर्मदाजीसे अलग होकर शिवपुरीके उत्तरकी ओर बहता हुआ ओंकारेश्वरकी परिक्रमा करके फिर उत्तरतटसे ही नर्मदामें मिलता है। लोग ऐसा भी कहते हैं कि यदि दक्षिणतटके कावेरी-सगमपर कोई पुरुष कावेरी कहकर नारियल छोड़ दे तो वह नर्मदामें न जाकर उत्तरकी धारामें ही जाता है। दक्षिणतटके कावेरीसगमपर एक शिवमन्दिर है। यह कुबेरभण्डारीका स्थान कहलाता है। कहते हैं, यहाँ कुबेरने तपस्या की थी। कुबेरजी भगवान् शकरके प्रधान गणोंमें हैं इसलिये यह स्थान बहुत पवित्र माना जाता है।

सप्तमात्रा—कुबेरभण्डारीसे ढाई मील पूर्व नर्मदाजीके तटपर सप्तमात्रा तीर्थ है। यहाँ वाराही, चामुण्डा, ब्रह्माणी, वैष्णवी, इन्द्राणी, कौमारी और माहेश्वरी इन सात मातृकाओंके मन्दिर हैं। यहाँका दृश्य बड़ा सुदर है।

धायडीकुण्ड—मारटक्का स्टेशनसे करीब बीस मीलकी दूरीपर यह एक प्रसिद्ध जलप्रपात है। यह सतमात्राओंसे १५ मील है। सड़क कच्ची है, जंगली रास्ता है। यहाँ नर्मदाजीका जल बड़ी चट्टानोंको फोड़कर प्रायः ५० फीटकी ऊँचाईसे गिरता है। गिरनेके स्थानमें एक कुण्ड सा बन गया है। नर्मदाके वेगके साथ जो पत्थरके खण्ड गिरते हैं वे इस कुण्डमें रगड़ लग-लगकर गोल हो जाते हैं। उन्हें गोताखोर निकालते हैं, बहुत-से श्रद्धालु यात्री यहाँसे ये शिवलिंग ले जाते हैं। ये ही नर्मदेश्वर शिव कहलाते हैं। यह स्थान अवश्य देखना चाहिये। यहाँका दृश्य बड़ा ही मनोरम है।

ओंकारेश्वरकी शास्त्रोंमें बड़ी महिमा है। यहाँ राजा मान्धाताके सिवा कुबेरजी, मार्कण्डेयजी और शुकदेवजीने भी तपस्या की है। इसलिये यह स्थान बड़ा पवित्र हो गया है। नर्मदाजी भी भारतकी प्रधान नदियोंमें हैं। मध्य भारतमें इनका महत्त्व गंगाजीके ही समान है। ये इस पुरीकी चारों ओरसे परिक्रमा करती हैं। इससे पवित्रताके साथ इसकी शोभा भी बहुत अधिक बढ़ गयी है। बहुत से यात्री तो यहाँके मनोरम दृश्यको देखनेकी लालसासे ही आते हैं। यहाँका जलवायु भी बड़ा ही स्वास्थ्यप्रद है। भोजनादिकी आवश्यक सामग्री यहाँ सब मिल जाती है। यहाँ कई धर्मशालाएँ, पाठशालाएँ और एक अन्नक्षेत्र भी है।

नाथद्वारा

नाथद्वारेमें वल्लभसम्प्रदायकी प्रधान गद्दी है। यह स्थान उदयपुर स्टेटके अन्तर्गत है। ॐकारेश्वरसे यहा आनेके लिये मोरटक्का स्टेशनसे चित्तौड और चित्तौडसे मावली आना पड़ता है जो क्रमश २४० और ४५ मीलकी दूरीपर हैं। पहले मावलीसे ही नाथद्वारा आना होता था किन्तु अब नाथद्वारेका भी स्टेशन बन गया है। बहुत-से यात्री बीचमें चित्तौड़गढ़ देखनेके लिये भी उतरते हैं। यह मध्यकालीन आर्य वीरोंका वीरताके स्मृतिचिह्नोंसे परिपूर्ण है। मुगलसाम्राज्यके पूर्ण अभ्युदयके समय भी केवल चित्तौड़हीने अपनी स्वतन्त्रता और शुद्धताको अक्षुण्ण रखा था। इसके सिवा राजपूत नृपतिगणको अपनी स्वतन्त्रता खोनी पड़ी थी—

यही नहीं, उनमेंसे बहुतोंको अपनी कन्याएँ भी मुगलसम्राटोंको देनी पड़ी था। किन्तु चित्तोड़ने सर्वस्व खोकर भी मुगलोंके सामने शिर नहीं झुकाया। उनके घर लुटे गये, नगर और गाँवोंमें आग लगायी गयी, एक-एक वीर केसरिया वस्त्र धारण कर युद्धक्षेत्रमें बलिदान हो गया और उनके पीछे नगरकी सारी राजपूतरमणियोंने एक साथ ही अपनेको अग्निदेवकी भेंट चढ़ा दिया, किन्तु किसीने भी मुगलोंकी सरदारी स्वीकार नहीं की। जब युद्धके अन्तमें मुगलोंने किलेके भीतर प्रवेश किया तो उजड़े हुए मकान और वीर ललनाओंके दग्ध और अर्धदग्ध कंकाल ही हाथ लगे। ऐसा एक बार नहीं, अनेक बार हुआ। ये सब घटनाएँ इस वार भूमिमें आकर मानसनेत्रोंके सामने नाचने लगती हैं। चित्तौड़के किलेके भीतर भगवती कालिका, अन्नपूर्णा और तुलजा भवानीके प्राचीन मन्दिर हैं। चित्तौड़के रणबाँकुरे वीर इन्हींके उपासक थे।

अब हम नाथद्वारेकी ओर आते हैं। यहाँ आकर यात्री धर्मशालाओंमें ठहर जाते हैं और बनासनदीमें स्नान कर श्रीनाथजीके दर्शनार्थ जाते हैं। श्रीनाथजीके मन्दिरमें शिखरादि नहीं है, एक विशाल महल जैसा है, केवल ध्वजासे ही मन्दिर जान पड़ता है। इस भगवत्प्रासाद और इसमें रहनेवाले भगवान्के दर्शन करके यात्री आनन्दविभोर हो जाते हैं। अन्य समस्त वैष्णवसम्प्रदायोंकी अपेक्षा वल्लभकुलमें सेवा भक्तिकी प्रधानता है और वह भी इस स्थानमें पराकाष्ठाको पहुँची हुई है। भगवान् श्रीनाथजीकी जैसी सेवा होती है वैसी सम्भवतः कहीं नहीं होती। इस सम्प्रदायमें बालभावकी

उपासना है। इनके भगवान्की आयु ७-८ वर्षसे अधिक नहीं है। उनकी जैसी सेवा होती है वह सभी भावुकोंके लिये अनुकरणीय है। भगवान्के भोगमें ही सैकड़ों रुपये नित्यप्रति लगते हैं। यहाँका राग-भोग सर्वत्र प्रसिद्ध है। यहाँ चक्कियोंमे केशर पीसी जाती है और घृतके कूप भरे रहते हैं। भगवान्को लाखों रुपयेके मणिमय आभूषण पहनाये गये हैं। दिनमें कई बार शृंगार होता है और वह भी प्रत्येक दिनका नये-नये प्रकारसे। तरह-तरहके सुवर्णमय खिलौनोंसे भगवान्को खेलाया जाता है। प्रभुकी दिव्य छविके दर्शन करके यात्री मन्त्रमुग्ध रह जाते हैं।

फिर आरतीके दर्शन और भगवच्चरणारविन्दोंमें अपनी श्रद्धाञ्जलि समर्पित कर वे भगवान्के अन्नपूर्ण भण्डारके दर्शन करते हैं। यहाँ तरह-तरहके व्यञ्जन तैयार हुआ करते हैं। कोई-कोई यात्री उसमें अपनी सेवा प्रदान कर कर्मचारियोंका हाथ बँटाते हैं। यहाँके कर्मचारियोंको वेतनरूपसे प्रसादकी कुछ निश्चित पत्तलें दी जाती हैं। वे लोग अपनी आवश्यकतासे अधिक पत्तलोंको दूसरे लोगोंको बेच देते हैं। इस प्रकार जो लोग चाहें उनको बहुत थोड़े खर्चसे ही भगवान्का दिव्य प्रसाद मिल सकता है। इससे यहाँ अधिक दिन रहनेवालोंको भी स्वयं भोजनादि बनानेका झंझट नहीं करना पड़ता।

पर। नहीं, उनमेंसे बहुतोंको अपनी कन्याएँ भी मुगलसम्राटोंको देनी पड़ी थीं। किन्तु चित्तौड़ने सर्वस्व खोकर भी मुगलोंके सामने सिर नहीं झुकाया। उसके घर लूटे गये, नगर और गाँवोंमें आग लगायी गयी, एक-एक वीर केसरिया वस्त्र धारण कर युद्धक्षेत्रमें बलिदान हो गया और उनके पीछे नगरकी सारी राजपूतरमणियोंने एक साथ ही अपनेको अग्निदेवकी भेंट चढ़ा दिया, किन्तु किसीने भी मुगलोंकी सरदारी स्वीकार नहीं की। जब युद्धके अंतमें मुगलोंने किलेके भीतर प्रवेश किया तो उजड़े हुए मकान और वीर ललनाओंके दग्ध और अर्धदग्ध कंकाल ही हाथ लगे। ऐसा एक बार नहीं, अनेक बार हुआ। ये सब घटनाएँ इस वीर भूमिमें आकर मानसनेत्रोंके सामने नाचने लगती हैं। चित्तौड़के किलेके भीतर भगवती कालिका, अन्नपूर्णा और तुल्जा भवानीके प्राचीन मन्दिर हैं। चित्तौड़के रणबाँकुरे वीर इन्हींके उपासक थे।

अब हम नाथद्वारेकी ओर आते हैं। यहाँ आकर यात्री धर्मशालाओंमें ठहर जाते हैं और बनासनदीमें स्नान कर श्रीनाथजीके दर्शनार्थ जाते हैं। श्रीनाथजीके मन्दिरमें शिखरादि नहीं है, एक विशाल महल-जैसा है, केवल ध्वजासे ही मन्दिर जान पड़ता है। इस भगवत्प्रासाद और इसमें रहनेवाले भगवान्के दर्शन करके यात्री आनन्दविभोर हो जाते हैं। अन्य समस्त वैष्णवसम्प्रदायोंकी अपेक्षा वल्लभकुलमें सेवा भक्तिकी प्रधानता है और वह भी इस स्थानमें पराकाष्ठाको पहुँची हुई है। भगवान् श्रीनाथजीकी जैसी सेवा होती है वैसी सम्भवतः कहीं नहीं होती। इस सम्प्रदायमें वात्सल्यकी

उपासना है। इनके भगवान्‌की आयु ७-८ वर्षसे अधिक नहीं है। उनकी जैसी सेवा होती है वह सभी भावुकोंके लिये अनुकरणीय है। भगवान्‌के भोगमें ही सैकड़ों रुपये नित्यप्रति लगते हैं। यहाँका राग-भोग सर्वत्र प्रसिद्ध है। यहाँ चक्कियों-से केशर पीसी जाती है और घृतके कूप भरे रहते हैं। भगवान्‌को लाखों रुपयेके मणिमय आभूषण पहनाये गये हैं। दिनमें कई बार शृंगार होता है और वह भी प्रत्येक दिनका नये-नये प्रकारसे। तरह-तरहके सुवर्णमय खिलौनोंसे भगवान्‌को खेलाया जाता है। प्रभुकी दिव्य छविके दर्शन करके यात्री मन्त्रमुग्ध रह जाते हैं।

फिर आरतीके दर्शन और भगवच्चरणारविन्दोंमें अपनी श्रद्धाञ्जलि समर्पित कर वे भगवान्‌के अन्नपूर्ण भण्डारके दर्शन करते हैं। यहाँ तरह-तरहके व्यञ्जन तैयार हुआ करते हैं। कोई-कोई यात्री उसमें अपनी सेवा प्रदान कर कर्मचारियोंका हाथ बँटाते हैं। यहाँके कर्मचारियोंको वेतनस्वरूपसे प्रसादकी कुछ निश्चित पत्तलें दी जाती हैं। वे लोग अपनी आवश्यकतासे अधिक पत्तलोंको दूसरे लोगोंको बेच देते हैं। इस प्रकार जो लोग चाहें उनको बहुत थोड़े खर्चसे ही भगवान्‌का दिव्य प्रसाद मिल सकता है। इससे यहाँ अधिक दिन रहनेवालोंको भी स्वयं भोजनादि बनानेका झंझट नहीं करना पड़ता।

यहाँ तहाँ, उनमेंसे बहुतोंको अपनी कन्याएँ भी मुगलसम्राटोंको देनी पड़ी थीं। किन्तु चित्तौड़ने सर्वस्व खोकर भी मुगलोंके सामने सिर नहीं झुकाया। उनके घर लूटे गये, नगर और गाँवोंमें आग लगायी गयी, एक-एक वीर केसरिया वस्त्र धारण कर युद्धक्षेत्रमें बलिदान हो गया और उनके पीछे नगरकी सारी राजपूतरमणियोंने एक साथ ही अपनेको अग्निदेवको भेंट चढ़ा दिया, किन्तु किसीने भी मुगलोंकी परदारी स्वीकार नहीं की। जब युद्धके अन्तमें मुगलोंने किलेके भीतर प्रवेश किया तो उजड़े हुए मकान और वीर ललनाओंके दग्ध और अर्धदग्ध कङ्काल ही हाथ लगे। ऐसा एक बार नहीं, अनेक बार हुआ। ये सब घटनाएँ इस वीर भूमिमें आकर मानसनेत्रोंके सामने नाचने लगती हैं। चित्तौड़के किलेके भीतर भगवती कालिका, अन्नपूर्णा और तुलजा भवानीके प्राचीन मन्दिर हैं। चित्तौड़के रणबाँकुरे वीर इन्हींके उपासक थे।

अब हम नाथद्वारेकी ओर आते हैं। यहाँ आकर यात्री धर्मशालाओंमें ठहर जाते हैं और बनासनदामें स्नान कर श्रीनाथजीके दर्शनार्थ जाते हैं। श्रीनाथजीके मन्दिरमें शिखरादि नहीं है, एक विशाल महल जैसा है, केवल ध्वजासे ही मन्दिर जान पड़ता है। इस भगवत्प्रासाद और इसमें रहनेवाले भगवान्‌के दर्शन करके यात्री आनन्दविभोर हो जाते हैं। अन्य समस्त वैष्णवसम्प्रदायोंकी अपेक्षा वल्लभकुलमें सेवा भक्तिकी प्रधानता है और वह भी इस स्थानमें पराकाष्ठाको पहुँची हुई है। भगवान् श्रीनाथजीकी जैसी सेवा होती है वैसी सम्भवतः कहीं नहीं होती। इस सम्प्रदायमें बालभावकी

उपासना है। इनके भगवान्की आयु ७८ वर्षसे अधिक नहीं है। उनकी जैसी सेवा होती है वह सभी भावुकोंके लिये अनुकरणीय है। भगवान्के भोगमें ही सैकड़ों रुपये नित्यप्रति लगते हैं। यहाँका राग-भोग सर्वत्र प्रसिद्ध है। यहाँ चक्कियोंसे केशर पीसी जाती है और घृतके कूप भरे रहते हैं। भगवान्को लाखों रुपयेके मणिमय आभूषण पहनाये गये हैं। दिनमें कई बार शृंगार होता है और वह भी प्रत्येक दिनका नये-नये प्रकारसे। तरह-तरहके सुवर्णमय खिलौनोंसे भगवान्को खेलाया जाता है। प्रभुकी दिव्य छविके दर्शन करके यात्री मन्त्रमुग्ध रह जाते हैं।

फिर आरतीके दर्शन और भगवच्चरणारविन्दोंमें अपनी श्रद्धाञ्जलि समर्पित कर वे भगवान्के अन्नपूर्ण भण्डारके दर्शन करते हैं। यहाँ तरह-तरहके व्यञ्जन तैयार हुआ करते हैं। कोई-कोई यात्री उसमें अपनी सेवा प्रदान कर कर्मचारियोंका हाथ बँटाते हैं। यहाँके कर्मचारियोंको वेतनरूपसे प्रसादकी कुछ निश्चित पत्तलें दी जाती हैं। वे लोग अपनी आवश्यकतासे अधिक पत्तलोंको दूसरे लोगोंको बेच देते हैं। इस प्रकार जो लोग चाहें उनको बहुत थोड़े खर्चसे ही भगवान्का दिव्य प्रसाद मिल सकता है। इससे यहाँ अधिक दिन रहनेवालोंको भी स्वयं भोजनादि बनानेका झंझट नहीं करना पड़ता।

कहते हैं, श्रीवल्लभाचार्यजी भगवान्‌के आदेशसे ही उन्हें गोकुलसे मेवाड़में लाये थे। जिस समय वे उन्हें रथमें विठाकर ला रहे थे इस स्थानपर आकर उस रथके पहिये रेतीमें धुस गये। फिर बहुत प्रयत्न करनेपर भी वे टस से-मस न हुए। इससे उन्होंने निश्चय किया कि भगवान्‌की इच्छा यहीं रहनेकी है। इस घटनाकी सूचना तत्कालीन महाराणा राजसिंहको दी गयी। उन्होंने स्वय आकर इसकी जाँच की, और इसे ठीक पाकर उसके आसपासकी भूमि और एक गाँव श्रीनाथजीकी सेवामें भेंट कर दिया। उसीसे अब बढ़ते-बढ़ते श्रीनाथजीकी आमदनी लाखों रुपया वार्षिक हो गयी है। अब इस स्थानकी महिमा दिन दिन बढ़ रही है। बहुत लोग तो श्रीनाथजीके दर्शन करनेसे ही श्रीद्वारकाधीशके दर्शनोंका फल मान लेते हैं।

श्रीनाथजीके दर्शन कर यात्री आगेकी यात्रा आरम्भ करते हैं। नाथद्वारेमें सब आवश्यक सामान मिल जाता है। यहाँकी चित्रकला प्रसिद्ध है। बहुत से हाथके बने हुए चित्र बाजारमें मिलते हैं। नाथद्वारेमें कोई भी किसी प्रकारकी जीवहिंसा नहीं कर सकता। नाथद्वारेके पास ही काकरौली है। वहाँ भी वल्लभसम्प्रदायकी एक प्रधान गद्दी है। नाथद्वारा आनेवालोंको इस स्थानके दर्शन भी अवश्य करने चाहिये।

पुष्कर

नाथद्वारेसे पुष्कर आनेवाले यात्रियोंको चित्तोड़ होकर अजमेर जंक्शनपर उतरना होता है। मावलीसे अजमेर १६१ मील है। अजमेर अच्छा बड़ा शहर है। स्टेशनके पास ही जैनधर्मशाला है। उसमें यात्री ठहर जाते हैं। यहासे पुष्कर ७ मील है। मोटर या ताँगेका मार्ग है। रास्ता पहाड़ी है। सड़क उतरती-चढ़ती कुछ फेरसे गयी है। रास्तेमें सड़कके किनारे अनन्तसागर नामकी एक झील पड़ती है, जो प्राय डेढ मील लम्बी चौड़ी है। अब यह क्रमश घटती जाती है। इसमें नौकाद्वारा भ्रमण करनेसे

बड़ा आनन्द आता है। इसके सिवा और भी कई जगह धर्मशाला, पाठशाला तथा अन्नक्षेत्र आदि हैं जो पर्वके समय खोल दिये जाते हैं। पुष्करसे एक मील इस तरफ बायें हाथको एक बड़ा सुन्दर बगीचा पड़ता है। इसके बीचमें एक मन्दिर है। यहाँ अतिथियोंको भोजन भी दिया जाता है। बहुत-से साधु महात्मा इस बगीचेमें रहते हैं।

पुष्करका दृश्य बड़ा ही सुन्दर है। यह चारों ओर पर्वतोंसे घिरा हुआ है। ऐसा जान पड़ता है मानो सब ओरसे आये हुए पर्वत पुष्करराजके दर्शनार्थ ठहर गये हैं। यहाँ आकर यात्री धर्मशालामें ठहर जाते हैं। पुष्करके पण्डे तो उनके साथ अजमेरसे ही हो जाते हैं। वे सबसे पहले ब्रह्मघाटपर ले जाते हैं। यहाँ स्नानादि तीर्थविधि की जाती है। तीर्थोंमें आकर यात्रियोंको वहाँकी तीर्थविधि अवश्य करनी चाहिये। इसके बिना यात्रा सफल नहीं होती और न तीर्थदर्शनका आनन्द ही आता है। पुष्करजीमें जलजन्तुओंकी अधिकता है, क्योंकि कोई भी पुरुष यहाँ जीवहत्या नहीं कर सकता। इसलिये स्नान करते समय नाके आदिसे रक्षा करनेके लिये तीर्थगुरुका सेवक जलमें लाठी घुमाता रहता है। इस प्रकार स्नान, पिण्डदान और तर्पणादिसे निवृत्त होकर यात्री श्रीब्रह्माजीके दर्शनार्थ जाते हैं।

भारतवर्षमें ब्रह्माजीका मन्दिर केवल पुष्करजीमें ही है। कहते हैं, शास्त्रोंमें भी ब्रह्माजीकी उपासनाका केवल पुष्करक्षेत्रमें ही विधान है। मन्दिर बहुत सुन्दर है। यह एक ऊँचे स्थानपर है। बीसियों सीढ़ियाँ चढ़नेपर मुख्य द्वार आता है। उसके भीतर सहन

है । अन्तर्वेदीके आगे संगमरमरका जगमोहन है । ब्रह्माजीकी मूर्ति भी संगमरमरकी ही है । वे श्वेत वस्त्र धारण किये हैं, चारों हाथोंमें चार वेद हैं तथा उनके इधर-उधर सावित्री और गायत्रीकी मूर्तियाँ हैं । इस मूर्तिका दर्शन करके बड़ा आनन्द होता है । मन्दिरकी स्वच्छता दर्शनीय है ।

इसके सिवा श्रीवाराहमन्दिर, रंगजीका मन्दिर एवं और भी कई देवस्थान बहुत प्राचीन तथा दर्शनीय हैं ।

अन्य स्थान

सावित्री देवी—यहाँसे ३६० सीढ़ियाँ चढ़नेपर सावित्रीदेवीके दर्शन होते हैं । इस स्थानपर एक कुण्ड भी है । उसका जल अत्यन्त स्वच्छ है । कोई-कोई यात्री यहाँ एक रात ठहर जाते हैं, किन्तु अधिकांश तो उसी दिन लौट आते हैं ।

बूढ़ा पुष्कर—यह ताल अजमेर और पुष्करके बीचमें एक दूसरे रास्तेपर है । यहाँका दृश्य बड़ा सुन्दर है । यह स्थान एकान्तसेवनके लिये अच्छा है ।

पुष्करके घाट—पुष्करताल भारतके पवित्रतम तीर्थोंमें है । इसपर स्नान करनेके लिये एकादशीसे पूर्णिमातक बहुत लोग आते हैं । कार्तिकी पूर्णिमापर तो लाखोंकी भीड़ हो जाती है । वृक्षोंके कारण इसका दृश्य भी बड़ा मनोहर है । इसके चारों ओर बहुत-से पक्के घाट बने हुए हैं । उनमें ब्रह्मघाट, रामघाट, बदरीनारायणघाट, कोटितीर्थघाट और गोघाट प्रधान हैं । इनपर कई देवालय भी हैं । यात्री अपनी श्रद्धाके अनुसार उनके दर्शनादि करते हैं ।

परिक्रमा

पुष्करजीकी तीन परिक्रमाएँ हैं, जो क्रमशः तीन, पचीस और पचास मीलकी हैं। अधिकांश यात्री छोटी परिक्रमा ही करते हैं। बड़ी परिक्रमामें ब्रह्मपुष्कर, रुद्रपुष्कर आदि बहुत से तीर्थ, कुण्ड एवं देवालय पड़ते हैं। इनमें चक्रकुण्ड, नागकुण्ड, गंगाकुण्ड और गयाकुण्ड आदि प्रधान हैं। अजमेरवाली सड़कसे कुछ हटकर एक गोमुखकुण्ड है। उसके आस पास छावनी पड़ी हुई है। यहाँ जलकी धारा गोमुखमेंसे निकलकर एक कुण्डमें गिरती है। यहाँ एक पुजारी रहता है। इस गोमुखकी पूजा की जाती है। यह जल बहुत पवित्र और स्वास्थ्यप्रद है। अजमेरके धनीलोग कॉवरोंद्वारा मँगवाकर इसे सेवन करते हैं।

माहात्म्य

शास्त्रोंमें पुष्करजीकी बड़ी महिमा है। यहाँ प्रातः-सायं बहुत से तीर्थ स्नान करने आते हैं। सारे तीर्थ करनेपर भी बिना पुष्कर स्नान किये तीर्थयात्रा पूर्ण नहीं होती। इस पवित्र क्षेत्रमें श्राद्धादि करनेसे कई पीढ़ियोंका उद्धार हो जाता है। इस स्थानपर सहस्रों वर्षतक ब्रह्माजीने तप किया है तथा सहस्रों ऋषि मुनियोंने भी अपने तपोमय जीवनसे इसे पावन किया है। जो पुरुष इस तीर्थराजका सेवन करते हैं वे धन्य हैं।

यहाँका जलवायु भी बहुत अच्छा है। सब प्रकारकी आवश्यक सामग्री मिल जाती है, तथा पाठशाला, औषधालय, वाचनालय एवं अन्नक्षेत्रादि भी हैं।

मथुरा

मथुरा भारतके प्रधानतम तीर्थोंमें है। यह सात मोक्षदा पुरियोंमें एक है। इन पुरियोंके विषयमें यह श्लोक प्रसिद्ध है—

अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिका॥

अर्थात् अयोध्या, मथुरा, मायावती (हरिद्वार), काशी, काञ्ची, अवन्तिका (उज्जैन) और द्वारका—ये सात पुरियाँ मोक्ष देनेवाली हैं। अतः यहाँ भी बहुत से लोग प्राणत्यागके लिये रहते हैं। इसी पुरीमें भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रने जन्म लिया था। इसलिये श्रीकृष्णभक्तोंके लिये तो यह अत्यन्त प्रिय और पूजनीया है।

इसका प्राचीन नाम मधुपुरी या मधुरा है। यहाँ मधु नामक दैत्यका राजधानी था। उस दैत्यको श्रीशत्रुघ्नजीने मारकर यहाँ पर नगर बसाया और इसका शासन अपने पुत्र सुबाहुको सौंपा। इस प्रकार मथुराकी नींव पड़ी और सुबाहु उसके सबसे पहले अधिपति हुए। कालान्तरमें इसका शासन सूर्यवंशसे चन्द्रवंशी राजाओंके हाथमें आ गया और यहाँ यदुवंशान्तर्गत भोजवंशियोंका आधिपत्य रहा। भोजवंशमें ही राजा उग्रसेन हुए थे। उनका पुत्र कंस था। उसे मारकर भगवान् कृष्णने पुनः उग्रसेनको ही राजा बनाया। पीछे जब प्रभासक्षेत्रमें सम्पूर्ण यदुवंशियोंका नाश हो गया तब महाराज युधिष्ठिरने यदुवंशके एकमात्र अवशिष्ट पुरुष वज्रको मथुराके राजसिंहासनपर अभिषिक्त किया, जो भगवान् कृष्णका प्रपौत्र था।

तबसे मथुरा कई बार उजड़ती-बसती रही है। सन् १०१७ में इसे मुहम्मद गजनवीने लूटा। उसके बाद सन् १५०० ई० में सिकन्दर लोदीने इसका सर्वनाश किया। सन् १६६९ ई० में औरङ्गजेबने इसपर धावा किया और सन् १७५७ ई० में अहमदशाह अब्दालीने इसमें हत्याकाण्ड मचाकर लूट की। इस प्रकार कई बार अत्याचारियोंसे पीड़ित होनेपर भी इस पुरीने अपना गौरव पूर्ववत् सुस्थिर रखा है। यह आज भी एक सघन, सुसज्जित और सुसम्पन्न नगर है। इसके बाजारोंमें प्रायः बारहों महीने देश देशान्तरके यात्रियोंकी चहल-पहल रहती है। यह यमुनाके दाहिने तटपर बसी हुई है। दूसरे तटसे देखनेपर इस नगरके

पंक्तिबद्ध घाटों और ऊँचाईमें एक-दूसरेसे होड़ बदते हुए मन्दिरोंका दृश्य देखने ही योग्य होता है। इसके बाजारमें पत्थरका पटिया बिछी हुई हैं, इमारतें ऊँची-ऊँची और कलापूर्ण हैं तथा दूकानें तरह-तरहकी वस्तुओंसे सुसज्जित हैं। नगरमें भीतर जानेके लिये चार दरवाजे हैं—होलीदरवाजा, वृन्दावनदरवाजा, डीगदरवाजा और भरतपुरदरवाजा, तथा इसकी चार दिशाओंमें चार महादेव हैं—उत्तरमें गोकर्णेश्वर, पूर्वमें पिप्पलेश्वर, दक्षिणमें रंगेश्वर और पश्चिममें भूतेश्वर।

पुष्करसे मथुरा जानेवालोंको अजमेरसे जाना होता है। यहाँसे मथुराको सीधी गाड़ी जाती है। अजमेरसे मथुरा २७३ मील है। मथुरामें बहुत-सी धर्मशालाएँ हैं, उनमें प्रधान प्रधान ये हैं—(१) राजा साहब तिरवेईकी धर्मशाला—यह बङ्गालीघाटपर है, इसमें प्राय दो सहस्र यात्री ठहर सकते हैं। (२) राजा साहब अवागढ़की धर्मशाला—नगरके बीचमें है, इसमें प्राय तीन सहस्र यात्री ठहर सकते हैं। (३) हरसुखराम दुलीचन्दकी धर्मशाला—स्वामीघाटपर है। (४) हरनन्दराय फूलचन्द हाथरसवालोंकी धर्मशाला, (५) माहेश्वरियोंकी धर्मशाला, (६) कलकत्तावालोंकी धर्मशाला, (७) सिन्धी धर्मशाला, (८) बीकानेरियोंकी धर्मशाला, (९) भाटियोंकी धर्मशाला, (१०) पञ्जाबी धर्मशाला, (११) ब्राह्मणोंकी धर्मशाला। इनमें जिन धर्मशालाओंका किसी जाति या देशविशेषसे सम्बन्ध है उनमें उसी जाति अथवा देशके लोगोंको

धर्मशालामें ठहरनेके अनन्तर यात्रियोंका पहला काम यमुना-स्नान होता है। यहाँके तीर्थपुरोहित चौबे कहलाते हैं। उनको अपने साथ रखना न रखना यात्रियोंकी इच्छाके ऊपर निर्भर है। यमुनातीरपर बहुत से घाट हैं। उनमें सबसे प्रधान विश्रान्तघाट है। इसके सिवा अन्य प्रधान घाटोंकी नामावली इस प्रकार है—बङ्गाली घाट, ध्रुवघाट, कृष्णगङ्गाघाट, सोमतीर्थघाट और असकुण्डाघाट। इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

विश्रान्तघाट—इसे विश्रामघाट भी कहते हैं। भगवान् कृष्णने कंसको मारकर इस स्थानपर विश्राम किया था। इसीसे इसका यह नाम पड़ा है। यह मथुराकी प्रधान सड़कके पास है। सड़कसे जल की धारातक पत्थरकी पटियोंका फर्श और सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। इस घाटपर यमद्वितीया अर्थात् कार्तिक शु० २ को बहुत बड़ा मेला होता है, जिसमें लाखों यात्रियोंकी भीड़ होती है। यमुनातटपर सबसे अधिक माहात्म्य इसी घाटपर स्नान करनेका है। यहाँ सायंकालमें नित्यप्रति यमुनाजीकी आरती होती है। वह दृश्य देखने-योग्य होता है। यमुनाजीकी ऐसी आरती सम्भवतः अन्यत्र नहीं होती।

बङ्गालीघाट—यह घाट बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवेकी छोटी लाइनके पुलके पास है। इसे गोसेन नामक एक बङ्गाली सज्जनने बनवाया था। इसीके पास राजा साहब लिलोईकी धर्मशाला है।

ध्रुवघाट—यह घाट सन् १८६८ में बना है। कहते हैं, इसी स्थानपर ध्रुवजीने तप किया था। घाटके ऊपर टीलेपर एक

छोटा सा मंदिर है। उसमें ध्रुवजाकी मूर्ति है। यहाँ पिण्डदान भी किया जाता है।

कृष्णगङ्गाघाट—यह घाट पक्का बना हुआ है। इसके ऊपर कई दर्शनीय मंदिर हैं।

सोमतीर्थघाट—इसे वसुदेवघाट भी कहते हैं।

असीकुण्डाघाट—यह पत्थरका पक्का घाट है। इसे वाराहक्षेत्र भी कहते हैं। यहाँ एक मन्दिरम वाराहजी और गणेशजीकी मूर्तियाँ हैं।

मथुराके मन्दिर

मथुराजीमें बहुत-से मंदिर हैं। जिस प्रकार काशीकी गली-गलीमें श्रीमहादेवजीके दर्शन होते हैं उसी प्रकार यहाँ गली-गलीमें श्रीकृष्णचन्द्र विराजमान हैं। यहा उनमेंसे कुछ प्रधान मन्दिरोंका विवरण दिया जाता है।

द्वारकाधीशजीका मन्दिर—मथुराके मन्दिरोंमें विशालता, सुंदरता, सम्पत्ति और सेवाकी दृष्टिसे इसका प्रथम स्थान है। यह मथुराकी प्रधान सड़कपर है। इसकी लम्बाई १८० फीट और चौड़ाई १२० फीट है। यह ग्वालियर राज्यके खजानची सेठ गोकुलदासजी पारिखका बनवाया हुआ है। इसकी लागत प्राय २ लाख रुपया है तथा इसकी सेवाके लिये २५ सहस्र वार्षिक आयकी स्टेट लगी हुई है। सेठजीने सन् १८१५ ई० में इसे तैयार कराकर इसकी स्टेटसहित अपने गुरु काँकरौलीके गोसाईंजीको भेंट कर दिया था। अत अब इसका सारा प्रबन्ध उन्हींके हाथमें

है । इसका सेवा वल्लभकुलकी रीतिसे होती है । निर्दिष्ट समयपर भगवान्‌के पट खुलते हैं, अन्य मन्दिरोंकी तरह यहाँ हर समय दर्शन नहीं हो सकते । यहाँ नित्य अनेकों प्रकारके व्यञ्जनोंका भोग लगाया जाता है, जो पीछे दूकानोंपर बिकता है । ये दूकानें मन्दिरके पास चारों ओर हैं । विशेष विशेष अवसरोंपर यहाँ वर्षमें कई उत्सव होते हैं । मन्दिर सर्वथा दर्शनीय है । इसमें पत्थरकी सुन्दर कारीगरी की गयी है ।

गोवर्धननाथजीका मन्दिर—यह द्वारकाधीशजीसे थोड़ी ही दूर है । विशालतामें इसका दूसरा नम्बर है । इसे सन् १८३० ई० में सेठ बालदार बापूनामक एक गुजराती सज्जनने बनवाया था । इसमें दो चौक हैं । इसकी पत्थरकी कारीगरी सराहनीय है । योरोपियन लोग उसका फोटो उतारकर ले जाते हैं । इसका प्रबन्ध भी द्वारकाधीशजीके अधिकारियोंके ही हाथमें है ।

केशवदेवजीका मन्दिर—यह मथुराजीका सबसे पुराना मन्दिर था । श्रीकेशवदेवजीकी स्थापना भगवान् कृष्णके प्रपौत्र वज्रने की थी । परन्तु औरङ्गजेबने उस मन्दिरको तोड़कर उसकी जगह एक विशाल मसजिद बनवा दी है । वही भगवान्‌का जन्मस्थान भी था । अब मसजिदके पीछे दूसरा मन्दिर बनाया गया है, इसे श्रीकेशवदेवजीका कटरा भी कहते हैं । इस मन्दिरके पीछे पोतराकुण्ड है । कहते हैं, उसमें भगवान्‌के जन्मके समयके बिछौने आदि धोये गये थे ।

गोविन्ददेवजीका मन्दिर—यह मन्दिर सेठ गुरसहायमलजी रामगढवालोंका बनवाया हुआ है। इसकी झाँकी बहुत सुन्दर है। मन्दिरमें सदावर्त और संस्कृतपाठशाला भी हैं।

बिहारीजीका मन्दिर—यह स्वामीघाटपर है। इसकी बनावट गोविन्ददेवजीके मन्दिरके ही समान है।

मदनमोहनजीका मन्दिर—यह भी स्वामीघाटपर ही है। इसका प्रबन्ध बहुत अच्छा है। यहाँ अभ्यागतोंको भोजन और चने बाँटे जाते हैं।

गतश्रमनारायण—यहाँ भगवान्‌ने श्रमनिवारण किया था। इसलिये इसका नाम गतश्रमनारायण पड़ा है। इसमें भगवान्‌के दोनों ओर श्रीराधिकाजी और कुब्जाजीकी मूर्तियाँ हैं। यह मन्दिर श्रीसम्प्रदायवालोंके अधिकारमें है।

वाराहजीका मन्दिर—यह द्वारकाधीशजीके पीछेकी ओर है। इसमें वाराहजी और गरुडजीकी मूर्तियाँ हैं।

किशोरीरमणजीका मन्दिर—यह किशोरीलालजी ढूसरका बनवाया हुआ है। इसका प्रबन्ध बहुत अच्छा है। इसीके अधीन एक कन्यापाठशाला और एक हाईस्कूल भी चल रहे हैं।

इनके सिवा गोपीनाथजी, मथुरानाथजी, दाऊजी, व्रजगोविन्द-जी और राधाकृष्णजी आदिके और भी बहुत-से दर्शनीय मन्दिर हैं।

परिक्रमा

मथुराकी परिक्रमा सालमें कई बार की जाती हैं। उनमें प्रत्येक एकादशी और अक्षयनवमीको सामूहिक परिक्रमा होती है।

उसमें यहाके सभी प्रसिद्ध स्थान आ जाते हैं। परिक्रमामें जो स्थान आते हैं उनकी नामावली इस प्रकार है—विश्रामघाट, गतश्रम नारायणजीका मन्दिर, कसखार, सतीका बुर्ज, चर्चिका देवी, योग घाट, पिप्पलेश्वर महादेव, योगमार्ग वटुक, प्रयागघाट, वेणीमाधवका मन्दिर, श्यामघाट, श्यामजीका मन्दिर, दाऊजी, मदनमोहनजी और गोकुलनाथजीके मन्दिर, कनखलतीर्थ, तिन्दुकतीर्थ[1], सूर्यघाट, ध्रुवक्षेत्र, सप्तर्षिटीला[2], कोटितीर्थ, रावणटीला बुद्धतीर्थ, बलिटीला[3], रङ्गभूमि, रङ्गेश्वर महादेव, सप्तसमुद्रकूप, शिवताल, बलभद्रकुण्ड, भूतेश्वर महादेव, पोतराकुण्ड, ज्ञानवापी, जन्मभूमि, केशवदेवमन्दिर, कृष्णकूप, कुब्जाकूप, महाविद्या, सरस्वतीनाला, सरस्वतीकुण्ड, सरस्वतीमन्दिर, चामुण्डा, उत्तर कोटितीर्थ, गणेशतीर्थ, गोकर्णेश्वर महादेव, गौतम ऋषिकी समाधि, सेनापतिका घाट, सरस्वतीसङ्गम, दशाश्वमेधघाट, अम्बरीषका टीला, चक्रतीर्थ, कृष्णगङ्गा, ब्रह्मघाट, वैकुण्ठघाट, धारापतन, वसुदेवघाट, असिकुण्डा, वाराहक्षेत्र, द्वारकाधीशका मन्दिर, मणिकर्णिकाघाट, महाप्रभुजीकी बैठक और विश्रामघाट।

यह मथुराकी परिक्रमाका विवरण है। इसके सिवा चौरासी कोस व्रजकी परिक्रमा करनेका भी नियम है। यह परिक्रमा सामूहिकरूपसे तीन बार होती है। (१) मथुराके चौबोंकी परिक्रमा जो भाद्रपद कृ० ११ को आरम्भ होकर सोलह दिनमें समाप्त हो जाती है। (२) भाद्रपद कृ० १२ को आरम्भ होकर

---

१ अब यह तीर्थ लुप्त होता जाता है।

२ यहाँ सप्तर्षियोंके दर्शन हैं और यज्ञभस्म भी मिलता है।

३ यहाँ राजा बलि और वामन भगवान्के दर्शन हैं।

सोलह दिनमें समाप्त होती है और (३) गोसाइयोंकी परिक्रमा जो भाद्र० शु० ११ को आरम्भ होकर डेढ़ मासमें समाप्त होती है। इस परिक्रमामें गोसाईंजी स्वय साथ रहते हैं तथा नाटकमण्डली भी रहती है। परिक्रमाके जिस स्थानपर भगवान्ने जो लीला की है वहाँ वही लीला नाटकद्वारा प्रदर्शित की जाती है। तथा कथा और उपदेश आदि भी होते जाते हैं। इस परिक्रमामें विशेष आनन्द रहता है। व्रजकी परिक्रमामें १२ वन[1], ५ सरोवर[2], ८४ कुण्ड, १० श्रीमहादेवस्थान, ९ श्रीदेवीस्थान, ४ नदी, २६ उपवन[3], १२ कूप, २ ताल, ७ बल्देवजीके स्थान, २ राधाजीके स्थान और ५ पर्वत[4] आ जाते हैं। एक यात्रा फाल्गुनमें भी होता है। इसमें पहले विरक्त लोग ही जाते थे और अब गृहस्थ भी सम्मिलित होने लगे हैं। इसमें वर्षाका कष्ट नहीं होता।

मथुराके अन्य स्थान

मथुरा जिलेका स्थान और एक प्राचीन नगर है। इसलिये

---

१ महावन, तालवन, कुमुदवन, बहुलवन, कामवन, वृन्दावन, मधुवन, खदिरवन, भद्रवन, भाण्डीरवन, वेलवन और लोहवन।

२ मानसरोवर, पानसरोवर, कुसुमसरोवर, चन्द्रसरोवर और प्रेमसरोवर।

३ गोकुल, गोवर्धन, बरसाना, नन्दगाँव, सङ्केत, परमभद्र, आरींग, शेषशायी, माट, ऊँचागाम, खेलवन, श्रीकुण्ड, गन्धर्ववन, परसौली, बिल्छू, बच्छवन, आदिबद्री, करहला, आजनोखर, पिसायो, कोकिलावन, दधिवन, कोटवन, रावल, सुरभीर (सुरीर) और मुञ्जाटवी।

४ गोवर्धन, बरसाना, नन्दीश्वर, चरणपहाड़ी और दूसरी चरण पहाड़ी।

यहा मन्दिर, घाट और कुण्डोंके सिवा और भी कई उपयोगी संस्थाएँ हैं । उनका संक्षिप्त परिचय देना अनावश्यक न होगा ।

जामामसजिद—यह शहरके बीचों-बीचमें है । इसकी बुर्जी १४ फीट ऊँची हैं, जिसके नीचेके भागमें तरह-तरहकी दूकानें हैं। इसे अब्दुलनबीखानने मन्दिरोंको तोड़कर उनकी जगह बनवाया था।

म्यूजियम—इसमें ऐतिहासिक मूर्ति और वस्तुओंका संग्रह है । इतिहास और पुरातत्त्वप्रेमियोंके लिये यह बहुत उपयोगी है। इसमें दो सहस्र वर्ष पूर्वतकके शिलालेख, मूर्तियाँ, सिक्के और स्तूपादि मिलते हैं ।

शिवाश्रम—इसमें वेधशाला है, जिसमें मर्कटीयन्त्र, पलभायन्त्र आदि खगोलसम्बन्धी यन्त्रोंका संग्रह है ।

औरङ्गजेबकी मसजिद—इसे औरङ्गजेबने श्रीकेशवदेवके प्राचीन मन्दिरको तोड़कर बनवाया था । यही वास्तविक श्रीकृष्णजन्मस्थान है । यह मथुरामें सबसे बड़ी मसजिद है ।

शिक्षाविभाग—यहा शिक्षासम्बन्धी कई संस्थाएँ हैं । उनमें किशोरीरमण हाईस्कूल, चम्पा अग्रवाल कालिज, गवर्नमेण्ट हाई स्कूल, मिशन कालिज, माथुरचतुर्वेदविद्यालय और नारायणसंस्कृत विद्यालय प्रधान हैं । इनके सिवा और भी कई संस्कृतपाठशालाएँ, मिडिलस्कूल और कन्याविद्यालय आदि हैं ।

सरकारी संस्थाएँ—यों तो यहाँ छावनी, जजी, मुन्सफी आदि सभी कुछ हैं परन्तु लोकोपकारी संस्थाओंमें गवर्नमेण्टहॉस्पिटल तथा म्युनिसिपलबोर्डके कुछ मदरसे आदि ही हैं ।

कुछ अन्य बातें

मथुराकी कई चीजें बहुत प्रसिद्ध हैं। यहाँके पेड़े, खुरचन, सूतकी निवाड़, डोरी, ताँबेके करुए, ठाकुरजीके सलमा सितारे और सोने-चाँदीके मुकुट एव किरीट आदि शृङ्गारके सामान, चन्दन और हाथीदाँतकी मूठके चँवर एव पङ्खे आदि बहुत अच्छे बनते हैं। अब कपड़ेकी छपाईका काम भी अच्छा होने लगा है। यात्रीलोग इनमेंसे बहुत-सी चीजें प्रसाद और सोगातरूपमें ले जाते हैं।

यहाँ वर्षमें कई मेले होते हैं। श्रीकृष्णजन्माष्टमीका यहाँका-सा उत्सव और कहीं नहीं होता। क्यों न हो, यह तो जन्मस्थान ही है। श्रावणके शुक्लपक्षमें यहाँ हिंडोलोंका बड़ा सुन्दर दर्शन होता है। उन दिनोंमें बाहरके यात्रियोंकी भीड़ भी अधिक रहती है। आश्विन कृ० ११ से शरत्पूर्णिमातक रामलीलाकी धूम रहती है। कार्तिकमें दीपावली और अन्नकूटके उत्सव बड़े अनोखे होते हैं। कार्तिक शु० ८ को गोपाष्टमी और दशमीको कसवधका उत्सव होता है। इसी प्रकार समय-समयपर यहा बहुत-से उत्सव और मेले होते हैं।

पद्मपुराणमें लिखा है कि मथुरा भगवान्‌को अत्यन्त प्रिय है। कार्तिकमासमें तुलाके सूर्य आनेपर श्रीयमुनाजीका स्नान मोक्ष देनेवाला होता है। इसी प्रकार पुराणोंमें इस पुण्यपुरीकी भूरि-भूरि प्रशसा की गयी है। जो लोग मथुरासेवन करते हैं वे धन्य हैं।

वृन्दावन

यह मथुरासे उत्तरकी ओर यमुनाजीके दायें किनारेपर ही बसा हुआ है। ब्रजभूमिके प्रायः प्रधान स्थानोंको मथुरासे ही सड़कें गयी हैं। इसलिये यात्रियोंको जहाँ भी जाना होता है यहाँसे होता है। वृन्दावन जानेके लिये रेल और पक्की सड़क दोनों ही मार्ग हैं। रेलसे प्रायः ९ मील पड़ता है और सड़कसे ६ मील। अधिकांश यात्री सड़कसे ही जाते हैं।

भावुक भक्तोंकी दृष्टिमें वृन्दावनका महत्त्व मथुराजीकी अपेक्षा बहुत अधिक है। मथुरा भगवान्‌की जन्मभूमि है, परन्तु वृन्दावनमें उन्होंने मधुरातिमधुर बाललीलाएँ की हैं। यहाँके सघनवन, मनोहर निकुञ्ज और पावन यमुना पुलिनमें ही उन्होंने गोचारण, वंशीवादन और अनेकों गोपसखाओंके साथ तरह-तरहके खेल खेले हैं। इस समय भी जैसा मनोहर और चित्ताकर्षक दृश्य वृन्दावनके ऊँचे-नीचे कछारों और हरे भरे मैदानोंका है वैसा मथुराके धन-जनाकीर्ण प्रासादोंका नहीं है।

भगवान् कृष्णके समय वृन्दावन एक वन ही था। मथुरा तो उस समयसे भी सहस्रों वर्ष पूर्व सूर्यवंशी एवं चन्द्रवंशी राजाओंकी राजधानी बन चुकी थी। संस्कृतमें 'वृन्दा' तुलसीको कहते हैं। अतः जान पड़ता है, यहाँ पहले तुलसीका वन होगा। तुलसी है भी भगवान्‌को स्वभावतः ही अत्यन्त प्रिय। यहां 'वृन्दा' नामकी एक देवीका मन्दिर भी है। कहते हैं, उसकी तपस्यासे प्रसन्न होकर भगवान्‌ने उसको इच्छानुसार यह वर दिया था कि यह स्थान तेरे नामसे प्रसिद्ध होगा। अस्तु।

मथुरासे वृन्दावन जाते समय मार्गमें भी कई दर्शनीय स्थान पड़ते हैं। मथुरासे तीन मीलपर ऊँची दीवारोंसे घिरा हुआ एक बाग है। इसे सेठ कुशलजी नामक एक गुजराती सज्जनने लगवाया था। इससे थोड़ी दूर सड़कके दूसरी ओर खुले मैदानमें लाल पत्थरकी एक बावली है। इसमें ५० सीढ़ियाँ हैं। यह इन्दौरकी सुप्रसिद्ध महारानी अहिल्याबाईकी स्मृतिमें सन् १७९५ में बनवायी गयी थी। बावलीसे दक्षिण पूर्वकी ओर अक्रूरजीका स्थान है। यहाँ अक्रूरजीके साथ मथुरा जाते समय भगवान्‌ने उन्हें अपने भगवदीय स्वरूपके दर्शन कराये थे। इसके पास ही भतरौड है। यहाँ यज्ञपत्नियों-ने भगवान्‌को भोजन कराया था। इस स्थानपर पहले एक बहुत प्राचीन मन्दिर था। उसे औरङ्गजेबने नष्ट कर दिया। इस मन्दिर-की रक्षाके लिये बहुत-से हिन्दू राजाओंने उसका सामना भी किया, किन्तु अन्तमें जीत औरङ्गजेबकी ही हुई। मन्दिरके खण्डहर अब भी विद्यमान हैं। इससे एक मील आगे तरासके राजासाहबका बाग

है और उसके दूसरी ओर जयपुर नरेशका बगीचा है। इससे आगे वृन्दावनका रेल्वे स्टेशन है।

वृन्दावनमें बहुत सी धर्मशालाएँ हैं। इनमें यात्री आरामसे ठहर सकते हैं। किन्हीं किन्हीं मन्दिरोंमें भी ठहरनेके स्थान हैं तथा पण्डोंके घर भी हैं ही। बाजारमें भोजनकी सब प्रकारकी कच्चा-पक्की सामग्री मिलती है। इसके सिवा कुछ मन्दिरोंमें प्रसाद भी बिकता है। वहाँ भी दो चार आने देकर एक व्यक्तिके लिये पर्याप्त भोजन मिल सकता है।

वृन्दावनमें यमुनास्नान, देवदर्शन और परिक्रमा ये ही प्रधान धर्म हैं। यमुनाजीके बत्तीस घाट हैं, उनमें चीरहरणघाट, कालीघाट और केशीघाट बहुत प्रसिद्ध हैं। यहा यमुनाजी घाटोंसे दूर हो गयी थीं, इसलिये सुन्दर होते हुए भी उनकी शोभा नष्ट हो गयी था। अब बहुत-सा व्यय करके उनको धाराको पुन घाटोंपर लाया गया है। वृन्दावनकी परिक्रमा चार मीलकी है। सामूहिक परिक्रमा प्रत्येक एकादशीको होती है। कोई-कोई लोग साष्टाङ्ग परिक्रमा करते हैं, वह कई दिनमें समाप्त होती है।

वृन्दावनके मन्दिर

वृन्दावनमें जितने मन्दिर हैं उतने सम्भवत किसी भी तीर्थमें नहीं हैं। यहाँ मन्दिर और बन्दरोंकी ही अधिकता है। उनमें से कुछ प्रधान मन्दिरोंका परिचय नीचे दिया जाता है। इनमें पहले चार अधिक प्राचीन हैं।

गोविन्ददेवजीका मन्दिर—इस मन्दिरको श्रीरूप और

सनातन गोस्वामिपादोंकी आज्ञासे आँवेरके राजा मानसिहने सन् १५९० ई०में बनवाया था। श्रीगोविन्ददेवजीकी मूर्ति भी भगवान्‌के प्रपौत्र वज्रनामकी पधरायी हुई थी। यह श्रीरूपगोस्वामीको नन्द-गाँवमें मिली थी। यह मन्दिर लाल पत्थरका बना हुआ है। कला-कौशलकी दृष्टिसे इसके मुकाबिलेका कोई अन्य मन्दिर उत्तर भारतमें नहीं है। पहले यह बहुत ऊँचा था। इसकी छतपर नित्य एक मन घीका दीपक जलाया जाता था। उसकी ज्योति दिल्लीमें दिखायी देती थी। उसे देखकर औरंगजेबकी लड़कीको उसका हाल जाननेकी इच्छा हुई। वह साथमें सेना लेकर यहाँ आयी और इसे भीतरसे देखनेकी इच्छा प्रकट की। किन्तु पुजारियोंने उसे भीतर घुसनेकी अनुमति न दी। इससे कुपित होकर उसने सेनाको मन्दिर नष्ट करनेकी आज्ञा दे दी। बस, इसकी सारी बहुमूल्य वस्तुओंको लूट लिया गया और इसके ऊपरके पाँच खण्ड तोड़ दिये गये। गोविन्ददेवजीकी मूर्ति किसी प्रकार आँवेर पहुँचा दी गयी। अब वह जयपुरमें राजप्रासादके सामने एक मन्दिरमें विराजमान है। पाँच मञ्जिल उतर जानेपर भी इस समय इसकी ऊँचाई सब मन्दिरोंसे अधिक है। इससे ही इसकी पहली ऊँचाईका अनुमान किया जा सकता है।

गोपीनाथजी—यह श्रीकृष्णचैतन्यसम्प्रदायका मन्दिर है। प्राचीन गोपीनाथजी जयपुर पधार गये हैं। कहते हैं, मधुपण्डित नामके कोई बंगाली सज्जन वृन्दावनमें आये थे। उन्हें भगवान्‌के दर्शनोंकी उत्कण्ठा हुई। तब भगवान्‌ने गोपीनाथरूपसे वंशीवटके

नाचे दर्शन दिये। पहला मंदिर जयपुरनिवासी रायशोभूराम बनवाया था। अब दूसरा मंदिर श्यामसुन्दरकुमार बाबू नामक एक बंगाली सज्जनने बनवाया है।

मदनमोहनजी—श्रीमदनमोहनजीका पूर्वविग्रह मथुरामें एक चौबेके पास था। उसे श्रीसनातन गोस्वामी वृन्दावन ले आये थे। पहले रामदास नामक एक पंजाबी सज्जनने मदनमोहनजीका लाल पत्थरका मंदिर बनवाया था। किंतु यवनोंके अत्याचारके समय वे मदनमोहनजी तो करौली पधार गये। अब नन्दकिशोरबाबूने दूसरी मूर्ति स्थापित की है। इस मन्दिरकी कारीगरी अत्यन्त दर्शनीय है।

युगलकिशोरजी—इसमें श्रीकृष्ण और बलरामजीकी मूर्तियाँ हैं। इसे सन् १६२७ ई०में चौहान राजपूत नारकरनने बनवाया था।

रङ्गजीका मन्दिर—वृन्दावनके मन्दिरोंमें यह सबसे बड़ा है। यह पूर्वसे पश्चिमतक ७७५ फीट लम्बा और उत्तरसे दक्षिणतक ४४० फीट चौड़ा है। इसका आकार प्रकार त्रिचनापल्लीके रङ्गजीके मन्दिरके समान है। इसमें चार परकोटे हैं जिनमेंसे प्रत्येक १५२० फीट ऊँचा है। चौथे परकोटेके भीतर पत्थरके खम्भोंके दालानमें तीन दरके भीतर भगवान्‌की चतुर्भुजी मूर्ति है। पूर्वके पहले दरवाजेकी दाहिनी ओर एक बड़ा पक्का तालाब है। उसमें गजेन्द्रोद्धारकी लीला दिखायी जाती है। मन्दिरके जगमोहनके सामने ६० फीट ऊँचा गरुडस्तम्भ है, जो भीतरसे चन्दनका है और ऊपरसे सोनेके पत्रसे मँढा हुआ है। यह मन्दिर सेठ लक्ष्मी

चन्द्रके छोटे भाई सेठ राधाकृष्ण और गोविन्ददासजीने ४५लाख रुपया लगाकर बनवाया था। यह सन् १८५१ई०में तैयार हुआ था। इसकी सेवाके लिये ५२ सहस्र वार्षिक आयकी रियासत दी हुई है। सेठजीने यह मन्दिर अपने गुरु श्रीरङ्गाचार्यजीको भेंट कर दिया था। उन्होंने इसका प्रबन्ध एक रजिस्टर्ड ट्रस्टको सौंप दिया है। ब्रजमें यह मन्दिर श्रीसम्प्रदायका कीर्तिस्तम्भस्वरूप है। प्रबन्धकारिणी कमेटीके प्रधान सर्वदा सेठजीके वंशधर ही होते हैं। यहाँ प्रतिदिन प्रायः सौ मनुष्योंको भोजन कराया जाता है। मन्दिरके अधीन कई पाठशालाएँ भी हैं, जिनमें अधिकतर न्याय पढ़ाया जाता है।

बाँकेबिहारीजीका मन्दिर—ये टट्टीसम्प्रदायाचार्य श्रीहरिदासजीके पूज्य देव हैं। ये उन्हें निधिवनमें मिले थे और इन्हींकी आज्ञासे उन्होंने इन्हें प्रतिष्ठित किया था। वृन्दावनमें यह मूर्ति सबसे अधिक मनोहर समझी जाती है। यहाँकी कई बातें विलक्षण हैं। आप सवेरे दश बजे सोकर उठते हैं, दर्शन होते समय क्षण-क्षणमें पर्दा आता रहता है, वर्षमें एक ही दिन केवल अक्षय तृतीयाको आपके चरणोंके दर्शन होते हैं, एक ही दिन आश्विन शु० १५को मुकुट धारण करते हैं और केवल श्रावण शु०३को ही हिंडोलेमें झूलते हैं। आपका प्रधान भोग दूध भात है। मन्दिरमें शंख, घड़ियाल, झाँझ आदि कोई बाजा नहीं बजाया जाता। आपके दर्शन निरन्तर न होनेका यह कारण बतलाया जाता है कि एक बार आपकी बाँकी झाँकीपर रीझकर एक भक्त बहुत देरतक आपकी ओर

भेंट कर दिया था। इसकी लागत चार लाख रुपया है। इसके तीन द्वार हैं। बीचके द्वारसे राधागोपालजीके, बायें द्वारसे नृत्य-गोपालजीके और दाहिने द्वारसे हंसगोपालजीके दर्शन होते हैं। इसमें पत्थरका बहुत सुन्दर काम है।

राधारमणजीका मन्दिर—यह मन्दिर माध्वगौडसम्प्रदायके आचार्योंका है। श्रीराधारमणजी श्रीगोपालभट्टके पूज्यदेव थे। उस समय ये शालग्रामरूपमें थे। श्रीगोपालभट्टके पास बारह शालग्रामशिलाएँ थीं। आप उन्हींका पूजन किया करते थे। एक दिन एक सेठने सभी मन्दिरोंके ठाकुरोंके लिये वस्त्राभूषण बाटे। सबके ठाकुरोंकी सेवा होती देखकर भट्टजीका भी बलवती इच्छा हुई कि हमारे उपास्यदेवके अंग-प्रत्यंग होते तो हम भी वस्त्राभूषणोंसे प्रभुका शृंगार करते। उनकी विकलता उत्तरोत्तर बढ़ती गयी और इसी चिन्तामें उनकी आँखें लग गयीं। वाञ्छाकल्पतरु श्रीभगवान्‌के लिये कुछ कठिन तो है ही नहीं। थोड़ी देरमें भगवान्‌ने उन्हें जगाया कि 'गोपाल! उठ मेरे दर्शन कर।' भट्टजीने पिटारी खोली तो देखा कि ग्यारह शालग्राम तो ज्यों-के-त्यों हैं, किन्तु एकमेंसे बड़ी मनोमोहिनी प्रतिमा प्रकट हो गयी है। यह वैशाख शु० १४ की रात्रि थी। अब भी प्रतिवर्ष उस दिन भगवान्‌के प्राकट्यका उत्सव मनाया जाता है।

श्रीराधावल्लभजीका मन्दिर—श्रीराधावल्लभजी गोस्वामी श्रीहित-हरिवंशजीके उपास्यदेव हैं। गोस्वामीजी महाराज देवबन्दके रहनेवाले थे। वे श्रीवृन्दावन आ रहे थे। मार्गमें वे चिरथावल गाँवमें ठहरे। वहाँ आत्मदेव ब्राह्मणके यहाँ उन्होंने इनके दर्शन

टकटकी लगाकर देखते रहे थे । तब आप उनके प्रेमके वशीभूत होकर उनके साथ चले गये और फिर बहुत अधिक अनुनय विनय करनेपर मन्दिरमें पधारे। तबसे यह नियम हो गया है कि क्षण क्षणमें पर्दा डाल दिया जाय, जिससे कोई भक्त आपके अधिक देर दर्शन न कर सके।

शाहजीका मन्दिर—यह मन्दिर लखनऊके शाह बिहारीलाल जीके पुत्र शाह कुन्दनलाल और शाह फुन्दनलालजीका बनवाया हुआ है। ये दोनों भाई बड़े उच्च कोटिके भक्त और कवि थे। वृन्दावन आनेपर ये क्रमशः ललितकिशोरी और ललितमाधुरीके नामसे प्रसिद्ध हुए थे। यह मन्दिर संगमरमरका बना हुआ है। इसकी कारीगरी दर्शनीय है। इसमें भगवान्‌की सेवा बड़े भावसे होती है। वसन्तपञ्चमीके दिन आप वसन्ती कमरेमें विराजते हैं। यह भी अपने ढंगका एक ही मन्दिर है। सुन्दरताकी दृष्टिसे यह मन्दिर सबसे अच्छा है। इसकी लागत प्रायः दस लाख रुपया है।

लालाबाबूका मन्दिर—लालाबाबू बंगालके बहुत बड़े रईस थे। वे अन्तमें विरक्त होकर वृन्दावन चले आये थे और यहाँ व्रजवासियोंके टुकड़े खाकर भगवान्‌का भजन करने लगे थे। यह मन्दिर उन्हींका बनवाया हुआ है। इसकी पूजा सेवाके लिये कई गाँव लगे हुए हैं।

गिरिधारीजीका मन्दिर—इसे राधागोपालजी और ब्रह्मचारीजी-का मन्दिर भी कहते हैं। यह ग्वालियर नरेशका बनवाया हुआ है। इसे बनवाकर उन्होंने अपने गुरु ब्रह्मचारी गिरिधारीदासजीको

की हुई थी । कालक्रमसे बहुत दिनोंतक यह क्षीरसागरमें शयन करती रही । एक दिन बल्देवजीने कल्याणजी नामक एक अहिवासी ब्राह्मणको स्वप्न देकर कहा कि मैं क्षीरसागरमें शयन किये हुए हूँ, मुझे निकालकर स्थापित करो । उन्होंने निकालकर इन्हें एक कच्चे मन्दिरमें स्थापित कर दिया ।

कल्याणजी अहिवासी ब्राह्मण थे । वे गोसाईं गोकुलनाथजीके सेवक थे । गोसाईंजीने उन्हें कुछ मासिक वृत्ति बाँधकर बलदेवजीकी सेवा सौंप दी । श्रीदाऊजीके शृंगारार्थ ऋतुओंके अनुसार वस्त्र मिलते थे । किंतु कल्याणजी शीतकालमें एक कम्बलमें गुड़ी मुड़ी हुए पडे रहते थे । उस समय दयानिधान दाऊजी अपनी रजाई उतारकर कल्याणजीको उढ़ा देते थे । कल्याणजी सबेरे उठकर उसे फिर दाऊजाको ही उढ़ा देते । होते होते कल्याणजीकी यह शिकायत गोसाईं श्रीगोकुलनाथजीतक पहुँची । तब एक दिन रातको बारह बजे वे गोकुलसे दाऊजी आये । इसी समय श्रीबलदेवजीने कल्याणजीको जगाकर कहा कि 'अरे उठ ! गोसाईंजी आ रहे हैं, तू मेरी रजाई मुझे उढ़ा दे और अपना कम्बल ओढ़कर सो जा ।'

कल्याणजीने ऐसा ही किया । इतनेहीमें गोसाईंजीने आकर देखा तो कल्याणजी कम्बल ओढे पड़े हैं । गोसाईंजीने उनसे सच्ची बात पूछी और उन्होंने जैसी बात थी वह सब कह दी । तब गोसाईंजी प्रसन्न होकर बोले 'आजसे बल्देवजी तुम्हारे ही हैं, तुम

बलदेव

महावनसे प्रायः ६ मील बलदेव गाँव है। इसका नाम रीढ़ा गाँव भी है। परन्तु यह बलदेवजी या दाऊजीके नामसे ही अधिक प्रसिद्ध है। यहाँ बलदेवजीकी बड़ी विशाल और मनोहर मूर्ति है। मूर्तिका आकार मनुष्याकारसे भी कुछ अधिक है। इनके सामने कोनेमें श्रीरेवतीजी हैं। दोनों मूर्तियाँ काले पत्थरकी हैं। इनका भोग माखन मिश्री है। बलदेवजीकी मिश्री बहुत प्रसिद्ध है। बहुत-से यात्री यहाँकी मिश्री घरको भी ले जाते हैं। मन्दिरके बाहर क्षीरसागर नामका एक ताल है। कहते हैं, यह मूर्ति राजा वज्रनाभकी स्थापित

गोवर्धन

गोवर्धन या गिरिराज मथुरासे १६ मीलकी दूरीपर है, यहाँ मोटर या ताँगेसे आ-जा सकते हैं। यह गाँव गोवर्धनपर्वतके समीप और उसके ऊपर बसा हुआ है। गोवर्धनपर्वत न बहुत ऊँचा है और न चौड़ा ही। कहते हैं, यह पहले बहुत ऊँचा था, और अब जैसे जैसे कलियुगका प्रभाव बढ़ता जाता है वैसे वैसे ही ये पृथिवीमें घुसते जाते हैं। इस समय इनकी ऊँचाई १०० फीटसे अधिक नहीं है। इन्हें सब लोग बहुत पूज्य दृष्टिसे देखते हैं, यहाँके निवासी भी इनके ऊपर जूता पहनकर नहीं चढ़ते। आषाढ़ शु० १५ और [illegible]मावास्याको इनकी परिक्रमा भी होती है। बहुत-से

यात्री इनकी दण्डवती परिक्रमा करते हैं। यह परिक्रमा सात कोस की है। इसमें बड़े सुन्दर और एकान्त स्थान हैं। व्रजमें भजनानन्दी महात्माओंको यही स्थान अधिक पसन्द है और अधिकतर वे गोवर्धनजीकी परिक्रमामें ही कहीं-न-कहीं रहते हैं। परिक्रमा मानसीगङ्गासे आरम्भ होती है। इसमें ब्रह्मकुण्ड, दानघाटी, गोविन्दकुण्ड, किल्लोलकुण्ड, मारवन, माधुरीकुण्ड, राधाकुण्ड एवं कुसुमसरोवर आदि बहुत-से प्रसिद्ध स्थान आते हैं।

मानसीगङ्गा—यह गोवर्धन गाँवमें एक बहुत बड़ा पक्का सरोवर है। इसके तीन ओर मन्दिर और एक ओर गिरिराज सुशोभित हैं। कार्तिकी अमावास्याको इसपर जैसी दीपावली होती है वैसी अन्यत्र कहीं नहीं होती। इस सरोवरको भगवान्‌ने अपने मनसे ही प्रकट किया था। इसका स्नान गङ्गास्नानके समान ही महत्त्व रखता है। मानसीगङ्गापर श्रीलक्ष्मीनारायणजीका मन्दिर है, जो उत्तर भारतमें रामानुजसम्प्रदायकी गोवर्धनगद्दीके नामसे प्रसिद्ध है। इसीके तटपर भरतपुरके राजाओंकी छत्रियाँ (समाधियाँ) हैं। वे बहुत सुन्दर बनी हुई हैं।

यहाँ कई धर्मशालाएँ हैं, जिनमें सज्जनसिंह सिहवी और तुलाराम साधूरामकी धर्मशालाएँ बहुत अच्छी हैं। एक किशोरीलाल अनाथालय भी है। इसे किशोरीलालजी कलकत्तेवालोंने दो लाख रुपये लगाकर स्थापित किया है। इसके सिवा यहाँ कन्यापाठशाला, मिडिलस्कूल, डाकघर तथा तारघर आदि भी हैं।

बरसाना

गोवर्धनसे बरसाना सात कोस है। कच्चा रास्ता है। डीग होकर पक्की सड़क भी गयी है। अधिकांश यात्री डीग होकर ही जाते हैं। इस रास्ते यह २१ मीलके लगभग पड़ता है। बरसाना श्रीराधिकाजीका पितृगृह है। यहाँ एक ऊँची पहाड़ीपर लाड़िलीजी का मन्दिर है। यहाँके अधिकांश लोग श्रीजीके ही उपासक हैं, वे 'राधे-राधे' कहा करते हैं। लाड़िलीजीके मन्दिरकी सेवा-पूजाका बहुत अच्छा प्रबन्ध है। पहाड़ीपर मन्दिरतक सीढ़ियाँ बनी हुई हैं।

मंदिर भी बहुत विशाल और सुंदर है। इसीके बराबर जयपुर नरेशका मंदिर है। वह भी बड़ा ही मनोहर है। यह ब्रह्मारूप मानी जाती है। इसके चार शिखर ही चार मुख हैं जिनपर चार मंदिर बने हुए हैं।

पर्वतके नीचे बस्ती है। उसमें भोजनादिकी आवश्यक वस्तु मिल जाती हैं। बस्ती और उक्त पहाड़ोंकी परिक्रमामें बहुत से मंदिर और सरोवर हैं, जिनमें गहवरवन, वृषभानुसरोवर, साँकरीखोर, मानगढ़ और विलासगढ़ आदि प्रसिद्ध हैं। गहवरवनमें नारायणदास नामक एक ब्राह्मण भजन किया करते थे, उन्हें स्वप्न देकर राधिकाजीने कहा था कि अमुक स्थानमें मेरी प्रतिमा है, उसे निकालकर स्थापन करो। उन्होंने लाडिलीजीकी स्थापना की और उनके वंशधर ही उनके पुजारी हुए। साँकरीखोर दो पर्वतोंके बीचमें एक तंग घाटी है। यहाँ एक कदम्बका वृक्ष है, जिसके पत्ते दोनेके आकारके होते हैं। मानगढ़ वह स्थान है जहाँ भगवान्‌ने मानवती राधिका जीको मनाया था।

बरसाना बड़ी सुन्दर बस्ती है। यहाका दृश्य देखते ही बनता है। यहा भाद्रपद शु० ८ से १४ तक बड़ा मेला होता है। यहाकी होली दर्शनीय होती है। जलवायुकी दृष्टिसे भी यह स्थान बहुत अच्छा है।

नन्दगाँव

बरसानेसे तीन मील नन्दगाँव है । इन दोनोंके बीचमें प्रेम-सरोवर नामका एक सुन्दर ताल है । इस स्थानपर श्रीराधा-कृष्णका सम्मिलन हुआ करता था । इसके समीप ही सेठ गुरुसहायमलका बनवाया हुआ श्रीराधाविनोदजीका मन्दिर है । नन्दगाँव नन्दबाबाजीका निवासस्थान है, इसे नन्दिग्राम भी कहते हैं । नन्दगाँव और बरसानेवालोंमें अबतक परस्पर समधियानेका भाव चलता है । होलीके समय दोनों परस्पर होली खेलते हैं । नन्दगाँववाले अपनेको वरपक्षका मानते हैं और बरसानेवाले अपनेको कन्यापक्षका ।

हरिद्वारमें स्नान, पिण्डदान, तर्पण और अस्थिप्रवाह प्रधान कर्म हैं। साधुसेवा और सत्संगके लिये तो यहाँ आश्रमोंकी [illegible] प्रधानता है। मन्दिरोंकी यहाँ अधिकता नहीं है। जो कुछ हैं वे भी बहुत प्राचीन नहीं हैं। यहाँके पाँच तीर्थोंका विशेष माहात्म्य है। इस विषयमें यह श्लोक प्रसिद्ध है—

हरिद्वारे कुशावर्ते बिल्वके नीलपर्वते।
स्नात्वा कनखले तीर्थ पुनर्जन्म न विद्यते॥

अर्थात् हरिद्वार (हरिकी पैड़ी), कुशावर्त, बिल्वकेश्वर नीलपर्वत और कनखल इन तीर्थोंमें स्नान करनेसे पुनर्जन्म नहीं होता।

हरिकी पैड़ी—यही प्रधान हरिद्वार है। यहींसे श्रीभागीरथी हिमालयकी गोदसे निकलकर मैदानमें पदार्पण करती हैं। यह घाट ऊपरसे नीचेतक पक्का बना हुआ है। इसके दाहिनी ओर दो-तीन मंदिर हैं। घाटके ऊपर कोई भी व्यक्ति जूता पहनकर नहीं जा सकता। हरिकी पैड़ियोंके सामने थोड़ी दूरपर गंगाजीके बीचमें एक लम्बा-चौड़ा चबूतरा है, जिसे प्लेटफार्म कहते हैं। प्लेटफार्म और पैड़ियोंके बीचमें जो श्रीगंगाजीका भाग है उसे ब्रह्मकुण्ड कहते हैं। इसके उत्तरी और दक्षिणी दोनों सिरोंपर प्लेटफार्मपर जानेके लिये दो पुल बने हुए हैं। ब्रह्मकुण्डमें स्नानका बड़ा ही माहात्म्य है। इसमें अस्थिप्रवाह भी किया जाता है। यहाँके तीर्थगुरु विधि-पूर्वक अस्थिप्रवाह कराते हैं। कहते हैं, जिन पुरुषोंकी अस्थियाँ इस कुण्डमें प्रवाहित की जाती हैं उनको विष्णुलोककी प्राप्ति होती

है। ब्रह्मकुण्डमें बहुत सी मछलियाँ रहती हैं, जिन्हें यात्री आटेकी गोलियाँ खिलाते हैं। वे जलमें आनन्दसे किलोल करती रहती हैं और मनुष्योंसे बिल्कुल नहीं डरतीं। पहले यह घाट छोटा ही था। इसलिये कुम्भके अवसरपर बहुत प्रबन्ध करनेपर भी भीडकी अधिकताके कारण सैकडों मनुष्य दबकर मर जाते थे। अब इसके उत्तरकी ओरके कुछ मकान गिराकर इसे पहलेकी अपेक्षा बहुत बढ़ा दिया है। प्लेटफार्मपर सायकालमें बडी चहल पहल रहती है। बहुत-से महात्मा और देश विदेशके नर-नारी दिखायी देते हैं। कहा उपदेश हो रहा है, कहीं कथा हो रही है, कहा कोई दार्शनिक विचार चल रहा है और कहीं स्नान और खाने-पीनेका ढग-ढौर दिखायी देता है। जिस समय हरिकी पैडियोंपरसे गगाजीकी आरती की जाती है वह दृश्य भी बडा ही अपूर्व होता है। घाटके मन्दिरोंमें श्रीगगाजी, शिवजी, श्रीराधाकृष्णजी और श्रीसीतारामजी आदिकी मूर्तिया हैं। यहाँ स्नान और देवदर्शन करके प्राय सभी यात्रियोंका चित्त प्रसन्न हो जाता है और वे एक अपूर्व पवित्रता एव स्फूर्तिका अनुभव करने लगते हैं।

कुशावर्त—यह हरिकी पैडियोंसे दक्षिणकी ओर थोड़ी ही दूरीपर गगाजीका एक घाट है। इस स्थानपर पितरोंको पिण्डदान करनेकी विधि है। यहाँ मेषकी सक्रान्तिपर विशेष भीड़ होती है। इस घाटपर यात्रियोंके सुभीतेके लिये इन्दौरनरेशने एक लम्बा छायादार चबूतरा बनवा दिया है। स्कन्दपुराणमें लिखा है कि जो पुरुष इस तीर्थमें स्नान, दान, जप, होम, पिण्डदान, श्राद्ध और तर्पणादि

करेगा उसका वह कर्म अनन्त फल देनेवाला होगा । इसी पुराणमें इसकी उत्पत्तिके विषयमें ऐसा लिखा है एक बार श्रीदत्तात्रेयजी यहाँ एक पैरसे खड़े होकर तपस्या कर रहे थे । उन्होंने अपने वस्त्र, भगवान्‌की पूजाकी सामग्री और कुश आदि गङ्गाजीके तटपर रख दिये थे । जिस समय वे ध्यानस्थ थे। गङ्गाजीके एक प्रवाहमें वे सब बह गये, किन्तु उनके तपोबलसे वह गङ्गाजीका प्रवाह वहाँ आवर्ताकार घूमने लगा । जब ध्यान टूटनेपर उन्होंने यह सब देखा तो उन्हें कुछ क्रोध हुआ । किन्तु उस समय देवताओंने प्रार्थना करके उन्हें शान्त किया । तब दत्तात्रेयजीने ब्रह्मादिक देवताओंसे कहा कि आपलोगोंके अनुरोधसे मैं यह वर देता हूँ कि आजसे यह स्थान एक पवित्र तीर्थ बनेगा । इसने मेरा कुश आदि सामग्रीकी रक्षा की है, इसलिये लोग इसे कुशावर्त कहेंगे । आप सब लोग यहाँ निवास करें । तब देवगण 'तथास्तु' कहकर अन्तर्धान हो गये । और यह स्थान कुशावर्त नामसे प्रसिद्ध हुआ ।

बिल्वकेश्वर–हरिद्वारसे पश्चिमकी ओर रेलवे लाइनके दूसरे पारमें एक पहाड़ीके नीचे बिल्वकेश्वर महादेवका मन्दिर है । यहाँ बिल्व (बेल) के वृक्ष अधिक हैं । इससे ये बिल्वकेश्वर कहे जाते हैं । मन्दिर छोटा सा ही है और बहुत पुराना भी नहीं है । एक शिवलिङ्ग मन्दिरके भीतर है और एक उसके सामने एक चबूतरेपर नीमके वृक्षके नीचे । मालूम होता है यहाँ पहले कोई विशाल बिल्ववृक्ष था, जो अब नष्ट हो गया है क्योंकि गरुडपुराणमें लिखा है कि यहाँ (उस बिल्वपर्वतपर) एक बिल्वका वृक्ष है, उसके

नीचे एक शिवलिंग है, जिसके दर्शनमात्रसे मनुष्य शिवरूप हो जाता है।*

बिल्वपर्वतके पीछे गौरीकुण्ड है। इसमें स्नानादि करके ही बिल्वकेश्वरके दर्शन किये जाते हैं। यह एक कुएँके समान है। इस स्थानपर बन्दरोंकी अधिकता है। पुराणोंके आधारपर पता चलता है कि किसी समय यहाँ गंगाजीका प्रवाह था। यह प्रदेश बड़ा ही मनोरम है। मन्दिरके पास ही ऋचीक मुनिका आश्रम और एक गुफामें दुर्गादेवीकी मूर्ति है।

नीलपर्वत—यह गंगाजीके दूसरी ओर एक पहाड़ी है। इसके नीचे गंगाजीकी जो धारा बहती है वह नीलधारा कहलाती है। पर्वतके ठीक शिखरपर चण्डीका मन्दिर है। यह स्थान हरिद्वारसे प्राय २-२॥ मील पड़ता है। पर्वत चढ़नेके लिये दो रास्ते हैं—गौरीशंकर महादेवके मन्दिरसे और कामराजकी कालीके मन्दिरसे। इनमें पहलेसे चढ़ना और दूसरेसे उतरना चाहिये। ऐसा करनेसे इस पर्वतकी परिक्रमा हो जाती है और मार्ग भी अच्छा कटता है। चण्डीके मन्दिरसे आसपासका सारा प्रदेश दिखायी देता है। बड़ा ही मनोरम दृश्य है। सारी थकान दूर हो जाती है। चण्डीके पास अञ्जनादेवीका छोटा-सा मन्दिर है तथा पर्वतकी तलहटीमें नीलेश्वर महादेव हैं। यह पर्वत नील नामक एक शिवगणकी तपस्याका स्थान है।

---

* तत्रैवो बिल्ववृक्षस्तु तस्याध शिवलिङ्गकम्।
यस्य दर्शनमात्रेण शिवता याति मानव॥

कनखल—यह हरिद्वारसे प्राय: तीन मील दक्षिणकी ओर बसा है। इसका विस्तार प्राय: हरिद्वारके समान ही है। मठ, मन्दिर और धर्मशालादिके स्थान भी यहाँपर कम नहीं हैं, परन्तु फिर भी यहाँ वैसी चहल-पहल नहीं है। विशेष पर्वोंके दिन और प्राय: सदा ही यह सुनसान-सा रहता है। यहाँ गङ्गाजीके किनारे बहुत-से घाट और महात्माओंके स्थान हैं। इन स्थानोंमें दक्ष प्रजापतिका मन्दिर और घाटोंमें रामघाट प्रधान है। दक्ष प्रजापतिका स्थान कनखलकी दक्षिणी सीमापर गङ्गाजीके तटपर है। इसमें दक्षेश्वर महादेव तथा वीरभद्र और भद्रकालीके मन्दिर हैं। एक कुण्डमें, जिसे सतीकुण्ड कहते हैं, भस्म रहती है। कहते हैं यह वही यज्ञकुण्ड है जिसमें दक्षयज्ञके समय सतीने देहत्याग किया था। कुण्डके ऊपर चार खम्भोंपर गुम्बजदार छत है। यात्री यह भस्म श्रद्धापूर्वक मस्तकपर चढ़ाते हैं। इसके सिवा एक दालानमें हनुमान्‌जीकी भी मूर्ति है। कनखल आनेवाले यात्री दक्ष प्रजापतिके स्थानपर अवश्य आते हैं। रामघाट कनखलके बीचमें है। यहाँ स्नान तथा तर्पणादि किये जाते हैं।

हरिद्वार एवं कनखलके अन्य स्थान

श्रवणनाथ महादेवका मन्दिर—यह मन्दिर कुशावर्तके समीप है। इसे श्रवणनाथ नामक एक महात्माने बनवाया था। यह पत्थरका बना हुआ शिखरदार मन्दिर है। इसमें पञ्चमुख महादेवकी मूर्ति है। मन्दिरके सहनमें ५ फीट लम्बे और ४ फीट चौड़े संगमरमरके नन्दीश्वर हैं। इनके आसपास और भी छोटे छोटे मन्दिर

हैं, जिनमेंसे एकमें स्वामी श्रवणनाथजीकी भी संगमरमरकी प्रतिमा है । इस मंदिरके खर्चके लिये कुछ गाँव लगे हुए हैं ।

श्रीगंगाजीका मन्दिर—यह श्रवणनाथजीके मंदिरसे पूर्वकी ओर है, इसे महाराज बीकानेरने बनवाया है । इसमें सदावर्त भी मिलता है ।

गोघाट—यह घाट हरिकी पैड़ी और कुशावर्तके बीचमें है । यहाँ गोहत्याका प्रायश्चित्त कराया जाता है ।

चौबीस अवतार—यह हरिकी पैड़ीसे उत्तरकी ओर गंगा-तटपर काँगड़ेके राजाका बनवाया हुआ मन्दिर है । इसमें विष्णुभगवान्‌के चौबीसों अवतारोंके दर्शन होते हैं ।

भीमगोडा—यह हरिकी पैड़ीसे प्रायः एक मील उत्तरकी ओर ऋषिकेशवाली सड़कके बायीं ओर है । इसके ऊपरसे रेलवे लाइन गयी है । नीचे छोटा सा मंदिर और उसके आगे एक चबूतरा तथा पक्का कुण्ड है । कहते हैं, भीमसेनके घुटना दबानेसे यह कुण्ड उत्पन्न हो गया था ।

मायादेवी—यह मंदिर ग्यारहवीं शताब्दीका बना बतलाया जाता है । देवीकी प्रतिमा तीन शिर और पाँच भुजाओंकी है । इसके पास ही अष्टभुजी शिव और भैरवजीके भी मंदिर हैं । ये तीन मन्दिर बहुत पुराने बतलाये जाते हैं ।

आसादेवी—हरिद्वार स्टेशनसे थोड़ी दूर लाइनके दूसरी ओर एक पहाड़ी है । उसके ऊपर आसादेवीका मंदिर है । रास्ता दुर्गम है, परन्तु यहाँका दृश्य बहुत सुन्दर है ।

मायापुर—यह कनखल और हरिद्वारके बीचकी बस्ती है। प्राचीनकालमें पहले मायापुर या मायापुरी ही प्रधान नगर था। यह बहुत विस्तृत और वैभवसम्पन्न था। परन्तु अब केवल उसके कुछ खँडहर हैं, जिनमें प्राचीन मूर्तियाँ, ईंट एवं खम्मे आदि मिल जाते हैं। यहाँ राजा वेनकी उजड़ी हुई गढ़ी बनी हुई है।

सप्तसरोवर—यह हरिद्वारके उत्तरमें है। यहाँ गंगाजीकी सात धाराएँ हो गयी हैं। कहते हैं, इस स्थानपर सप्तर्षियोंने तप किया था और यहीं धृतराष्ट्र तथा विदुरजीने देहत्याग किया था। यहाँसे ज्वालापुरतककी बस्ती एक ही म्युनिसिपैल्टीके अधीन है जो यूनियन म्युनिसिपैल्टी कहलाती है। यह बस्ती ज्वालापुर, कनखल, मायापुर और हरिद्वार इन चार विभागोंमें बँटी हुई है।

नहरगंग—यह नहर मायापुरके पाससे श्रीगंगाजीसे निकाली गयी है। गंगाजीसे निकाली हुई नहरोंमें यह सबसे बड़ी है। यह कानपुरमें फिर गंगाजीमें ही मिल गयी है। इसके उद्गमस्थानके पास गंगाजीपर एक पुल बनाया गया है, जिसमें लोहेके बड़े-बड़े फाटक लगा दिये गये हैं। उन्हें बंद कर देनेपर गंगाजीका सारा जल नहरमें आ जाता है। वर्षाऋतुमें एक फाटक खुला रहता है, इसलिये नहरमें आवश्यकतासे अधिक जल नहीं आता।

प्रधान संस्थाएँ

ऋषिकुल—यह सनातनधर्मियोंकी प्रसिद्ध शिक्षा संस्था है। इसकी स्थापना सन् १९०६ ई०में हुई थी। यह मायापुरमें नहर और पक्की सड़कके किनारे है। इसमें प्राचीन शैलीसे वेद, वेदांग,

दर्शन, व्याकरण, ज्योतिष और आयुर्वेदादिकी शिक्षा दी जाती है। यहांके आयुर्वेदविभागको गवर्नमेण्टसे दश सहस्र वार्षिक सहायता मिलती है। इसमें डाक्टरीकी भी शिक्षा दी जाती है तथा शिक्षा समाप्त कर लेनेपर विद्यार्थीको L M S की उपाधि मिलती है। साथ ही अंग्रेजी, गणित, भूगोल और शिल्पकलादि सामयिक विषय भी पढ़ाये जाते हैं। इस संस्थामें बालकके चरित्रगठन और धार्मिक संस्कारोंपर विशेष ध्यान रक्खा जाता है। यहाँ २००के लगभग ब्रह्मचारी हैं। ब्रह्मचारियोंसे २००) प्रारम्भिक व्यय और १००) वार्षिक लिया जाता है। इसके संस्थापक रायसाहब पं० दुर्गादत्त पन्त हैं।

गुरुकुल—यह आर्यसमाजियोंकी प्राचीन पद्धतिकी सबसे बड़ी संस्था है। इसे सन् १९०८ई०में महात्मा मुंशीरामजीने (जो पीछे स्वामी श्रद्धानन्दजीके नामसे प्रसिद्ध हुए थे) स्थापित किया था। यह संस्था उत्तरोत्तर उन्नति कर रही है। इसमें अब लाखों रुपयेकी इमारत बन गयी है। यह पंजाबप्रतिनिधिसभाके अधीन है। अबतक इससे प्रायः २०० स्नातक निकल चुके हैं। उनमेंसे अधिकांश धर्मप्रचार तथा शिक्षासम्बन्धी क्षेत्रोंमें कार्य कर रहे हैं। किन्हीं किन्हींकी साहित्यिक सेवा भी स्तुत्य है। यह संस्था स्वतन्त्र जीवननिर्वाहका मार्ग दिखानेवाली है। इसके स्नातकोंकी विद्यालंकार, वेदालंकार, सिद्धान्तालंकार, तर्कालंकार, आयुर्वेदालंकार आदि उपाधियाँ होती हैं।

ज्वालापुर महाविद्यालय—यह भी आर्यसमाजकी ही संस्था है। गुरुकुलकी अपेक्षा इसमें प्राचीन संस्कृतिपर विशेष ध्यान रक्खा जाता है। इसमें संस्कृत साहित्यकी उच्च कोटिकी शिक्षा दी जाती है। इस [illegible] १२ सालका है। इसके ब्रह्मचारी काशी, कलकत्ता और

जाते और यहाँकी धर्मशालाओंमें रहते हैं और उन्हें विद्याध्ययनकी सुविधा दी जाती है। इन संस्थाओंमें ब्रह्मचारियोंसे कोई शुल्क नहीं लिया जाता। इसीके अन्तर्गत एक वानप्रस्थाश्रम है। जो आदरणीय सज्जन व्यावहारिक जीवनसे अलग रहकर भजन और स्वाध्यायमय जीवन बिताना चाहते हैं उन्हें उसमें कुटी बनाकर रहनेके लिये स्थान मिल सकता है।

संस्कृतपाठशालाएँ—हरिद्वारमें संस्कृतपाठशालाएँ बहुत हैं। सम्भवतः संस्कृतशिक्षाकी दृष्टिसे काशीके बाद हरिद्वारका ही नम्बर है। इन पाठशालाओंमें विद्यार्थियोंसे कोई शुल्क नहीं लिया जाता, बल्कि उनमें विभिन्न प्रकारसे उन्हें कुछ सहायता दी जाती है। यों तो यहाँ ऐसी बहुत-सी पाठशालाएँ हैं, परन्तु उनमें पं० बल्लीरामकी पाठशाला, हरीराम गोयनका-पाठशाला, भगवानदास बागलाविद्यालय, पं० हरिनामसंस्कृतपाठशाला, पारीकसंस्कृतमहाविद्यालय तथा इंदौर राजकीय पाठशाला आदि प्रधान हैं।

अन्य संस्थाएँ

साधुआश्रम—यहाँ साधुआश्रम भी बहुत हैं। उनमेंसे अधिकांशमें भोजनादिकी भी व्यवस्था है। किन्हीं किन्हींमें अपने अपने सम्प्रदायके साधुओंको भिक्षा दी जाती है और कुछ ऐसे भी हैं जिनमें किसी भी सम्प्रदायके साधु भिक्षा पा सकते हैं। ऐसे आश्रमोंमें बाबा कालीकमलीवालेका क्षेत्र और सिंध पंजाब क्षेत्र प्रधान हैं। अन्य आश्रमोंमें चेतनदेव अवधूतकी कुटी, दादूबाग, महामण्डलाश्रम, अवधूतमण्डलाश्रम, हरिहराश्रम, भोलागिरिआश्रम

योगाश्रम और गुरुमण्डलाश्रमादि प्रधान हैं। इनमेंसे कई आश्रमोंमें पाठशालाएँ भी हैं।

श्रीरामकृष्णसेवाश्रम—यह आश्रम कनखलमें है। श्रीरामकृष्णमिशन सेवाको ही अपना प्रधान धर्म समझता है। उससे दीक्षा प्राप्त करनेवाले सन्यासी और ब्रह्मचारी किसी न-किसी प्रकारका सेवाकार्य ही किया करते हैं। इस कार्यके लिये भारतके प्रधान प्रधान स्थानोंमें उनके सेवाश्रम हैं। सयुक्तप्रान्तमें हरिद्वारका सेवाश्रम बहुत बड़ा है। काशीके बाद इसका ही नम्बर है। इसमें असहाय और दीन पुरुषोंकी चिकित्साका कार्य होता है और उनकी सब प्रकारकी सेवा बड़े प्रेमसे की जाती है। इस आश्रमका कार्य बड़ा ही सराहनीय और अनुकरणीय है।

सेवासमितिबालचरमण्डल—इसका दफ्तर हरिकी पैड़ियोंके दाहिनी ओर है। यह सस्था प्रयागसेवासमितिके अधीन है। बड़े-बड़े उत्सव और पर्वोपर यह बड़ा काम करती है। इसकी ओरसे एक छोटी डिसपेंसरी भी है।

वायुयानयात्राकम्पनी—सन् १९३६ ई० से हरिद्वारसे हवाई जहाजद्वारा बदरी-केदारकी यात्राका प्रबन्ध किया गया है। परन्तु इन दोनों स्थानोंमें जहाजके उतरनेयोग्य मैदान नहीं है। इसलिये केदारके दर्शनार्थियोंको अगस्त्यमुनि और बदरीनाथके यात्रियोंको गौचरचट्टीपर उतरना पड़ता है जो हरिद्वारसे क्रमश १०५ और ११०मील दूर हैं। इन स्थानोंपर हवाई जहाजद्वारा यात्री १-१ घंटेमें ही पहुँच जाता है। जो यात्री हवाई जहाजद्वारा अगस्त्यमुनिमें उतरकर वहाँसे ... द्वारा केदारनाथ और बदरीनाथके...

दर्शन कर फिर गौचर लौटना चाहे उसे २२६ मीलकी यात्रा करनी होगी। जो गौचर उतरकर केवल बदरीनाथजी दर्शन करके लौटना चाहे उसे १४० मील चलना पड़ेगा। जहाजका किराया हरिद्वारसे अगस्तमुनि और गौचरतकका एक ओरका ४५ ४५ लगता है। यदि आने-जाने दोनों ओरकी यात्रा जहाजमें ही की जाय तो ७५) लगता है। और जो जहाजमें बैठे बैठे आकाशसे ही बदरीनाथ और केदारनाथके दर्शन करना चाहें उन्हें १७५) मात्र देना होता है। गौचर या अगस्तमुनिमें जहाजसे उतरनेवाले यात्रीके लिये कुली और डाँडी आदिका प्रबन्ध हो सकता है, किन्तु इसकी सूचना जहाजकी कम्पनीको नीचे लिखे पतेपर एक सप्ताह पूर्व दे देनी चाहिये—

दी हिमालय एयर ट्रांसपोर्ट एण्ड सर्वे लिमिटेड,

नई दिल्ली।

इस कम्पनीका तारका पता Air Transpa है और फोन नं० ३२५७ है। ऊपर जो किराया दिया है वह दो मनतकका है। यदि यात्री और उसका बोझा दो मनसे अधिक होता है तो अधिक बोझेका १) सेरके हिसाबसे और किराया लगता है। इस यात्रामें केवल समय और श्रमकी ही बचत होती है परंतु तीर्थयात्राका महत्त्व और आनन्द तो पैदल यात्रा करनेमें ही है। इसलिये जो चल सकते हैं उन्हें तो पैदल ही यात्रा करनी चाहिये। डाँडी या झप्पान आदिसे यात्रा करनेसे भी मार्गका अच्छा आनन्द मिल सकता है। इससे गरीब लोगोंकी आजीविकामें भी सहायता हो जाती है। अस्तु, जिनकी जैसी रुचि हो वे उसी प्रकार यात्रा कर सकते हैं।

उत्सव और मेले

हरिद्वारमें यों तो प्रत्येक अमावास्या और पूर्णिमा आदि तिथियों-पर यात्रियोंकी भीड़ रहती है, फिर भी कुछ तिथियाँ ऐसी हैं जिनपर यहाँके स्नानका विशेष महत्त्व समझा जाता है। लोगोंका विश्वास है कि श्रीगंगाजी मेषकी संक्रान्तिके दिन ब्रह्मलोकसे भूतलपर उतरी थीं, इसलिये उस दिन यहाँ बड़ा उत्सव होता है। लाखों यात्री एकत्रित होते हैं तथा घोड़ोंका क्रय-विक्रय होता है। ज्येष्ठमासका गंगादशहरा गंगाजीका जन्मदिन है। इसलिये उस दिन भी यहाँ बड़ी खुशी मनायी जाती है। इनके सिवा सोमवती अमावास्या और वारुणी पर्वपर भी यहाँके स्नानका बड़ा महत्त्व है। उस समय भी काफी भीड़ होती है।

कुम्भमेला—यहाँका सबसे बड़ा मेला कुम्भका है। यह प्रति बारहवें वर्ष कुम्भके बृहस्पति होनेपर आता है। इसके बीचमें छः वर्ष बाद अर्धकुम्भी आती है। उसपर भी बड़ी भीड़ होती है। कुम्भके अवसरपर ब्रह्मकुण्डमें स्नान करनेका बड़ा माहात्म्य है। इसलिये उस समय यहाँ बड़ी भीड़ होती है। पर्वके समय असंख्य नर-नारी हरकी पैड़ियोंपर ही स्नान करनेको टूट पड़ते हैं। पहले इस संघर्षमें सैकड़ों मनुष्य दबकर मर जाते थे, किन्तु अब उसका यथासाध्य सुप्रबन्ध किया गया है। हरकी पैड़ीका घाट बहुत बढ़ा दिया गया है तथा भिन्न भिन्न सम्प्रदायके साधुओंके लिये स्नानका समय भी निश्चित है। एक सम्प्रदायके लिये निश्चित समयमें कोई दूसरा व्यक्ति नहीं आ सकता।

कुम्भ मेलेपर हरिद्वारमें कई लाख यात्री एकत्रित होते हैं। यहाँ स्थानका संकोच है, इसलिये गंगाजीके ऊपर नावोंका पुल बनाकर दूसरी ओर बाजार लगाया जाता है और बहुत-से यात्री भी उसी ओर ठहरते हैं। इस समय यहाँ भिन्न भिन्न सम्प्रदायोंके लाखों साधु, राजा-महाराजा गृहस्थ तथा ब्रह्मचारी आदि आते हैं। दूर-दूरसे सभी प्रकारकी दूकानें आती हैं। तथा जगह-जगह अन्नक्षेत्र, औषधालय और सेवा समितियोंके दफ्तर खोल दिये जाते हैं। यह मेला बराबर एक मासतक रहता है। कोई-कोई सज्जन पूरे महीने रहकर कल्पवास करते हैं।

हरिद्वार सात मोक्षदा पुरियोंमेंसे है। इसलिये बहुत-से लोग यहाँ प्राणपरित्यागके लिये भी रहते हैं। शास्त्रोंमें इस क्षेत्रकी बड़ी महिमा है। उत्तराखण्ड अनादिकालसे बड़े-बड़े महापुरुषोंकी तपोभूमि रहा है। हरिद्वार उसका मुख है। इस पवित्र स्थानकी जितनी महिमा कही जाय थोड़ी ही है। यहाँ अनेकों औषधालय, अन्नक्षेत्र, डाकखाना, तारघर, कन्याविद्यालय और पाठशालाएँ हैं। संन्यासियोंकी तो यह राजधानी है। इतने संन्यासी भारतवर्षमें सम्भवतः अन्यत्र नहीं मिलेंगे। जलवायु भी यहाँका बहुत ही स्वास्थ्यप्रद है। बाजारमें सामान भी सब प्रकारका मिल जाता है।

सत्यनारायण

हरिद्वारसे उत्तरकी ओर चलनेपर प्राय चार मीलकी दूरीपर श्रीसत्यनारायणजीका सुप्रसिद्ध मन्दिर आता है। यह हरिद्वारसे ऋषिकेश जानेवाली सडकपर रायवाला स्टेशनसे प्राय एक मील है। भगवान्की झाँकी बडी ही मनोहर है। स्वच्छ सङ्गमरमरकी मूर्ति है, जिसमें कुछ पीली-पीली झलक मारती है। मन्दिर सतलालजी सिन्धीकी माता श्रीकरमोबाईजीका बनवाया हुआ है। इसकी लागत ५०००) के लगभग है। इसके आस पास कई धर्मशालाएँ हैं तथा एक कुण्ड भी है, जिसमें पहाड़ी चश्मोंसे जल आता है। यह स्थान बड़ा ही मनोरम और दर्शनीय है।

ऋषिकेश

हरिद्वारसे ऋषिकेश जानेके लिये पक्की सड़क और रेलवे लाइन दोनों प्रकारके मार्ग हैं। सड़कसे यह पन्द्रह मील दूर पड़ता है और रेलवेसे तेईस मील। भगवती भागीरथीके दक्षिण तटपर चारों ओर पर्वतमालासे घिरी हुई यह पावन पुरी बड़ी ही मनोहर जान पड़ती है। स्कन्दपुराणमें लिखा है कि इसी स्थानपर भगवान् विष्णुने मधुकैटभादि दैत्योंका संहार और रैभ्य ऋषिका उद्धार किया था।

तभीसे इसका नाम ऋषिकेश हुआ। यह स्थान बहुत प्राचीन कालसे ही बड़े-बड़े महात्मा और योगियोंका तपोभूमि रहा है। पहले यहाँ सघन वन और महात्माओंकी कुटियाँ ही थीं किंतु अब तो यह अच्छा कस्बा हो गया है और सभी प्रकारकी आवश्यक सामग्री यहाँ मिल जाती है। यहाँकी अधिकांश इमारतें धर्मशालाएँ और साधु-आश्रम ही हैं तथा बस्ती भी अधिकतर इन्हीं संन्यासियोंकी ही है।

त्रिवेणीस्नान—ऋषिकेशमें सबसे प्रसिद्ध प्रधान घाट त्रिवेणी तट है। यहाँ श्रीगङ्गाजीमें एक पक्का नाला गिरता है। पास ही कुछ ऊँचाईपर श्रीरामचन्द्रजीका मन्दिर और एक कुण्ड है, जिसे कुब्जाम्रक अथवा ऋषिकेशकुण्ड भी कहते हैं। गङ्गाजीमें स्नान करनेके पश्चात् गीले वस्त्रसे ही इस कुण्डमें स्नान किया जाता है। इस कुण्डमें तीन धाराओंका जल आता है, जो गङ्गा, यमुना और सरस्वती कही जाती है। इसमें स्नान करनेसे त्रिवेणीस्नानका फल मिलता है।

स्वामी विशुद्धानन्दजी बाबा कालीकमलीवालोंको है। ये बड़े विरक्त और निष्ठावान् महात्मा थे। उत्तराखण्डकी यात्रामें बड़े-बड़े कष्टोंका सामना होते देख आपके करुण हृदयमें उनकी निवृत्तिका सङ्कल्प उठा और उसकी पूर्तिके लिये आपने इस महान् संस्थाकी स्थापना की। ऋषिकेशमें इसका प्रधान कार्यालय है। इसे देशके बड़े-बड़े धनी मानी लोगोंका सहयोग प्राप्त है। इस संस्थाने उत्तराखण्डमें आवश्यकतानुसार बहुत-से अन्नसत्र, धर्मशाला, औषधालय, अनाथालय, विद्यालय, पौशाला और वाचनालय स्थापित किये हैं। स्थान-स्थानपर इसकी बहुत-सी शाखाएँ हैं। उनके नाम हुण्डी-परचा करा लेनेसे यात्रियोंको अपने साथ रुपया पैसा रखनेकी जोखिममें भी पड़ना नहीं होता। यात्रा करनेवाले साधुओंको बाबाजीकी चिट्ठी मिल जानेपर प्रत्येक चट्टीपर भिक्षाकी सुविधा हो जाती है तथा गृहस्थोंको भी बाबाजीकी चिट्ठी ले लेनेपर प्रत्येक पड़ावपर अपने ठहरनेकी व्यवस्थामें विशेष सुविधा रहती है। इस संस्थासे जनताका बड़ा उपकार हुआ है। श्रीविशुद्धानन्दजीके पीछे इसके सञ्चालनका भार बाबा रामनाथजीपर रहा था। उन्होंने इसकी बड़ी उन्नति की थी, उनके पीछे इसका प्रबन्ध एक कमिटीको सौंप दिया गया है, जिसके प्रधान बाबा मनीरामजी हैं। उत्तराखण्डके यात्रियोंको बाबाजीकी चिट्ठी अवश्य ले लेनी चाहिये, उसके साथ ही उन्हें उत्तराखण्डके जलकी लागसे सुरक्षित रखनेवाली एक औषध भी मिलती है।

सिन्ध पंजाब-क्षेत्र—यह भी उत्तराखण्डकी एक प्रधान संस्था है और इसका प्रधान कार्यालय भी यहीं है। जो जो कार्य बाबा

कालीकमलीवालेके क्षेत्रद्वारा होते हैं वे ही यह भी करती है। इसकी स्थापना उसके पीछे हुई है और इसका कार्यक्षेत्र भी उसकी अपेक्षा कुछ कम है।

कैलासाश्रम—ऋषिकेशमें जो साधुओंके आश्रम हैं उनमें कैलासाश्रम प्रधान है। इसके संस्थापक श्रीस्वामी धनराजगिरिजी महाराज थे। यह दशनामी संन्यासियोंका स्थान है और इसमें श्रीशङ्कराचार्य और भगवान् शङ्करके दर्शनीय मन्दिर हैं।

गङ्गाक्षेत्र—कैलासाश्रमके सामने गङ्गाक्षेत्र है। इसमें सायंकालमें महात्माओंको भिक्षा मिलनेकी व्यवस्था है।

मुनिकी रेती—कैलासाश्रमसे आगे मुनिकी रेतीनामक स्थान है। यह टेहरी राज्यके अन्तर्गत है। यहाँ यात्रियोंका सामान तौलकर कुलीको सौंपनेसे पहले उसका नाम-पता लिखकर उसपर कुलीके हस्ताक्षर कराकर एक चिट्ठी यात्रीको दे दी जाती है और उसी प्रकार दूसरी चिट्ठी यात्रीके हस्ताक्षर कराकर कुलीको दे देते हैं। इस कुलीके भागने अथवा चोरी करनेका भय नहीं रहता। जो यात्री पैदल नहीं चल सकते उन्हें डाँडी, झप्पान या कण्डी किरायेपर करनी होती है। उनका प्रबन्ध भी यहाँ सुभीतेसे हो सकता है। इन तीनों सवारियोंमें डाँडी विशेष सुविधाजनक एवं सुन्दर होती है। इसमें यात्री कुरसीकी तरह बैठ सकता है, तथा थोडा-सा सामान भी रख सकता है। धूप तथा वर्षासे बचनेके लिये इसमें ऊपर टीन भी लगा होता है। जो लोग डाँडी नहीं कर सकते वे झप्पान कर लेते हैं। यह एक पीढेके समान होता है। इसके दोनों

और लम्बे लम्बे बाँस कसे रहते हैं, जिन्हें कंधेपर रखकर चार कुली इसे उठाते हैं। इससे भी सस्ती कण्डी होती है। इसे एक ही कुली उठाता है और इसमें बैठनेवाले यात्रीको भी वैसी सुविधा नहीं रहती। यह कुलीकी पीठपर रहती है और इसमें बैठनेवाले यात्रीका मुख पीछेकी ओर रहता है।

ऋषिकेशसे केदारनाथ होकर बदरीनाथ जाने-आनेका मार्ग प्राय एक मासका है। इसका कण्डीका भाड़ा प्राय ३०), झप्पानका प्राय १००) और डाँडीका प्राय १२५) होता है। इसके सिवा कुलियोंकी खूराक और इनामका खर्चा और भी लगता है। यदि यमुनोत्तरी-गङ्गोत्तरी होकर यात्रा करनी होती है तो किराया और भी अधिक लगता है। बोझेका भाड़ा प्राय १) प्रति सेर लगता है।

रामाश्रम—यह ब्रह्मलीन स्वामी रामतीर्थकी पुण्यस्मृतिमें स्थापित किया हुआ एक पुस्तकालय है।

धन्वन्तरिमन्दिर—यह ऋषिकेश और मुनिकी रेतीके बीचमें है। इसमें आयुर्वेदिक विद्यालय और औषधालय भी हैं।

स्वर्गाश्रम—रामाश्रमके सामने गङ्गाजीके दूसरे तटपर यह एक सुप्रसिद्ध और सुरम्य स्थान है। श्रीगङ्गाजी और पर्वतमालाके बीचमें प्राय डेढ़ मीलतक सैकड़ों कुटियाँ और धर्मशालाएँ बनी हुई हैं, जिनमें सैकड़ों महात्मा और गृहस्थ यात्री निवास करते हैं। यह स्थान तपोभूमिके अन्तर्गत है। कनखलसे लक्ष्मणझूलातकके स्थानको तपोभूमि कहते हैं। इस आश्रमके जन्मदाता स्वामी

आत्मप्रकाशजी थे। उन्होंने इस स्थानकी महत्ता प्रदर्शित करते हुए जनताको यहाँ आश्रम स्थापित करनेके लिये प्रेरित किया। तब सबसे पहले मामराज रामभगत डालमिया चिड़ावावालोंने इस आश्रमकी प्राय दो मील लम्बी भूमि यहाँके जमींदारोंसे खरीद की। अब इस स्थानपर कुटियोंके अतिरिक्त अलग अलग भण्डार, पुस्तकालय और बहुत से सुन्दर-सुन्दर निवासगृह बन गये हैं। यहाँ बहुत से सन्यासी और साधुलोग भजन करते हैं। उनकी सुविधाके लिये एक अन्नक्षेत्र और सदावर्त खुला हुआ है।

यहाँकी रमणीयता और शान्तिमय वातावरणको देखकर इस स्थानपर दिनोदिन कुटियोंकी संख्या बढ़ती जाती है। इस स्थानतक पहुँचनेके लिये आश्रमकी ओरसे एक नौका नियुक्त है, जो हर समय गङ्गाके आर पार आती-जाती रहती है। इसमें यात्रा करनेसे यात्रीको कोई महसूल नहीं देना पड़ता। स्वर्गाश्रममें जहाँ नौका लगती है वहाँपर रामकुण्ड नामका एक पक्का घाट है। उसके पास ही श्रीरामेश्वर महादेवकी मनोहर झाँकी होती है।

उत्तराखण्डकी यात्रा ऋषिकेशसे ही आरम्भ होती है। यहाँसे यात्राके कई मार्ग जाते हैं। यात्री अपनी इच्छाके अनुसार उनमेंसे किसी भी मार्गसे यात्रा कर सकते हैं।* यात्रा करनेसे पूर्व यात्रियों-

* मार्गोंका विवरण गीताप्रेससे प्रकाशित 'श्रीबदरी-केदारकी झाँकी'में दिया है।

को निम्नलिखित सामग्री हरिद्वार या ऋषिकेशसे एकत्रित कर लेना चाहिये।

२ ऊनी कम्बल।
जोड़ा ऊनी पायताव।
१ बाँसकी लाठी।
२ जोड़ा रबड़के तल्वेके जूते।
१ छाता।
१ मोमी कपड़ा, सामानको वर्षासे बचानेके लिये।
१ लालटेन।
६ मोमबत्ती।
१ छोटी बाल्टी।
१ लोटा।
२ सेर मेवा।
पिसा हुआ मसाला।

कुलियोंके भाड़े आदिसे अलग कम-से-कम ५०) भोजन खर्चके लिये।

ऋषिकेशसे केदारनाथ

लक्ष्मणझूला

बदरी-केदारकी यात्रा करनेवाले अधिकांश यात्री लक्ष्मणझूला-देवप्रयाग होकर ही जाते हैं। जिन्हें यमुनोत्तरी और गङ्गोत्तरीकी भी यात्रा करनी होती है वे देहरादून या नरेन्द्रनगर होकर भी जाते हैं। उन मार्गोंकी अपेक्षा उन्हे लक्ष्मणझूला-देवप्रयागवाला मार्ग बहुत लम्बा पड़ता है। परन्तु तीर्थप्रेमियोंको तो इसी मार्गसे यात्रा करनी चाहिये, क्योंकि इसमें श्रीगङ्गाजीका साथ रहता है और कई तीर्थ भी आते हैं।

ऋषिकेशसे लक्ष्मणझूला प्रायः तीन मील है। यहाँ श्रीलक्ष्मणजीके दर्शन होते हैं। तथा गङ्गाजीको पार करनेके लिये एक झूलता हुआ पुल है। यहा गङ्गाजी चट्टानोंसे टकराती हर-हर ध्वनि करती एक सङ्कुचित घाटीमे होकर बहती हैं। यहाँतक वे दोनो ओर पर्वतमाला-से घिरी हुई हैं। इससे आगे पर्वतोंने उन्हें कुछ खुलकर बहनेका अवकाश दे दिया है। पाट चौड़ा होनेपर भी गहराई बहुत अधिक है तथा जलकी गति भी तेज है। इसलिये उसे थाह नहीं उ

सकता । यही कारण है कि यहाँका पुल खम्भोंके ऊपर नहीं बनाया गया । दोनों तीरोंपर लोहेके ऊँचे ऊँचे खम्भे गाड़े दिये गये हैं । उनमें सो गजके अन्तरपर लोहेके तारोंके मोटे मोटे रस्से बाँध दिये हैं, जिनमें लोहेके मोटे मोटे सीकचे लगे हुए हैं । ऊपर काठके तख्तोंका पुल बनाया गया है और ऊपरसे कंकरेट मिली हुई सीमेण्ट बिछा दी गयी है । पहला पुल सन् १९२४ की बाढ़में बह गया था । तब कुछ समयतक यात्रियोंको नौकामें गङ्गाजी पार करना होती थीं । प्रस्तुत पुल कलकत्तेके सेठ राय सूरजमलजीने अपने पिताजीकी स्मृतिमें बनवाया है । यह बहुत सुन्दर और सुदृढ़ है । इसका उद्घाटन युक्तप्रान्तके गवर्नर सर माल्कम हेलीने ११ अप्रैल सन् १९३० में किया था । यहाँ जो शिलालेख है उसमें यह भी लिखा है कि इस पुलको पार करनेका कभी कोई कर नहीं लिया जायगा ।

लक्ष्मणझूला पार करनेपर श्रीबदरीकेदारका मार्ग मिलता है । जो यात्री पैदल नहीं जाना चाहते वे ऋषिकेशसे देवप्रयागतक लारीमें जा सकते हैं । पैदलके रास्ते ऋषिकेशसे देवप्रयाग ४५ मील है, किन्तु मोटरके रास्ते कुछ अधिक दूर पड़ता है तथा ५) प्रति यात्री भाड़ा लगता है । मोटरसे जानेवाले यात्री कुली आदिका प्रबन्ध देवप्रयागमें भी कर सकते हैं । हम तो पैदलके रास्तेसे ही यात्राका वर्णन करेंगे ।

झूलाके उस पार सातातुण्ड और सूर्यकुण्ड हैं । कई धर्मशालाएँ और साधु आश्रम उस तटकी शोभाको और भी बढ़ा देते हैं । थोड़ा आगे बढ़नेपर दायें हाथको श्रीसत्यनारायणजीका

अति मनोहर मन्दिर दृष्टिगोचर होता है । इनके सिवा एक पाठशाला और सदावर्त भी है । यहाँसे दो मील आगे गरुडचट्टी है ।

गरुडचट्टीसे महादेवसैणचट्टी (८॥ मील)

गरुडचट्टीकी प्राकृतिक शोभा बड़ी ही मनोरम है । यहाँ केला तथा आमके सहस्रों वृक्ष लगे हुए हैं । यात्रियोंके ठहरनेके लिये एक दोमंजिली धर्मशाला है । उसके पास ही श्रीगरुडजीका सुंदर मंदिर है । भगवान् गरुडकी श्यामवर्ण प्रतिमा अत्यन्त दर्शनीय है, उनके पंजोंमें सर्प दिखायी देते हैं । मंदिरके समीप एक स्वच्छ जलका झरना गिरता है, जो एक पक्के सरोवरके रूपमें परिणत हो जाता है । इस सरोवरमें कटिप्रदेशतक जल रहता है । इससे अधिक होनेपर सरोवरसे निकलकर श्रीगङ्गाजीमें गिर जाता है । इसलिये उसकी निर्मलतामें कोई अन्तर नहीं पड़ता । गर्मियोंमें बहुत से यात्री ऋषिकेशसे इस स्थानकी शोभा निहारनेके लिये आते हैं और गरुडजीकी सायंकालिक आरतीमें सम्मिलित होते हैं ।

यहाँसे दो मीलकी दूरीपर फूलचट्टी है । यह स्थान भजनानन्दी पुरुषोंके लिये बहुत उपयुक्त है । ठीक गङ्गाजीके तटपर स्थित है तथा पीपलके वृक्षकी सघन छाया है । यहाँ फूलनदी और भागीरथी-का सङ्गम होता है । आगे फूलनदीके झूलेके पुलसे पार करके तीन मील जानेपर गूलरचट्टी आती है । इसके पास हीरल नदी बहती है, उसके ऊपर रसोई आदि बनानेका सुभीता रहता है । यहाँसे [illegible] होती है और ढाई मील चलनेपर महादेवसैणचट्टी [illegible] पञ्चायती धर्मशाला है और भगवानदास सीतारामजी

रगूनवालोंकी ओरसे सदावर्त लगा हुआ है। यात्राके दिनोंमें पौसाला भी लगा दी जाती है।

इस प्रकार लक्ष्मणझूलासे महादेवसैणतक साढ़े आठ मील मार्ग चलकर यात्री ठहर जाते हैं। जो अधिक चलना चाहें वे आगे ठहर सकते हैं।

महादेवसैणसे वन्दरचट्टी (१२॥ मील)

महादेवसैणसे आधा मील नागमोहनचट्टी है। यहा पाँच सात दूकान और पानीका नल है। रातमें ठहरने और भोजन बनानेका सुपास है। इससे डेढ़ मील आगे जामालचट्टी और उससे डेढ़ मील आगे बीजनीचट्टी है। यहा सघन वृक्षोंकी छाया और स्वच्छ जलका नल है। इस स्थानपर भारवाही कुलीलोग विश्राम किया करते हैं। फिर सात मीलकी चढ़ाई उतराईके पश्चात् कुण्डचट्टी आती है। बीचमें चाइघालचट्टी पड़ती है। गूलरचट्टीके पश्चात् श्रीगङ्गाजीकी धारा दूर पड़ जाती है। यहा पहुँचनेपर पर्वतकेऊपरसे उसका दर्शन होता है। इससे आगे तीन मीलकी उतराईके पश्चात् वन्दरभेल्चट्टी आती है। यह बिल्कुल गङ्गाजीके तटपर है। यहातक साढ़े बारह मीलकी यात्रा पूरी करके यात्री विश्राम करते हैं।

वन्दरचट्टीसे व्यासघाट (१२॥ मील)

वन्दरभेलसे तीन मील महादेवचट्टी है। यहा शिव-पार्वतीका छोटा सा मंदिर और मोदियोंकी दूकानें हैं। यह चट्टी एक ऊँचे स्थानपर स्थित है।

यहासे ढाई मील आगे ओखल्घाट और उससे एक मील आगे सम्भाळ चट्टी है। इसके आस-पास आम, अनार, कचनार, केला आदिके वृक्ष और अनेकों जङ्गली लताएँ सुशोभित हैं। यात्राके दिनामें यहाँ गुरमुखरामजी अमृतसरवालोंकी ओरसे पौसाला लगा दी जाती है।

इससे दो मील आगे खण्डा चट्टी है। और फिर एक मील आगे काण्डी चट्टी आती है। इसकी बस्ती अन्य चट्टियोंका अपेक्षा बड़ा है, अधिकाश दूकानें दो मंजिला हैं। इनकी सजावट भी अच्छी है। एक बड़े झरनेसे काटकर बस्तीकी दूसरी ओर नलकी धारा लायी गयी है। इससे बस्तीके दोनो ओर जल मिलनेकी सुविधा हो गयी है। यहा जवाहिर नामके किसी धनी पुरुषका बनवाया हुआ एक श्रीगोपालजीका मन्दिर है। इनके सिवा एक बगीचा और अस्पताल भी है।

काण्डी चट्टीसे एक मील आगे भैरोंघाल चट्टी है। यहा शुक्लेश्वरी और गणेशजाके मन्दिर हैं। इस स्थानपर भैरोंजीने तप किया था। श्वेत गुलाब तथा अन्य रंग बिरंगे फूलोंवाले वृक्ष इस स्थानका शोभा बढ़ा रहे हैं।

भैरोंघाटसे दो मील आगे व्यासघाट चट्टी है। यह भागीरथी और व्यासगङ्गाके सङ्गमपर स्थित है। चट्टीपर पहुँचनेसे पहले व्यासगङ्गाका झूलता हुआ पुल पार करना होता है। यह पुल भी लक्ष्मणझूला पुलके निर्माता राय सूर्यमलजीका ही बनवाया हुआ है। यहाँ बाबा काली कमलीवालोंका धर्मशाला है और जेठा भाई मूलचन्द फक्तवालोंकी ओरसे सदावर्त लगा हुआ है। धर्मशाला बहुत

सुन्दर और हवादार है। यह व्यासजीका तप स्थान है। कहते हैं इससे मन्दिरमें भगवान् व्यासजी श्यामवर्ण प्रतिमाके दर्शन होते हैं। यह बड़ा पवित्र तीर्थ है। इस प्रान्तमें सूर्य अथवा चन्द्रग्रहणके अवसरपर यहाँ स्नान करनेका विशेष महत्त्व समझा जाता है। कहते हैं, वृत्रासुरका वध करनेकी कामनासे देवराज इन्द्रने भी इसी स्थानपर तप किया था। यहाँ डाकखाना भी है।

व्यासघाटसे देवप्रयाग (९ मील)

व्यासघाटसे साढ़े तीन मील उमरासू चट्टी और उससे दो मील उमरासू चट्टी है। ये दोनों चट्टियाँ बहुत छोटी हैं। फिर दो मीलपर सोड़ चट्टी है। इस चट्टीका नल खूब जल देनेवाला है तथा गङ्गाजी भी पास ही बहती हैं। यहाँ वृक्षोंकी छाया है और बिच्छुओंका जोर है।

सोड़ चट्टीसे डेढ़ मील देवप्रयाग है। यह इस प्रान्तका एक अच्छा रमणीय कस्बा है। यहाँ भागीरथी और अलकनन्दाका सङ्गम होता है। यहाँके बाजारमें सब आवश्यक वस्तुएँ मिल जाती हैं। यहाँ डाकखाना, पुलिसस्टेशन, तारघर और कई धर्मशालाएँ हैं। बाबा कालीकमलीवालोंकी धर्मशालामें सदावर्त भी है। देवप्रयाग और इसके आस पासके गाँवोंमें ही बदरीनाथके अधिकांश पण्डोंके घर हैं। इन घरोंकी संख्या चार सौके लगभग है। अलकनन्दाके पश्चिम ओर टेहरी स्टेट है और पूर्वकी ओर ब्रिटिश राज्य है। अलकनन्दा और भागीरथीका सङ्गम ही यहाँका प्रधान तीर्थस्थान है। यात्रालोग अलकनन्दाका लोहेका पुल पार करके सङ्गमपर

पहुँचते हैं। सङ्गम स्थानतक पहुँचनेके लिये नीचे सीढ़ियोंसे उतरकर जाना होता है। इस स्थानपर पहुँचकर चित्तमें बड़ा आनन्द होता है। दोनों सरिताओंका जल ऐसे वेगसे मिलता है कि उसमें घुसकर स्नान करनेसे बह जानेकी आशङ्का होती है। जिस उल्लासके साथ अलकनन्दा अपने कलेवरको अपनी बड़ी बहिन भागीरथीमें लीन कर देती है वह देखने ही बनता है। सङ्गमम स्नान करके यात्रीलोग वेताल शिलापर श्राद्ध करते हैं। इसके ऊपरकी ओर एक राममन्दिर है। उसमें भगवान् राम और जानकीजीकी मनोहर मूर्तियोंके दर्शन होते हैं। कहते हैं, इनकी स्थापना भगवान् शङ्कराचार्यने की थी। परिक्रमामें अन्य देवी देवताओंकी मूर्तियाँ भी हैं। इस मन्दिरमें एक रघुनाथ पाठशाला भी है। मन्दिरका प्रबन्ध एक कमिटीसे होता है तथा इसकी सेवा-पूजाके लिये टेहरी-दरबारकी ओरसे कुछ गाँव लगे हुए हैं।

यहाँसे एक रास्ता भागीरथीका पुल पार करके बायीं ओरसे गङ्गोत्तरी-यमुनोत्तरीको जाता है। किन्तु जिन लोगोंको केवल बदरी-केदारकी ही यात्रा करनी होती है वे अलकनन्दाके इस ओरके मार्गसे ही जाते हैं। गङ्गोत्तरीकी सड़ककी अपेक्षा यह मार्ग विशेष सुविधाजनक है। देवप्रयागसे बदरीनाथ १२६ मील, केदारनाथ ९३ मील, गङ्गोत्तरी १३० मील, यमुनोत्तरी ११३ मील और हरिद्वार ५७ मील है।

देवप्रयागसे श्रीनगर (१९ मील)

अब यात्रियोंको श्रीभागीरथीका साथ छोड़कर रुद्रप्रयागतक श्रीअलकनन्दाजीके किनारे किनारे यात्रा करनी होती है। देवप्रयागसे तीन मीलपर सिपाकोटि और वहाँसे तीन मील आगे रानाकोटि चट्टी आती है। फिर रानाकोटिसे तीन मीलपर रानीबाग चट्टी है। पहले यहाँ किसी रानीका लगाया हुआ बाग था, परन्तु अब केवल कुछ आम आदिके वृक्ष दिखायी देते हैं। इससे तीन मील आगे रामपुर चट्टी है। इस प्रकार बारह मील चलकर यात्री रामपुर चट्टीमें विश्राम कर सकते हैं। यहाँ एक शीतल जलका झरना है।

रामपुरसे तीन मील आगे डिगोली चट्टी है। फिर दो मीलपर बिल्वकेदार नामक तीर्थ है। इसके पास अलकनन्दा और खाण्डव नदीका सङ्गम होता है। यहाँ बिल्वकेश्वर महादेवका मन्दिर है तथा पासमें अर्जुनके चरणचिह्नोंके दर्शन होते हैं। जिस समय पाण्डवलोग बारह वर्षके लिये वनमें गये हुए थे उस समय महादेवजीसे दिव्यास्त्र प्राप्त करनेके लिये अर्जुनने इसी स्थानपर तप किया था। भगवान् शङ्कर किरातके रूपमें अर्जुनके सामने प्रकट हुए और एक शूकरके लिये अर्जुनसे उनका घोर युद्ध हुआ। अन्तमें अर्जुनके पराक्रमसे प्रसन्न होकर वे अपने वास्तविक रूपमें प्रकट हुए और उन्हें पाशुपत अस्त्र प्रदान किया।

इसी स्थानको महाभारतमें खाण्डव वन कहा गया है। यहाँ तक्षक और अश्वसेनादि नाग, मयासुर, शार्ङ्गपक्षी तथा और बहुत से उपद्रवी जीव रहते थे। इसे श्रीकृष्ण और अर्जुनकी सहायतासे

अग्निदेवने भस्म किया था। इस स्थानमें खाण्डवगङ्गा अलकनन्दासे मिलती है तथा दूसरी ओरसे मार्कण्डेयगङ्गा भी आकर मिल जाती है। बिल्वकेश्वर-मन्दिरसे इन तीनों नदियोंका दर्शन होता है। भगवान् बिल्वकेश्वरके ऊपर चाँदीका छत्र लगा हुआ है, तथा जलके कई घड़ोंसे निरन्तर जलकी धारा गिरती रहती है।

यहाँसे कुछ आगे चलनेपर सड़कके ऊपर बायें हाथको एक साइनबोर्ड दिखायी देता है। उससे कुछ फासलेपर कमलेश्वर महादेव और श्रीलक्ष्मीनारायणके मन्दिर हैं। इन मन्दिरोंतक जाने आनेका मार्ग प्रायः आधा मील है। यह स्थान शङ्करमठ कहलाता है और इसे देवल ऋषिने स्थापित किया था। इस स्थानका माहात्म्य केदार-खण्डमें दिया है। भगवान् कमलेश्वरका मन्दिर प्राचीन शैलीका है। इसकी सेवा-पूजाका अच्छा प्रबन्ध है। मन्दिरकी स्थायी आय प्रायः पाँच सहस्र रुपये है। इसका प्रबन्ध एक महन्तके हाथमें है।

यहाँसे आगे बढ़नेपर श्रीनगर आता है। यह बिल्वकेश्वरसे दो मीलकी दूरीपर है। पहले यह टेहरी राज्यकी राजधानी थी। किंतु अब ब्रिटिश गढ़वाल जिलेका शासनस्थान है। यहाँकी बस्ती संवत् १९५१ की गोहना झीलकी बाढ़से नष्ट हो गयी थी। केवल कमलेश्वर महादेवका मन्दिर बच गया था। वर्तमान श्रीनगर नये रूपसे बसाया गया है। यहाँ अच्छा चौपाटीका बाजार है, जिसमें बड़े बड़े महाजनोंकी दूकानें हैं। इस स्थानपर तारघर, डाकघर, पुलिसस्टेशन, अस्पताल एवं औषधालय आदि सब प्रकारकी उपयोगी संस्थाएँ हैं, तथा दो बहुत अच्छी धर्मशालाएँ हैं। उनका प्रबन्ध बाबा कालीकमलीवालेके हाथमें है।

श्रीनगरमें एक हाईस्कूल भी है। यहाँसे एक सड़क दक्षिणकी ओर पौड़ी होती हुई कोटद्वार रेलवे-स्टेशनतक गयी है और दूसरी पूरबकी ओर रुद्रप्रयागको गयी है। यहाँ कुली एजेंसी भी है जो आवश्यकता होनेपर कुलियोंका प्रबन्ध कर देती है।

श्रीनगरका एक प्रसिद्ध स्थान गैरोला मठ है। यहाँ श्रीलेंदु भगवान्‌का मन्दिर है। मन्दिरसे लगा हुई एक धर्मशाला और एक पाठशाला भी है तथा नागेश्वर महादेवका मन्दिर है। प्राचीन श्रीनगर श्रीकमलेश्वर महादेवके समीप था, किन्तु अब वह उनसे प्रायः एक मील आगे है। यहाँ अष्टतीर्थ और धनुषतीर्थ नामक दो पवित्र तीर्थस्थान हैं। कहते हैं, यहाँ आनेवाले यात्रियोंको श्रीरामेश्वर और श्रीद्वारकाधामकी यात्रासे भी विशेष फल होता है। इसके समीप ही अलकनन्दाजीमें एक शिलामय श्रीयन्त्र रखा हुआ है। उसकी पूजा वैष्णव महात्मा करते हैं। उसकी सेवाके लिये टेहरी दरबारने कई गाँव दिये हैं।

भगवान् रामने रावणका वध करके वसिष्ठजीकी आज्ञासे सहस्र कमलदलद्वारा कमलेश्वर महादेवजीका पूजन किया था। इसीसे इनका नाम कमलेश्वर हुआ। श्रीरामचरितमानसमें जो नारदजीके मोहकी बात आती है वह विश्वमोहिनीका पिता इस श्रीनगरका ही राजा था। इसे ही रामायणमें निवासनगर कहा गया है। विश्वमोहिनीके रूप-लावण्यपर रीझकर नारदजीने श्रीविष्णुभगवान्‌से उनका सा रूप माँगा। किन्तु भगवान्‌ने उनका मुख बन्दरके समान कर दिया और स्वयं स्वयंवरमें जाकर उस राजकन्याके वरण करनेपर उसे

अपने साथ ले आये। यह सारा रहस्य सुननेपर नारदजी बहुत रुष्ट हुए और भगवान्‌को शाप दिया कि तुम्हें स्त्रीवियोगका विषम क्लेश सहन करना होगा। तथा वानरोंकी सहायतासे ही तुम अपनी प्रियाको प्राप्त करनेमें समर्थ होगे।

श्रीनगरका दूसरा नाम शिवप्रयाग भी है। इस पार्वत्यप्रदेशमें यह सबसे बड़ा नगर है। यहाँ सब प्रकारकी आवश्यक सामग्री मिल जाती है।

श्रीनगरसे रुद्रप्रयाग (१९ मील)

श्रीनगरसे चार मीलपर सुकरता चट्टी है। यह श्रीशुकदेवजी-का तप स्थान है। यहा वृक्षोंकी छाया और श्रीगंगाजीकी सन्निधि है तथा यात्राके समय बाबाजीकी ओरसे पौसाला और औषधालय खोल दिये जाते हैं।

सुकरता चट्टीसे साढे तीन मील भट्टीसेरा है। यहाँ यात्रियोंको पनचक्कीसे पिसा हुआ ताजा आटा मिल सकता है। यहासे डेढ़ मीलपर छानीखाल चट्टी है। उससे दो मीलपर खाँकरा चट्टी और फिर साढे तीन मीलपर पचायतीधार है। पचायतीधारसे ढाई मीलपर गुलाबराय चट्टी है। यहाँ यात्रियोंके ठहरनेका बहुत सुपास है। झरनेका मधुर जल और वृक्षोंकी छाया है तथा हरे शाक भी मिल जाते हैं।

गुलाबरायसे दो मील रुद्रप्रयाग है। यह उत्तराखण्डके पाँच प्रयागोंमेंसे एक है। यहाँ अलकनन्दा और मन्दाकिनीका सगम है। संगममें स्नान करनेके लिये अलकनन्दाको झूलाके पुलसे पार करना

होता है। यहाँसे केदारनाथ जानेवाले यात्रियोंको अलकनन्दाका मार्ग छोड़कर मन्दाकिनीके किनारे जाना होता है, जो केदारनाथ तक साथ ही रहती है। सीधे बदरीनाथ जानेवाले यात्री पुल इस ओरसे ही अलकनन्दाके पूर्ववर्ती मार्गसे जाते हैं।

अलकनन्दा और मन्दाकिनीके संगममें स्नान करनेके लिये यात्रियोंको सीढ़ियाँ उतरकर जाना होता है। यह घाट हजारीमल्जी दुधेरियाजीका बनवाया हुआ है। घाटके ऊपर रुद्रेश्वर महादेवका मन्दिर है, जिसमें ताड़केश्वर, गोपालेश्वर और अन्नपूर्णादिके भी दर्शन होते हैं। रुद्रेश्वरलिंग श्यामवर्ण है। इस स्थानपर भगवान् शंकरने नारदजीको गानविद्याका उपदेश किया था। उस समय श्रीनारदजीने उनकी शिवसहस्रनामसे स्तुति की थी। आज भी यहाँ शिवसहस्रनामका नित्यपाठ किया जाता है। यहाँसे केदारनाथ ५४ मील और श्रीबदरीनाथजी साढ़े चौरासी मील हैं। हम श्रीकेदारनाथजी होकर बदरीनाथजीकी यात्राका वर्णन करेंगे।

रुद्रप्रयागसे गुप्तकाशी (२३॥ मील)

रुद्रप्रयागसे साढ़े चार मीलपर छतोली चट्टी है। यहाँ निवास स्थान और जलका सुभीता है। छतोलीसे डेढ़ मील मठ चट्टी और उससे एक मील रामपुर चट्टी है। ये दोनों छोटी चट्टियाँ हैं। फिर रामपुरसे साढ़े तीन मील आगे अगस्त्यमुनि चट्टी है। यहाँ अगस्त्य मुनिका प्राचीन मन्दिर है और बस्ती भी पुरानी जान पड़ती है। यहाँ हवाई जहाजका स्टेशन है। केदारनाथ जानेवाले यात्री इसी जगह उतरते हैं। यहाँ बाजारमें सब प्रकारकी खाद्य सामग्री मिल

जाती है। ठहरनेके लिये पञ्चायती धर्मशाला, सरकारी धर्मशाला और डाकबँगला आदि हैं। सदावर्तका भी प्रबन्ध है। इस स्थानपर अगस्त्यमुनिने तपस्या की थी और पितरोंके आदेशसे विदर्भराज कुमारी लोपामुद्रासे विवाह कर दृढस्युनामक पुत्र उत्पन्न किया था।

अगस्त्यमुनिसे आधा मील छोटे नारायणका मन्दिर है। मन्दिरमें भगवान्‌की मनोहर मूर्तिके दर्शन होते हैं तथा उसके सामने रुद्राक्षके वृक्ष हैं। इससे साढ़े तीन मील आगे चन्द्रापुरी चट्टी है। यहाँ मन्दाकिनी और चन्द्रभागाका सगम होता है तथा चन्द्रेश्वर महादेवका मन्दिर है। फिर तीन मील आगे भेरी चट्टी है। यहाँ भीमसेनने तप किया था। इस समय उनका एक मन्दिर विद्यमान है। इसके आगे तीन मीलपर कुण्डचट्टी है। यहाँसे चढ़ाई आरम्भ होती है। तीन मील चलनेपर गुप्तकाशी आती है।

गुप्तकाशी एक ऊँचे पर्वतशिखरपर बसी हुई है। यहाँ विश्वनाथजीका मन्दिर है, जिसका शिखर सुवर्णपत्रसे मढ़ा हुआ है। सामने गरुडजीका मन्दिर है। उसके आगे पञ्चाकुण्ड है, जिसमें गणेशमुख और गोमुखसे निरन्तर दो धाराएँ गिरती रहती हैं, जिन्हें क्रमशः यमुना और गगाजीकी धारा कहते हैं। कुण्डमें कटिपर्यन्त जल रहता है, इससे अधिक होनेपर एक नालामें निकल जाता है। मन्दिरके बायीं ओर एक छोटा सा मन्दिर है, जिसमें सगमरमरके नन्दीपर सवार अर्धनारीनटेश्वरकी मनमोहिनी मूर्ति है। मन्दिरके तीन ओर दो मञ्जिला धर्मशाला है, जिसमें यात्री-लोग ठहरते हैं। सायकालमें जब भगवान्‌की आरती होती है तो भीड़ हो जाती है।

इस स्थानपर पाण्डवोंने तप किया था। यहाँ लोग कांसेके पात्रमें चावल, गोला, मिठाई और वस्त्रादि रखकर गुप्तदान करते हैं। गुप्तकाशीके आस-पास श्रोणितपुर आदि गाँवोंमें केदारनाथके पण्डेलोग रहते हैं। यह पर्वतशिखरके ऊपर बसा हुआ एक सुन्दर कस्बा है। यहाँ डाकखाना, तारघर और औषधालय आदि भी हैं। तथा बाबा कालीकमलीवालेकी धर्मशाला और सदावर्त भी है। यहाँसे पूर्वोत्तर दिशामें एक मीलपर ऊखीमठकी बस्ती है। शीतकालमें जब श्रीकेदारनाथजीके पट बन्द हो जाते हैं तब केदारनाथके रावलजी उनकी चलप्रतिमाकी यहीं पूजा किया करते हैं।

गुप्तकाशीसे रामपुर (११ मील)

गुप्तकाशीसे एक मीलपर नाला चट्टी है। यहाँ राजा नलने भगवतीकी आराधना की थी। इसीसे इसका नाम नाला चट्टी हुआ। यहाँ भगवतीका मन्दिर है। केदारनाथजीके दर्शन करके यात्री यहीं होकर ऊखीमठ जाते हैं, इसलिये वे यहाँ दूकानदारके यहाँ अपना फालतू सामान छोड़ देते हैं केवल आवश्यक वस्तुएँ अपने साथ रहने देते हैं।

यहाँसे दो मीलपर मैनादेवी है। यहाँ एक मन्दिर भगवतीका और चार अन्य मन्दिर भी हैं। किसी समय यह स्थान बड़ा रमणीक रहा होगा।

मैनादेवीसे दो मीलपर नारायणकोटि है। यहाँ एक मन्दिरमें श्रीनारायणके दर्शन होते हैं। रास्तेमें काठके बर्तन मिलते हैं और इस स्थानपर पनचक्कीके समान जलसे काम करनेवाली एक मशीन भी है। यहाँ एक मन्दिर भगवतीका भी है, जिसमें पुजारीलोग घृतका

दीपदान और दुर्गासप्तशतीका पाठ कराते हैं। कहते हैं, इसी स्थानपर भगवतीने महिषासुरका वध किया था। यहाँसे एक मील आगे फाटा चट्टी है और फिर तीन मीलकी उतराई-चढ़ाईके बाद बादल चट्टी आती है। यहाँ ठहरनेका सुभीता है और हिमाच्छादित पर्वतमालाका बड़ा मनोहर दृश्य है।

बादल चट्टीसे दो मील आगे रामपुर चट्टी है। यहाँ बाबा काली कमलीवालोंकी धर्मशाला और सदावर्त है। जिन यात्री या साधुओंको आवश्यकता हो उन्हें पाच दिनतक ओढ़नेके लिये यहाँ कम्बल भी मिल जाते हैं।

रामपुरसे त्रियुगीनारायण (५ मील)

रामपुरमें त्रियुगीनारायणके पुजारी मिल जाते हैं। यहाँसे डेढ मीलपर पाटागाड नदी और चट्टी है। इस जगहसे दो मार्ग जाते हैं, सामनेकी ओर श्रीकेदारनाथको और बायीं ओर त्रियुगीनारायणको। बायी ओरके मार्गसे दो मीलकी कड़ी चढ़ाईके बाद शाकम्भरदेवीका मन्दिर आता है, यहा तीन दिनतक शाकाहार करके व्रत करनेका विशेष माहात्म्य है। इसके पश्चात् एक मीलकी चढ़ाई और चढ़नेपर श्रीत्रियुगीनारायणके दर्शन होते हैं।

त्रियुगीनारायणमें श्रीविष्णुभगवान्का मन्दिर है। मन्दिरमें भगवान्की पान हाथ ऊँची अष्टधातुकी मूर्ति है। कहते हैं, इस स्थानपर भगवान् रुद्रकी प्रसन्नताके लिये श्रीविष्णुभगवान्ने तप किया था ... जगमोहनमें धूनी है। इसके विषयमें ऐ

कहावत है कि इसी स्थानपर पर्वतराज हिमालयने श्रीमहादेवके साथ अपनी पुत्री पार्वतीजीका विवाह किया था। उस समय जो हवन हुआ था उसीका अवशेष वर्तमान धूनी है। इस धूनीकी अग्नि शान्त न हो इसके लिये टेहरीदरबारने कुछ जागीर लगा दी थी। उसे ब्रिटिश गवर्नमेण्टने भी बहाल रखा है।

भगवान त्रियुगीनारायणकी नाभिसे श्रीसरस्वती गंगाकी धारा निकलती है। उसका जल सरस्वतीकुण्डमें जाता है और फिर उससे ब्रह्मकुण्ड, रुद्रकुण्ड तथा विष्णुकुण्डमें जाता है। इन कुण्डोंमेंसे ब्रह्मकुण्डमें आचमन, रुद्रकुण्डमें स्नान और गुप्तदान, विष्णुकुण्डमें मार्जन तथा सरस्वतीकुण्डमें तर्पण किया जाता है। इन कुण्डोंमें पीले रंगके सर्पोंका एक जोड़ा रहता है। वे सर्प विषैले नहीं हैं। उनका दर्शन शुभ माना जाता है। परन्तु वे सर्वदा दिखायी नहीं देते।

त्रियुगीनारायणमें दो तीन धर्मशालाएँ हैं। उनमें ठहरनेका सब प्रकारका सुभीता है। यहाँसे ढाई मीलकी खड़ी उतराई पार करनेपर सोनप्रयाग चट्टी आती है। यहाँ पाटागाडमें छोड़ा हुआ श्रीकेदारनाथजीका मार्ग मिल जाता है।

सोनप्रयागसे रामबाड़ा (७॥ मील)

सोनप्रयागमें वासुकी गंगा और मन्दाकिनीका संगम होता है। वासुकी गंगापर पार जानेके लिये लोहेका झूलता हुआ पुल है। झूलाका बगलसे संगमतक जानेका मार्ग है। यहाँ रात्रिमें ठहरने योग्य स्थान नहीं है।

सोनप्रयागसे एक मील सिरकटा गणेश हैं । यहाँ गणेशजीकी मस्तकहीन मूर्ति है । कहते हैं, एक बार पार्वतीजीने एकान्तमें स्नान करनेके विचारसे गणेशजीको पहरेपर बैठाकर आज्ञा दी कि किसीको भीतर मत आने देना । दैवयोगसे इसी समय वहाँ भगवान् शंकर आये। गणेशजीने उन्हें भीतर जानेसे रोका । किन्तु शिवजी उनकी बात न मानकर उनसे युद्ध करने लगे तथा उन्होंने गणेशजीका मस्तक काट दिया । जब पार्वतीजीको यह बात मालूम हुई तो उन्हें बड़ा खेद हुआ और उन्होंने पुत्रशोकवश अन्न जल छोड़ दिया । तब उनका शोक शान्त करनेके लिये भगवान् शिवने एक हाथीका मस्तक जोड़कर गणेशजीको जीवित कर दिया । तभीसे उनका नाम 'गजानन' हुआ ।

यहाँसे दो मील आगे गौरीकुण्ड है । उक्त कथाके अनुसार जिस स्थानपर पार्वतीजीने स्नान किया था वह यही है । यही उनका जन्मस्थान भी बतलाया जाता है । यहाँ दो कुण्ड हैं । एकमें कुछ पीले रंगका शीतल जल है । यह बहुत प्यारा है और इसमें गन्धककी गन्ध आती है । यह जल एक गोमुखसे गिरता रहता है । इससे पचीस-तीस हाथकी दूरीपर एक उष्ण जलका कुण्ड है । इनमेंसे पहले कुण्डमें स्नान और दूसरेमें तर्पण किया जाता है । इन कुण्डोंमें स्नान और तर्पण करनेके पश्चात् यात्रीलोग श्रीपार्वतीजीके दर्शन करते हैं । यहाँकी बस्ती सुविस्तीर्ण और साफ सुथरी है । यहाँ सब प्रकारकी खाद्य सामग्री मिल जाती है । ठहरनेके लिये बाबा

कालीकमलीवालोंकी धर्मशाला है। केदारनाथपुरमें मुण्डन करानेकी विधि नहीं है, इसलिये यात्रीलोग यहीं मुण्डन करा लेते हैं।

यहाँसे प्रायः एक मील आगे चारपटिया भैरों हैं। ये केदारनाथजीके कोतवाल हैं। यहाँ जो यात्रा चार नहीं चढ़ाता उसकी यात्राका बहुत-सा फल भैरोंजी ले लेते हैं।

यहाँसे आध मीलपर भीमार चट्टी है। यह जंगलके बीचमें है। केवल बनियेकी एक दूकान है, उसीने २५-३० यात्रियोंके ठहरनेयोग्य एक फूसकी चोपड़ा बना रखी है। यहाँ खाद्य सामग्री बहुत महँगी मिलती है और सर्दी अधिक पड़ती है। इस जगहसे आधे मीलपर भीमशिला है। यहाँ गदाधारी भीमसेनकी मूर्ति है। फिर ढाई मील आगे रामबाड़ा है।

यह अच्छी बड़ी चट्टी है। यहाँ कालीकमलीवालोंकी धर्मशाला और सदावर्त है। झरनेका शीतल जल है। शीत भी बहुत पड़ता है। चारों ओर हिमाच्छन्न पर्वतमाला दृष्टिगोचर होती है। कई जगह बर्फकी बड़ी बड़ी चट्टानें मन्दाकिनीके जलको आच्छादित कर लेती हैं और उनके नीचे जल बहता रहता है। यहाँसे केदारनाथपुरी ढेढ़ मील है। यहाँ बड़ा असह्य शीत पड़ता है। इसलिये बहुत से यात्री प्रातःकाल केदारनाथजीके दर्शन कर उसी दिन रामबाड़ा लौट आते हैं। परन्तु ऐसा करना उचित नहीं है। उस पुण्यक्षेत्रमें एक रात्रि तो अवश्य निवास करना चाहिये।

केदारनाथपुरी

रामबाडासे दो मीलकी कड़ी चढ़ाईके बाद देवदेखनी नामका एक समतल स्थान आता है। यहाँतक जैसी चढ़ाई है वैसी इस यात्रामें अन्यत्र कहीं नहीं पड़ती। देवदेखनीसे देवाधिदेव श्रीकेदारनाथजीका मन्दिर, जो प्राय डेढ़ मील दूर है, दिखायी देने लगता है। कहते हैं, केदारनाथजीके आस-पास कई प्रकारके पिशाच हैं। उनसे यात्री घबरा जाते हैं। यहांतक चढ़ाई भी बड़ा ही विकट है। देवदेखनीसे रास्ता सीधा है। चारों ओर ऊँची ऊँची हिमाच्छन्न पर्वतमाला दिखायी देती है। नदी और नालोंपर भी निरन्तर बर्फ जमा रहता है। उसपर होकर लोग आया जाया करते हैं।

पुरीमें प्रवेश करनेसे पूर्व मन्दाकिनीका पुल पार करना होता है। पुलके उस ओर मन्दाकिनीपर पक्का घाट है। जो लोग डाडियोंमें चढ़े होते हैं वे यहाँ उतर पड़ते हैं और केदारपुरीतक पैदल यात्रा करते हैं। इस पुरीमें कई धर्मशालाएँ हैं। उनमें रानी जयदेवा, जयरामदास भागचन्द्र वामणगाँववाले, मुलतानचन्द नागरमल और काशिनाथ शिवकृष्णदासकी धर्मशालाएँ प्रधान हैं। जयरामदास भागचन्द्र तथा हजारीमलजी दूधवेवालेकी ओरसे सदावर्त भी मिलता है। यहाँ एक भवन निसाहरनरेश महाराज पद्मसिंहजीका बनवाया हुआ भी है, जिसे उन्होंने अपने तीर्थपुरोहित प० दातारा‌म नारायणप्रसादको धर्मार्थ उपयोग करनेके लिये दान कर दिया है।

टेम्पलने इसमें निवास किया था। इनके सिवा यहाँ औषधालय और डाकखाना आदि भी है।

केदारनाथपुरी प्राय: सौ घरकी बस्ती है। यहाँ शीतका साम्राज्य है। लोगोंको रात्रिमें रहना कठिन होता है। इसलिये अधिकांश यात्री पहले दिन ही रामबाड़ा या गौरीकुण्डको लौट जाते हैं। यहाँ मन्दाकिनी सरस्वती, क्षीरगंगा, स्वर्गद्वारी और महोदधि इन पाँच नदियोंका संगम होता है। संगममें गोता लगाना प्राय: असम्भव है, इसलिये अधिकांश यात्री किनारेपर बैठकर लोटेसे ही स्नान करते हैं। स्नानके पश्चात् पिण्डदान और तर्पण किये जाते हैं। नाथपुजारी पिण्डोंको एक पात्रमें रखकर हंसकुण्डमें पधरा देते हैं, इससे पितरोंको अक्षय शान्ति मिलती है।

केदारनाथजीका मन्दिर बहुत प्राचीन है। कहते हैं, यह पाण्डवोंका बनवाया हुआ है। पीछे श्रीशंकराचार्यजीने इसका जीर्णोद्धार कराया था। मन्दिरके पास ही घृत, चन्दन, चौकी दार, पुष्प, फल, वस्त्र, बिल्वपत्र, मिष्टान्न तथा मेवा आदि पूजाकी सामग्री मिल जाती है। उसे लेकर यात्री श्रीकेदारेश्वरके दर्शनार्थ जाते हैं। पहले मन्दिरके सामने मैदानमें श्रीगणेशजीके दर्शन होते हैं। उनका पूजन करके मन्दिरमें प्रवेश किया जाता है। मन्दिरके द्वारपर दोनों ओर दो द्वारपालोंकी मूर्तियाँ हैं तथा बाहर दीवारमें पाँचों पाण्डव, कुन्ती, द्रौपदी, पार्वती, लक्ष्मी और सरस्वती आदिकी प्रतिमाएँ हैं। दालानमें दाहिनी ओर श्रीराम, लक्ष्मण और सीताजीके दर्शन होते हैं तथा बीचमें नन्दीश्वर और गरुडजी हैं। मन्दिरके भीतरी भागमें एक ओर पार्वतीजी और दूसरी ओर लक्ष्मीजी हैं तथा मध्यमें

श्रीकेदारनाथजीका अनगढ लिङ्ग है। केदारेश्वर द्वादश ज्योतिर्लिङ्गोंमेंसे एक हैं। ये एक डेढ हाथ चौडे, चार हाथ लम्बे और दो हाथ ऊँचे पत्थरके टीलेके आकारमें हैं। इस विषयमें ऐसी किंवदन्ती है कि एक बार श्रीमहादेवजी भैंसेका रूप धारण कर इस पर्वतपर विचर रहे थे। उस समय भीमसेनने उन्हें कोई जंगली भैंसा समझकर उनपर गदाप्रहार किया। इससे उनका अगला धड़ तो पर्वतमें घुस गया और पीछेका भाग पत्थर हो गया। वही श्रीकेदारनाथजी हुए। अगला धड़ नेपालमें प्रकट हुआ और श्रीपशुपतिनाथके नामसे प्रसिद्ध हुआ।

श्रीकेदारनाथजीको गंगाजलसे स्नान कराकर चन्दन, पुष्प एवं बिल्वपत्रादिसे पूजन करते हैं। फिर भोगादि समर्पणकर उनपर घृत मलकर उनका आलिङ्गन किया जाता है। मन्दिरमें अँधेरा रहता है। इसलिये इसमें घृतका अखण्ड दीप जलता रहता है। कार्तिकी पूर्णिमाके पश्चात् शीतकी अधिकताके कारण यहाँ रहना असम्भव हो जाता है। इस समय केदारनाथजीकी चल प्रतिमाको उखीमठमें ले जाते हैं तथा इस मन्दिरमें पूजनकी सारी सामग्री रखकर घृतसे भरे हुए दीपकमें खडी बत्ती जलाकर पट बन्द कर देते हैं। ये पट वैशाख मासमें खोले जाते हैं। उस समय सारा मन्दिर बर्फसे ढका रहता है। पट खोलनेके लिये मजदूरोंको बर्फ काटकर मार्ग निकालना पड़ता है। किन्तु वह दीपक जलता हुआ ही मिलता है।

श्रीकेदारनाथकी परिक्रमामें अमृतकुण्ड, ईशानकुण्ड, हंसकुण्ड, रेतसकुण्ड और उदककुण्ड नामके पाँच कुण्ड हैं। इनमेंसे अमृत

और ईशानकुण्डमें आचमन, हंसकुण्डमें तर्पण, रेतसकुण्डमें अर्घ्य और घुटनेके बल गोमुख होकर आचमन किया जाता है। उदककुण्डका जल मधुर और शीतल है। इसमें तर्पण करनेसे मनुष्य मातृऋणसे उऋण हो जाता है।

श्रीकेदारपुरीसे तीन मील दूरीपर 'भैरवझाप' नामका एक शिला है। पहले बहुत से यात्री मोक्षकी कामनासे उस शिलासे कूद पड़ते थे। इस प्रथाको ब्रिटिश गवर्नमेण्टने सन् १८२९ ई० से बंद कर दिया है।

यद्यपि अत्यधिक शीत होनेके कारण यहाँ यात्रियोंको रात्रिके समय ठहरनेमें कष्ट होता है तो भी इस पुण्यक्षेत्रमें उन्हें अवश्य रात्रिवास करना चाहिये और भगवान्की सायंकालिक आरतीके दर्शन करने चाहिये। श्रीकेदारपुरीमें वर्षा और बर्फकी अधिकता है तथा मन्दिरके भीतर पर्याप्त स्थान नहीं है। इसलिये यहाँ मन्दिरके आगेकी ओर जो चबूतरा है उसपर पटा हुआ दालान बन जानेकी विशेष आवश्यकता है। दानवीर महानुभावोंको इस ओर ध्यान देना चाहिये।

माहात्म्य—स्कन्दपुराणमें लिखा है कि जो यात्री गंगोत्तरीका जल लाकर श्रीकेदारनाथजीकी विधिवत् पूजा करते हैं वे मृत्युके पश्चात् कैलाशमें निवास करते हैं तथा जो छः मास रहकर यहाँ पञ्चाक्षर मन्त्र जपते हैं वे परम धन्य हैं।

केदारनाथसे बदरीनाथ

नाला चट्टीसे तुगनाथ (४५ मील)

श्रीकेदारनाथसे बदरीनाथजीको जानेके लिये नाला चट्टीतक २६ मील उपर्युक्त मार्गसे ही लौटना पड़ता है । नाला चट्टीसे एक मार्ग श्रीमन्दाकिनीजीको पार करके ऊखीमठ गया है । नाला चट्टीसे ऊखीमठ प्राय तीन मील है, कड़ा चढ़ाई है । यहाँ केदारनाथजीके रावलकी गद्दी है । शीतकालमें, जब श्रीकेदारनाथपुरीमें रहना असम्भव हो जाता है तब श्रीकेदारनाथजीकी चलप्रतिमाको यहाँ ले आते हैं । रावलजीकी गद्दीपर श्रीकेदारनाथजीका सुवर्णमय पञ्च-मुखी मुकुट रक्खा हुआ है । मन्दिर सुवर्णमण्डित शिखरसे सुशोभित और बहुत बड़ा है । यहाँ महाराज मान्धाताकी एक काले पत्थरकी प्रतिमा है । महाराज मान्धाता सूर्यवंशमें चक्रवर्ती सम्राट् हुए हैं, उन्होंने कुछ काल यहाँ तपस्या की था ।

सामने श्रीओंकारेश्वर महादेवका मन्दिर है । यह बड़ा मनोहर है । श्रीओंकारेश्वरपर सुवर्णमय पञ्चमुखी मुकुट और चाँदीका छत्र

है । इनके सामने पीतलके नन्दीश्वर हैं । पास ही श्रीमध्यमहेश्वरकी चलमूर्तिके भी दर्शन होते हैं । इनकी गणना पञ्च केदारोंमें है । ज्येष्ठ शुक्ल १२ को इन्हें मध्यमहेश्वर नामक स्थानपर ले जाते हैं जो ऊखीमठसे प्रायः २९ मीलकी दूरीपर है । इनके सिवा इस मन्दिरमें श्रीअम्बिका, श्रीस्वामिकार्तिकेय, श्रीकेदारनाथ-पार्वती, श्रीतुंगनाथ-पार्वती, अर्धनारीश्वर, काली और श्रीचतुर्भुजा भगवतीकी मूर्तियाँ भी हैं ।

एक फाटकके पुराने मन्दिरमें उषादेवीकी श्यामल मूर्तिके दर्शन होते हैं । इनके पास ही इनकी सखी चित्रलेखा, पति अनिरुद्धजी तथा कुन्ती, तारा, मीना और द्रौपदीजी आदिकी भी मूर्तियाँ हैं । उषादेवी असुरराज बलिके पुत्र वीरवर बाणासुरकी कन्या थीं । इन्होंने एक दिन स्वप्नमें भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रके पौत्र अनिरुद्धजीके दर्शन किये । ये उनके रूप लावण्यपर मोहित हो गयीं । तब इनकी सखी चित्रलेखा इनके संकेतानुसार आकाशमार्गसे अनिरुद्धको ले आयी । जब बाणासुरको पता लगा तो उसने अनिरुद्धजीको कैद कर लिया । पीछे श्रीकृष्णचन्द्रके साथ उसका भयंकर संग्राम हुआ और उनसे पराजित होनेपर उसने अनिरुद्धजीके साथ उषाका विवाह कर दिया ।

ऊखीमठकी बस्ती अच्छी बड़ी और रमणीक है । बाजारमें खासी चहल पहल रहती है । सब प्रकारका आवश्यक सामान मिल जाता है । यात्रियोंके ठहरनेके लिये कई अच्छी धर्मशालाएँ हैं । यहाँ अस्पताल, डाकघर और पुलिस स्टेशन भी है । तथा एक अंग्रेजीका मिडिल स्कूल भी है ।

यहाँसे तीन मीलकी उतराईके बाद ब्रह्म चट्टी है। इसे गणेश चट्टी भी कहते हैं। इससे चार मील आगे दुर्गा चट्टी है। और फिर छ मीलपर पोथीबासा चट्टा है। यहाँ जलके द्वारा चलाया जानेवाली मशीनोंसे काठके बर्तन बनते हैं। इस स्थानपर पानीके नल और सदावर्तका प्रबन्ध है। कालीकमलीवालोंकी धर्मशाला भी बननेवाला है। इधरकी चट्टियोंपर पहाडी मक्खीका जोर है। वह इतनी जहरीली होती है कि उसके काटनेपर खुजानेसे घाव हो जाते हैं और बहुत दिनोंमें अच्छे होते हैं। इसे शान्त करनेके लिये काटे हुए स्थानपर कडवे तेलमें कपूर घोटकर मलना चाहिये।

यहाँसे तीन मीलकी चढाईके बाद बनियाँकुण्ड चट्टी आती है। यहाँ बाबा कालीकमलीवालेका बडी सुन्दर धर्मशाला है। धर्मशालाके आगे पत्थरोंका पक्का चबूतरा है, उसके सामने चारों ओर हरा-भरा मैदान है। यहाँ आकर यात्रियोंका बडी प्रसन्नता होती है। यात्राके समय यहाँ सदावर्त भी लग जाता है।

बनियाँकुण्डसे तीन मीलकी चढाईके बाद चोपता चट्टी आती है। इधर देवदारु और चीडके ऊँचे-ऊँचे वृक्षोंकी अधिकता है। यहा श्रीतुगनाथजीके पण्डे मिल जाते हैं। यदि कोई यात्री तुगनाथजीकी कडी चढाई चढनेमे असमर्थ हो तो उसे यहा डाँडी किरायपर कर लेनी चाहिये। यहाँसे तुगनाथजी जानेके लिये श्रीबदरीनाथवाली सदर सडक छोडकर बायें हाथकी ओर जानेवाले मार्गमे जाना होता है। इस सडकसे तीन मीलकी अत्यन्त कडी चढाई पार करनेपर श्रीतुगनाथ-

जीके दर्शन होते हैं। यह चढ़ाई इतनी कड़ी है कि बहुत-से यात्री इसके भयसे श्रीतुंगनाथजीके दर्शन नहीं करते। अब यद्यपि काली-कमलीवालेके सुप्रसिद्ध मठ श्रीहजारीमलजी दूधवेवालोंने एक चौड़ी सड़क बनवाकर इस असुविधाको बहुत कम कर दिया है तो भी इसकी विकटताके कारण डाँडीवालोंको भी कुछ दूरके लिये अपने यात्रीको उतारना पड़ता है।

तुंगनाथजीका दृश्य बड़ा ही चित्ताकर्षक है। चारों ओर हिमाच्छादित उत्तुंग पर्वतमाला दृष्टिगोचर होती है। यदि आकाशमें कुहिरा या बादल नहीं होता तो यहाँसे श्रीबदरीनाथ, श्रीकेदारनाथ तथा गंगोत्तरी और यमुनोत्तरीके पर्वत भी दिखायी देते हैं। पहाड़ों-पर दूरतक बड़ी मोटी बर्फ जमी रहती है, जो सूर्यकी किरणोंमें रजतराशिके समान प्रतीत होती है। तुंगनाथजीका मन्दिर भी ऊँचा है। उसमें भगवान्‌का प्रायः डेढ़ फुट ऊँचा अनगढ़ लिङ्ग है। इसकी गणना पञ्चकेदारोंमें है। इसकी सेवा-पूजाके लिये टेहरी दरबारकी ओरसे गाँव लगे हुए हैं। छः मासतक यहीं पूजा होती है। फिर कार्तिकी पूर्णिमाके पीछे यहाँसे सात मील दूर मक्कू गाँवमें भगवान्‌की चलप्रतिमाका पूजन होता है। उन दिनोंमें इस मन्दिरके पट बन्द रहते हैं। यहाँ शीतकी बहुत अधिकता रहती है। रात्रिको ठहरना कठिन होता है। इसलिये बहुत-से यात्री उसी दिन बनियाँ-चट्टी लौट आते हैं। यहाँसे गंगोत्तरी जानेके लिये सीधाघाट होकर रास्ता है। किन्तु उससे पहाड़ीलोग ही जा सकते हैं। वह सर्व-साधारणके लिये उपयुक्त नहीं है।

अष्टधातुका त्रिशूल है। यह परशुरामजीका बनवाया जाता है। मन्दिरके पीछेकी ओर श्रीपार्वतीजीकी मूर्ति है तथा परिक्रमामें कल्पलता, चिन्तामणि और गणेशजीकी भी मूर्तियाँ हैं। इनके सिवा यहाँ रुद्रेश्वर महादेवकी भी गणना है। ये पञ्चकेदारोंमें गिने जाते हैं। इनके पास ही श्रीलक्ष्मीजी और सिद्धेश्वर महादेव हैं। इन दोनों मूर्तियोंके ऊपर चाँदीका छत्र टँगा है। यहाँ रावलजाकी गद्दी है। उन्हें गुप्तदान दिया जाता है। गोपेश्वरजीकी सेवा पूजाके लिये टेहरी दरबारकी ओरसे गाँव लगे हुए हैं। यहाँका बस्ती भी बड़ी है, परंतु जलकी कमी है। जलाभावके कारण यहाँ यात्री बहुत कम ठहरते हैं।

गोपेश्वर चट्टीसे एक पगडण्डी तुंगनाथको जाता है। चौदह मील जानेपर मैदान आता है। यहाँ रुद्रनाथ महादेवका मन्दिर है। इनका केवल छः महीने पूजा होती है। शीतकालमें यह स्थान बर्फसे ढका रहता है। इस जगह अधिकतर केवल साधु महात्मा ही जाते हैं।

लालसांगासे गरुडगंगा (१५॥ मील)

गोपेश्वरसे ढाई मील आगे अलकनन्दा गंगाका लोहेका पुल पार करनेपर लालसांगा चट्टी आती है। यह चट्टी नदीके बायें किनारेपर है। बदरीनाथ जानेवाली सड़क दायें किनारेसे गयी है। केदारनाथकी जानेके लिये यात्रियोंको रुद्रप्रयागमें अलकनन्दाजीको छोड़ना पड़ा था। अब लालसांगा या चमोली चट्टीमें पुनः उनका दर्शन होता है। रुद्रप्रयागसे सीधा बदरीनाथ जानेवाला मार्ग कर्ण-

प्रयाग होता हुआ अलकनन्दाजीके किनारे किनारे ही आता है। लालसागा बस्ती काफी बड़ी है। यहाँ दूकानें भी बहुत हैं तथा सभी आवश्यक सामान मोल मिल जाता है। यहाँ डिप्टीकलक्टरका कचहरी, अस्पताल, डाकखाना, तारघर और पुलिस स्टेशन भी हैं। तथा बाबा कालीकमलीवालोंकी धर्मशाला और सदावर्त हैं। यहाँसे बदरीनाथधाम ४७ मील रह जाता है।

यहाँसे दो मीलपर मठ चट्टी है और फिर क्रमशः १-१ मीलके अन्तरपर छिनका एवं बावला चट्टी है। ये सब चट्टियाँ बहुत छोटी हैं। बावला चट्टीसे कुछ दूरीपर अलकनन्दाजीसे बिरही गंगाका संगम हुआ है। सं० १९५१ में इस बिरही गंगाकी बाढ़मे इस प्रान्तको बड़ी क्षति पहुँची थी और श्रीनगर तो उस जलप्रलयका प्रायः सर्वथा ग्रास बन गया था। बावलासे दो मीलकी दूरीपर सियार चट्टी है। यहाँ पीपलके वृक्षकी बड़ी शीतल छाया है। इससे एक मीलपर हाट चट्टी है। यहाँ श्रीगंगाजी और झरनेका जल निकट ही है।

हाट चट्टीसे दो मीलपर पीपलकोटि चट्टी है। यह अच्छी बड़ी बस्ती है। यहाँके बाजारमें ऊनी आसन, कम्बल, मृगचर्म, शिलाजीत और सुरागायके चॅवर आदि मिलते हैं तथा खाने-पानेका सब सामान और शाक भाजी मिल जाते हैं। यहाँ कालीकमलीवालोंकी धर्मशाला, सदावर्त, डाकखाना, तारघर तथा कुली-एजेंसी भी है। बस्तीके पास केला, नींबू, पीपल और कनेर आदिके वृक्ष सुशोभित हैं।

यहाँसे चार मीलपर गरुडगंगाका संगम है। इस नदीके दोनों ओर गरुडगंगा बस्ती बसी हुई है। यह बहुत ऊँचेसे गिरकर अलकनन्दाजीमें मिल जाती है। काठका पुल पार करनेपर गरुडजीका

अष्टधातुका त्रिशूल है। यह परशुरामजीका बनवाया जाता है। मन्दिरके भीतर पार्वतीजीकी मूर्ति है तथा परिक्रमामें कल्पवृक्ष, चिन्तामणि और गणेशजीकी भी मूर्तियाँ हैं। इनके सिवा यहाँ रुद्र वर महादेवकी भी गद्दी है। ये पञ्चकेदारोंमें गिने जाते हैं। इनके पास ही श्रीअनसूयामाता और सिद्धेश्वर महादेव हैं। इन दोनों मूर्तियोंके ऊपर चाँदीके छत्र टँगे हैं। यहाँ रावलजीकी गद्दी है। उन्हें गुप्तदान दिया जाता है। गोपेश्वरजीकी सेवा पूजाके लिये टेहरी दरबारकी ओरसे गाँव लगे हुए हैं। यहाँकी बस्ती भी बड़ी है, परंतु जलकी कमी है। जलाभावके कारण यहाँ यात्री बहुत कम ठहरते हैं।

गोपेश्वर चट्टीसे एक पगडण्डी तुंगनाथको जाती है। चौदह मील जानेपर मैदान आता है। यहाँ रुद्रनाथ महादेवका मन्दिर है। इनका केवल छः महीने पूजा होती है। शीतकालमें यह स्थान बर्फसे ढका रहता है। इस जगह अधिकतर केवल साधु-महात्मा ही जाते हैं।

लालसांगासे गरुडगंगा (१५॥ मील)

गोपेश्वरसे ढाई मील आगे अलकनन्दा गंगाका लोहेका पुल पार करनेपर लालसांगा चट्टी आती है। यह चट्टी नदीके बायें किनारेपर है। बदरीनाथ जानेवाली सड़क दायें किनारेसे गयी है। केदारनाथकी जानेके लिये यात्रियोंको रुद्रप्रयागमें अलकनन्दाजीको छोड़ना पड़ा था। अब लालसांगा या चमोली चट्टीमें पुनः उनका दर्शन होता है। रुद्रप्रयागसे सीधा बद्रीनाथ जानेवाला मार्ग कर्ण

प्रयाग होता हुआ अलकनन्दाजीके किनारे किनारे ही आता है। लालसांगा बस्ती काफी बडी है। यहाँ दूकानें भी बहुत हैं तथा सभी आवश्यक सामान मोल मिल जाता है। यहाँ डिप्टीकलक्टरकी कचहरी, अस्पताल, डाकखाना, तारघर और पुलिस स्टेशन भी है। तथा बाबा कालीकमलीवालेकी धर्मशाला और सदावर्त हैं। यहाँसे बदरीनाथधाम ४७ मील रह जाता है।

यहांसे दो मीलपर मठ चट्टी है और फिर क्रमश १-१ मीलके अन्तरपर छिनका एव बावला चट्टी है। ये सब चट्टियाँ बहुत छोटी हैं। बावला चट्टीसे कुछ दूरीपर अलकनन्दाजीसे बिरही गगाका सगम हुआ है। स० १९५१ में इस बिरही गगाकी बाढसे इस प्रान्तको बडी क्षति पहुँची थी और श्रीनगर तो उस जलप्रलयका प्राय सर्वथा ग्रास बन गया था। बावलासे दो मीलकी दूरीपर सिवार पट्टी है। यहा पीपलके वृक्षकी बडी शीतल छाया है। इससे एक मीलपर हाट चट्टी है। यहाँ श्रीगगाजी और झरनेका जल निकट ही है।

हाट चट्टीसे दो मीलपर पीपलकोट चट्टी है। यह अच्छी बडी बस्ती है। यहाँके बाजारमें ऊनी आसन, कम्बल, मृगचर्म, शिलाजीत और सुरागायके चँवर आदि मिलते हैं तथा खाने-पीनेका सब सामान और शाक भाजी मिल जाते हैं। यहाँ कालीकमलीवालेकी धर्मशाला, सदावर्त, डाकखाना, तारघर तथा कुली-एजेंसी भी है। बस्तीके पास केला, नींबू, पीपल और कनेर आदिके वृक्ष सुशोभित हैं।

यहाँसे चार मीलपर गरुडगगाका सगम है। इस नदीके दोनों ओर गरुडगगा बस्ती बसी हुई है। यह बहुत ऊँचेसे गिरकर अलकनन्दाजीमें मिल जाती है। काठका पुल पार करनेपर गरुडजीका

मन्दिर आता है तथा सात आठ सीढ़ियाँ उतरकर नदीमें स्नान होता है। यहाँ यात्रीगण अपने पण्डा और पुजारियोंको भी पेड़ा देते हैं। भगवान् गरुडजीकी पूजामें भी दूध पेड़ाका भोग लगाया जाता है। बहुत से यात्री पत्थरका टुकड़ा गरुडजीके चरणोंको स्पर्श कराकर ले जाते हैं। कहते हैं, जिस घरमें ऐसा पत्थरका टुकड़ा रहता है उसमें सर्पका भय नहीं रहता, और यदि सर्प काट ले तो इस पत्थरको पानीमें घिसकर लगानेसे उसका विष उतर जाता है। यहाँ बाबा कालीकमलीवालेकी धर्मशाला और सदावर्त हैं।

गरुडगंगासे जोशीमठ (१२ मील)

गरुडगंगासे दो मील आगे टंगणी चट्टी है। यहाँ स्वामी नर्मदानन्दका धर्मशाला है। पासमें गणेशकुण्ड है और देवदारके वृक्षोंका अधिकता है। फिर दो मील आगे पातालगंगा चट्टी है। यहाँ पातालगंगा नामकी नदी है। उसका पुल पार करनेपर चढ़ाई आती है। यहाँ गणेशजीका मन्दिर है। इसके दो मील आगे गुलाबकोटि है। यह बस्ती टेहरीराजनरेश गुलाबसिंहजीकी बसायी हुई है। यहाँ श्रीलक्ष्मीनारायणजीका मन्दिर है। उससे कई गाँव लगे हुए हैं। दूकानें भी यहाँ कुछ अधिक हैं। इससे दो मील आगे कुमार चट्टी है, इसे हेलंग चट्टी भी कहते हैं। यहाँ सब प्रकारकी आवश्यक वस्तुएँ मिल जाती हैं। बाबाजीकी धर्मशाला और सदावर्त हैं तथा डाकखाना भी है। यहाँसे एक मार्ग श्रीकल्पेश्वरनाथजीको जाता है।

इसके एक मील आगे खनोटी चट्टी है और फिर एक मीलपर झड़कुला चट्टी है। झड़कुलासे दो मीलपर सेलधार है और फिर एक मील आगे जोशीमठ है। जगद्गुरु श्रीशंकराचार्यजीने सनातनधर्मकी

रक्षाके लिये भारतवर्षमें चार दिशाओंमें चार मठ स्थापित किये थे, उनमेंसे उत्तर दिशामें उन्होंने इसी मठकी स्थापना की थी। इसका शुद्ध नाम ज्योतिर्मठ है। यहा श्रीनर-नारायणका सुवर्णशिखरसुशोभित मन्दिर है। शीतकालके छ महीनोंमें इसी मठमें श्रीबदरीनाथ-जीकी चलप्रतिमाका पूजन होता है। यहीं बदरीनाथके रावलजीका निवासस्थान है। इसके सिवा यहा एक मन्दिर श्रीनृसिंहभगवान्‌का भी है। उसीमें श्रीराम-लक्ष्मण-जानकीजी तथा कुबेर, गरुड और चण्डिकाकी मूर्तियाँ भी हैं तथा उसकी प्रदक्षिणामें लक्ष्मीजीसहित श्रीशेषशायी भगवान् विराजमान हैं। यहाँ एक कुण्डमें हस्तिशुण्डोंसे जलकी दो धाराएँ गिरती हैं, जो नृसिंहधारा और दण्डधाराके नामसे विख्यात है।

यहाँसे बदरीनाथपुरी प्राय १८ मील है। वहातक गगाजीके दोनों किनारोंपर जो पर्वतमालाएँ गयी हैं वे नर और नारायणपर्वतके नामसे विख्यात हैं। इनके विषयमें ऐसी किंवदन्ती है कि कलियुगका चतुर्थ चरण आनेपर ये दोनों पर्वत आपसमें मिल जायँगे और फिर श्रीबदरीनाथजीके दर्शन ज्योतिर्मठमें ही हो सकेंगे।

जोशीमठ अच्छी बड़ी बस्ती है। यहा गुलाबके फूलोंकी अधिकता है। बाजार भी बड़ा है। अस्पताल, डाकखाना, तारघर, पुलिसस्टेशन तथा बाबा कालीकमलीवालोंकी धर्मशाला और सदाव्रत है। यहाँसे एक सड़क आठ मीलपर तपोवनको गयी है। वहाँ भविष्यबदरीकी प्रतिमा है। दूसरा रास्ता तिब्बतको जाता है। वह बहुत दुर्गम है। इस मार्गसे घोड़ा, खच्चर आदि कोई भी सवारी नहीं जा [illegible] भेड़ और बकरोंपर सामान लादकर लाया-ले

जाया जाता है। यहाँके बाजारमें सब प्रकारकी आवश्यक वस्तुएँ मिल जाती हैं।

जोशीमठसे हनुमान चट्टी (१५ मील)

जोशीमठसे दो मील आगे विष्णुप्रयाग है। यहाँ अलकनन्दामें विष्णुगंगाका संगम होता है। झूला पार करके सीढ़ियोंद्वारा संगम स्थानतक जाते हैं। संगममें घुसकर स्नान करना बहुत कठिन है, क्योंकि दोनों नदियोंका प्रवाह बहुत तेज है। इसलिये अधिकांश यात्री किनारेपर बैठकर लोटोंसे ही स्नान करते हैं। संगमके ऊपर श्रीविष्णुभगवान्‌का छोटा मन्दिर है, यह उत्तराखण्डके पाँच प्रयागोंमेंसे एक है, इस स्थानपर देवर्षि नारदजीने तपस्या की था। यहाँ अष्टाक्षर मन्त्रके जपका विशेष माहात्म्य है। भक्त यात्रीगण श्रीविष्णुभगवान्‌के सामने खड़े होकर कम-से कम एक माला जपते हैं।

विष्णुप्रयागसे एक मील आगे वलदोदा चट्टी है। यहाँ यात्रियोंके ठहरनेकी विशेष सुविधा नहीं है। इससे चार मील आगे घाट चट्टी है। इधरका मार्ग बहुत ऊँचा-नीचा और घुमाव फिरावका है। यहाँ कई दुकानें और ठहरनेके स्थान हैं। इससे दो मील आगे पाण्डुकेश्वर है। यहाँ योगबदरी और वासुदेवभगवान्‌के दो ऊँचे मन्दिर हैं। दोनों मन्दिरोंपर सुवर्णमय कलश सुशोभित हैं। इनकी दीवारपर एक ताम्रपत्रपर लम्बा लेख है। परन्तु अक्षर स्पष्ट होनेपर भी उस लिपिका ज्ञान न होनेके कारण वे पढ़े नहीं जाते। कहते हैं, यह ताम्रपत्र पाण्डवोंका लिखाया हुआ है। यहाँ अलकनन्दाके दूसरी ओर शतशृङ्गपर्वत है। उसपर महाराज पाण्डुने महारानी कुन्ती और माद्रीके सहित रहकर कुछ काल वनवास किया था।

एक बार उन्होंने मृग और मृगाके रूपमें विहार करते हुए ऋषिदम्पतिको बाणसे वेध दिया । तब उन्होंने शाप दिया कि तुमने सम्भोग करते समय हमारा वध किया है, इसलिये यदि तुम स्त्रीप्रसग करोगे तो तत्काल तुम्हारी मृत्यु हो जायगी । इस शापके अनुसार एक बार माद्रीके साथ सहगमन करते ही उनकी मृत्यु हुई ।

पाण्डुकेश्वरसे एक मील आगे शेषधारा है । फिर दो मील आगे लामबगड चट्टी है । यह छोटी सी चट्टी है । पास ही अलकनन्दाजी-का धारा है । ठहरनेका सुभीता है । बाबा कालीकमलीवालेकी धर्मशाला और सदावर्त हैं । यहाँ कम्बल, चँवर, मृगचर्म और शिलाजीत मिलती हैं । इसके थोडी दूर आगे एक अग्निकुण्ड है । यहा राजा श्वेतकिने सौ वर्षतक यज्ञ किया था । उस यज्ञमें निरतर घृतपान करनेसे अग्निदेवको अरुचि हो गया थी । उसकी निवृत्तिके लिये उन्होंने श्रीकृष्ण और अर्जुनकी सहायतासे खाण्डव वनका दाह किया था । महाभारतके आदिपर्वमें इस प्रसगका सविस्तर वर्णन है । यात्रीलोग इस अग्निकुण्डमें हवन करते हैं । इस स्थानका चार दिशाओमें जो चार पर्वत हैं वे चार वेदोंके नामसे पुकारे जाते हैं ।

यहाँसे तीन मील आगे हनुमान चट्टी है । महाभारतमें यह प्रसग आता है कि वनवासके समय पाण्डवलोग गन्धमादनपर्वतपर जा रहे थे । मार्गमें उन्होंने एक दीर्घकाय वृद्ध वानरको पड़ा देखा । ये श्रीहनुमान्जी थे । इन्हें देखकर भीमसेनने कहा—'अरे वानर ! तू एक ओर हटकर हमें मार्ग दे दे ।' तब हनुमान्जी बोले—'मैं वृद्धावस्थाके कारण बहुत ही दुर्बल हो गया हूँ, मुझसे उठा नहीं

जाना, तुम मुझे एक ओर हटाकर निकल जाओ।' तब भीमसेनने उन्हें दूर हटानेके लिये उनकी पूँछ पकड़ी। परन्तु वे उसे भी उठानेमें समर्थ न हुए। जब सारा भेद खुला तो उन्होंने हनुमान्‌जीकी प्रार्थना की। इससे वे प्रसन्न होकर अन्तर्धान हो गये। यह घटना इसी स्थानकी है। यहाँ श्रीहनुमान्‌जीका मन्दिर है। बस्ती बड़ी है। कई धर्मशालाएँ और सदाव्रत हैं। इस जगह शुद्ध शिलाजीत मिलता है। इसके सिवा तरह-तरहकी जड़ी-बूटी, कस्तूरी, चँवर और मृगचर्म आदिकी भी दूकानें हैं।

यहाँसे बदरीनाथपुरी केवल ५ मील है। रास्ता बहुत चढ़ाईका और घुमावदार है। एक मील जानेपर वीरसिल नामका पुल पार करना होता है। उसके एक मील आगे रडगपुल है। यह लोहेके तारोंपर झूला बनाकर तैयार किया गया है। इसके बाद कड़ी चढ़ाई है। आगे जानेपर कुवरशिला और गणेशजीका मन्दिर आते हैं। यहाँसे श्रीबदरीनाथजीके मन्दिरके दर्शन हो जाते हैं, जो इस स्थानसे प्रायः सवा मील है।

इस यात्राके आरम्भमें गरुड़ चट्टी आता है और अन्तमें हनुमान चट्टी। गरुड़जी और हनुमान्‌जी दोनों ही भगवान्‌के प्रधान पार्षद हैं। इन दोनोंकी कृपासे ही यात्रियोंकी यह विकट यात्रा पूर्ण होती है। यात्रियोंको इनका बड़ा अवलम्बन रहता है। वे मार्गमें प्रतिदिन इनका प्रसाद बाँटकर और स्वयं भी उसमेंसे पाकर पीछे भोजन करते हैं। इस प्रकार भगवद्दर्शनोंकी उत्कण्ठासे प्रेरित होकर वे उन्हींका गुणगान करते हुए श्रीबदरीनाथधाममें पहुँच जाते हैं।

श्रीबदरीनाथपुरी

संसारचक्रे भ्रमतां नराणां शिवप्रदं शान्तिसमाधिनिष्ठम् ।
देवर्षिणा पूजितपादपद्मं बदरीविशालं सततं नमामि ॥

कुबेरशिला पहुँचनेपर देवाधिदेव श्रीबदरीनाथजीके मन्दिरके सुवर्णकलशके दर्शन होने लगते हैं। तब यात्रीलोग भगवान्‌को प्रणाम करके श्रीबदरीविशालकी जय बोलते हैं, तथा जो लोग डाँडीमें यात्रा करते होते हैं वे भी पैदल चलने लगते हैं । यहाँसे बदरीनाथपुरीतक रास्ता सीधा है । विशेष उतराई चढ़ाई नहीं है । बीचमें श्रीभगवानदास बागलाकी धर्मपत्नीका बनवाया हुआ अलकनन्दाजीका एक सुदृढ़ पुल है, जिसे बामनी ब्रिज कहते हैं । यहाँसे पुरीतक राजा महाराजाओंके बहुत से भवन हैं । इनकी संख्या दिनोंदिन बढ़ती ही जाती है । यहाँसे श्रीबदरीनाथपुरीकी शोभा बड़ी ही दर्शनीय है ।

पुरीके पास पहुँचनेपर पहले ऋषिगंगा आती है । उसका पुल पार करके बदरीनाथपुरीमें प्रवेश करते हैं । ऋषिगंगाके किनारे बहुत सी पनचक्कियाँ चलती दिखायी देती हैं । पुरीमें प्रवेश करनेपर यात्रियोंको बड़ा आनन्द होता है, उनका शरीर पुलकित हो जाता है तथा मार्गका सारा श्रम शान्त हो जाता है । उस समय माताएँ प्रेमपूर्वक गान गाने लगती हैं ।

बदरीनाथपुरीमें छोटी-बड़ी बहुत सी धर्मशालाएँ हैं । बहुत से दानवीर यात्रियोंने भी घर बनवाकर अपने तीर्थगुरुओंको दान कर दिये हैं । वे भी यात्रियोंके ठहरानेके लिये काममें लाये जाते हैं । बदरीनाथपुरी प्रायः ३०० घरोंकी बस्ती है । यहाँ अधिकांश घर दोमंजिले हैं । इनकी दीवारें पत्थरकी ईंटोंकी हैं तथा वे पत्थर,

ग्राम अथवा कस्बे बसे गये हैं। यहाँका बाजार भी काफी बड़ा है। उसमें आटा, चावल, दाल, आलू, लकड़ी, दही, दूध, मिठाई, पकवान, पान, तम्बाकू, नारियल, मसाला, निमानवालोंकी चीजें, आसन, कम्बल, कस्तूरी, चँवर, भोजपत्र और शिलाजीत आदि बहुत सी आवश्यक वस्तुएँ मिल जाती हैं। किन्तु वे हैं बहुत महँगी। यहाँ दूध तो ॥।) या १) सेरतक बिकता है। यहाँकी अधिकांश धर्मशालाएँ और सदावर्त बाबा कालीकमलीवालेके तत्त्वावधानमें हैं। इनकी संख्या दिन दिन बढ़ती जाती है।

श्रीबदरीनारायणका मन्दिर बस्तीके उत्तरीय भागमें स्थित है। इसके सामने नीचाईपर श्रीअलकनन्दाजी कल-कल निनाद करती बह रही हैं। मन्दिरकी ऊँचाई प्राय ४५ फुट है। ऊपरका कलश और ढाई-तीन हाथतक गुम्बज सुवर्णपत्रसे विभूषित है। मन्दिरके सभामण्डपमें तीन द्वार हैं। प्रधान द्वार पूर्वमें है तथा एक उत्तरमें और दूसरा दक्षिणमें। पूर्वके द्वारसे ५०-६० यात्रियोंकी टोली जाती है। फिर फाटक बन्द कर दिया जाता है। जब वह दर्शन करके दक्षिण द्वारसे निकल जाती है तब दूसरी टोली भीतर जा सकती है। उत्तरका द्वार प्राय बन्द रहता है। इन द्वारोंका प्रबन्ध रावलजीके सिपाहीलोग करते हैं।

सभामण्डपके पश्चिमी भागमें अन्तर्वेदी है। उसमें भगवान् बदरीविशालकी ध्यानावस्थित श्यामवर्ण विशाल मूर्ति है। इसकी ऊँचाई प्राय एक हाथ है और इसके ललाटपर हीरेकी चमचमाहट सुशोभित है, तथा ऊपर सुवर्णका छत्र लगा हुआ है। भगवान्की दाहिनी ओर कुबेर, उद्धव, गणेश और गरुडजी तथा बायीं ओर लक्ष्मीजी, नर-नारायण और देवर्षि नारद विराजमान हैं।

यात्रालोग पहले तप्तकुण्डमें स्नान करते हैं। इसका जल बहुत गर्म है। यह अग्निदेवका उत्पत्तिस्थान बतलाया जाता है। यहाँसे भगवान्‌के मन्दिरतक पक्की सडक बना हुई है। उसके दोनों ओर दूकान हैं, जिनपर श्रीबदरीनारायणजीकी पोशाकके लिये धोती, दुपट्टा और मुकुट आदि तथा बर्तन, चित्रपट, पुस्तकें और अन्यान्य सामान बिकता है। प्रातःकालमें निर्वाण-दर्शन होता है। उस समय रावलजी भगवान्‌को स्नान कराते हैं। जिस समय रावलजी ऊँनी चोगा पहने हुए मन्दिरमें पधारते हैं उस समय समस्त पण्डित, पुजारी और यात्रीलोग अगल-बगल पंक्तिबद्ध होकर खड़े हो जाते हैं और बीचमें उनके लिये मार्ग छोड़ दिया जाता है। मन्दिरमें पधारनेपर रावलजी भगवान्‌के वस्त्र उतारकर उन्हें पहले पञ्चामृतसे और फिर गङ्गाजलसे स्नान कराते हैं। उस समय विद्वान् पण्डितगण उच्चस्वरसे वेदपाठ करते रहते हैं। इस समय भगवान्‌के सर्वाङ्ग दर्शन करके यात्री आनन्दविभोर हो जाते हैं।

स्नानके पश्चात् भगवान्‌को वस्त्राभूषण पहनाये जाते हैं। फिर धूपदीपसे आरती की जाती है। जबतक आरती होती है वेदगान होता रहता है। दिनमें दस बजेके लगभग भगवान्‌को भोग लगाया जाता है। भगवान्‌की रसोई बड़ी पवित्रतासे बनायी जाती है। फिर सब पदार्थ एक चौकीके थालमें परोसकर मन्दिरमें लाये जाते हैं। रावलजी विधिपूर्वक भगवान्‌को उनका भोग लगाते हैं। इसके पश्चात् पाकशालामें बने हुए कढ़ी, भात एवं दाल आदि समस्त व्यञ्जन पीतलके पात्रोंमें परोसकर मन्दिरकी दाहिनी ओर गङ्गाजल छिड़ककर लगा दिये जाते हैं। उनमें रावलजी गङ्गाजल और

तुलसीदल छोड़ देते हैं। बस, यह भगवान्‌का महाप्रसाद हो जाता है। इसे कोई भी कहीं भी उठाकर ले जा सकता है। इसमें छून नहीं मानी जाती। इसे पण्डेलोग अपने-अपने यजमानोंको खिलाते हैं।

कहते हैं, श्रीबदरीनाथजीकी वर्तमान मूर्ति श्रीशंकराचार्यजी को नारदकुण्डमें मिली थी। मन्दिरके चारों ओर दीवारका घेरा है। इस घेरेके भीतर चौड़ा मैदान है। इसीमें होकर यात्रालोग भगवान्‌के मन्दिरकी परिक्रमा करते हैं। यह परिक्रमा प्रायः ७० सौ गजकी है। इसका बड़ा माहात्म्य माना जाता है। इस मैदानमें दायीं ओर एक चबूतरेपर गरुड़जीकी मूर्ति है, उनके पीछे हनुमानजीकी विशाल मूर्ति है, दक्षिणमें पाकशाला है और उसके पश्चिममें लक्ष्मीजीका मन्दिर है। भगवान्‌के मन्दिरके पीछे धर्मशिला और चरणोदकका कुण्ड है तथा बायीं ओर घण्टाकर्ण क्षेत्रपाल और अष्टधातुका बड़ा घण्टा है। फाटकके बाहर नीचे आनेपर बायीं ओर रावलजीकी गद्दी और उनका दफ्तर है। यहाँ भगवान्‌के भोगके लिये भेंट दी जाती है और बदलेमें महाप्रसाद मिलता है।

श्रीबदरीनाथधाममें तप्तकुण्डके स्नानका बड़ा माहात्म्य है। जो पुरुष यहाँ आकर इसमें स्नान और तर्पण नहीं करता उसकी यात्रा निष्फल मानी जाती है। कुण्डमें गर्म जलकी दो धाराएँ गिरती हैं तथा एक पतली सी धारा शीतल जलकी भी गिरती है। यह प्रायः सोलह हाथ लम्बा-चौड़ा और नाभिपर्यन्त गहरा है। इसके चारों ओर सन्ध्यातर्पणादि करनेके स्थान बने हैं। इसमें तर्पण करनेसे पितरोंको बड़ी तुष्टि होती है। कुण्डके समीप ही नारद शिला है और उसके नीचे नारदकुण्ड है। इसके सिवा ब्रह्मकुण्ड,

गौरीकुण्ड और सूर्यकुण्ड भी हैं। शिलाएँ भी पाँच ही हैं। नारदशिलाके अतिरिक्त गरुडशिला, नृसिंहशिला, वाराहशिला तथा मार्कण्डेयशिला और हैं।

अन्य दर्शनीय स्थान

ब्रह्मकपालशिला—पुरीसे प्राय तीन मील पगडण्डीके रास्ते जानेपर ब्रह्मकपालशिला आती है। यहाँ भगवान्‌का प्रसादी भात मोल लेकर उससे पिण्डदान किया जाता है। इससे पितरोंको ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है और फिर उनके लिये कहीं भी श्राद्ध करनेकी आवश्यकता नहीं रहती। इसके पास ही नरपर्वतपर महात्माओंके लिये बहुत सी कुटिया बनी हुई हैं, जिनमें कितने ही तपोनिष्ठ महात्मा निवास करते हैं।

रामानुजकोट—यह स्थान वैष्णवोंका है। यहाँ श्रीरामानुजाचार्यने तपस्या की थी। इस स्थानके खर्चेका प्रबन्ध महाराज रीवाँकी ओरसे है। यहाँका आचार-विचार सराहनीय है। यहाँ भगवान्‌की मूर्तिकी झाँकी होती है।

वसुधारा—ब्रह्मकपालशिलाके पास इन्द्रधारा और वसुधारा है। यहाँ अष्ट वसुओंने तपस्या की थी। यह पूरी धारा [illegible] नहीं आता, बीचमें पर्वतके पार्श्वसे टकरानेके कारण [illegible] छितराती हुई बूँदोंमें परिणत हो जाती है। इसका [illegible] है तथा इसमें स्नान करनेका भी बड़ा माहात्म्य है।

सूर्यप्रयाग—वसुधारासे तीन मील [illegible] सूर्य-प्रयाग है। यहाँ एक कुण्ड है, जिसमें कुछ [illegible] करनेसे कुष्ठरोग भी छूट जाता है। इससे [illegible]

है। यह स्थान बड़ा दुर्गम है और सब ओरसे हिमाच्छादित पर्वतमालामें घिरा हुआ है। यहींसे महाराज युधिष्ठिरने सदेह स्वर्गारोहण किया था। इसके आगे कोई मार्ग नहीं है।

गणेशगुफा और व्यासाश्रम—ब्रह्मकपालीसे दो मीलपर माणा गाँव है। इसका पूर्वनाम मणिभद्रपुरी है। यहाँ गणेशगुफा और व्यासाश्रम हैं। इसी स्थानपर श्रीव्यासजीने गणेशजीद्वारा महाभारत लिखवायी थी तथा यहीं अठारहों पुराण लिखे गये थे। यह स्थान सरस्वती नदीके तीरपर है। इससे थोड़ी दूरपर मुचुकुन्द गुफा है। यहाँसे तिब्बत, मानसरोवर और कलाशको मार्ग जाता है, परंतु इसकी अपेक्षा जोशीमठवाला मार्ग अधिक सुभीतेका है।

श्रीबद्रिकाश्रमकी कथा

सत्ययुगमें नर और नारायण नामक दो ऋषि हुए हैं। साक्षात् श्रीहरिने ही निवृत्तिमार्गका उपदेश करनेके लिये उनके रूपमें अवतार लिया था। उन्होंने यहाँ रहकर घोर तपस्या की थी। तभीसे यहाँ श्रीविष्णुभगवान्‌की प्रतिमा विद्यमान है। आरम्भमें नर और नारायणने उसकी उपासना की, फिर नारदजी और उद्धवजी आदि भक्तगण उसकी सेवा पूजा करते रहे, उनके पीछे भगवान् व्यासने यहाँ रहकर तपस्या और भगवदाराधना की। पीछे बौद्धोंका प्राबल्य हुआ तो उन्होंने वह मूर्ति अलकनन्दाजीमें प्रवाहित कर दी। उनके बाद जब श्रीशङ्कराचार्यजी दिग्विजय करते हुए यहाँ पधारे तो उन्होंने उस प्रतिमाको नारदकुण्डमें निकालकर पुनः प्रतिष्ठित किया। उस समय मूर्ति गरुडगुफामें स्थापित की गयी थी और आचार्यके पीछे उसकी सेवा पूजाका भी कोई सुप्रबन्ध नहीं

था। कालान्तरमें जब यहाँ श्रीरामानुजाचार्य पधारे तो उन्होंने तत्कालीन टेहरीनरेशको आज्ञा देकर भगवान्‌का मन्दिर बनवाया और उनकी सेवाका सुप्रबन्ध किया।

भगवान् शङ्कराचार्य नम्बूरी ब्राह्मण थे और उन्होंने भगवान्‌की पूजाका अधिकार भी एक निष्ठावान् नम्बूरी ब्राह्मणको ही दिया था। तबसे यहाँके रावल नम्बूरी ब्राह्मण ही होते आये हैं। पहले नायब रावलकी नियुक्ति होती है, वही पीछे रावलका पद ग्रहण करता है। यदि नायबका पद रिक्त होनेपर रावलकी ओरसे नायबकी नियुक्ति नहीं होती तो स्वयं टेहरी महाराज नायबकी नियुक्ति करते हैं। यहाँकी आय-व्ययका सारा ब्योरा भी टेहरी महाराज देखते हैं और उन्हींकी सम्मतिसे रावलको मन्दिर और मन्दिरकी जायदादका प्रबन्ध करना होता है। उचित कारण होनेपर महाराजको रावल और नायब रावलको पदच्युत करनेका भी अधिकार है। मन्दिरकी वार्षिक आय प्रायः एक लाख रुपया है।

इस प्रकार श्रीबदरीनाथधामके दर्शन कर यात्री अपनेको कृतकृत्य मानकर भगवान्‌से विदा होते हैं और अपने अपराधोंके लिये क्षमायाचना करते हैं। उस समय मन्दिरके पुजारी भगवान्‌का प्रसादी, माला और भोग देते हैं। तथा यात्रीलोग अपने-अपने तीर्थ-गुरुओंके चरणोंकी पूजा कर उन्हें यथाशक्ति दक्षिणा देकर यात्रा सफल कराते हैं। श्रीबदरीनाथपुरीसे चलकर यात्री लालसागातक उपर्युक्त मार्गसे ही लौटते हैं। फिर नीचे आनेके लिये रामनगर-मण्डी-

बदरीनाथसे रामनगर-मण्डी

लालसागासे नन्दप्रयाग (७॥ मील)

लालसागा या चमालीसे दो मील आगे बुहेड नदी है और उससे दो मील आगे मठियानी नदी है। ये दोनों नदियाँ बहुत छोटी हैं। इनसे तीन मील आगे नन्दप्रयाग है। यहाँ अलकनन्दा और नन्दगंगाका संगम है। किसी समय यहाँ श्रीनन्दजीने तप किया था। इसीसे यह स्थान 'नन्दप्रयाग' नामसे प्रसिद्ध हुआ है। यहाँ श्रीनन्दजी और गोपालजीका मन्दिर है। यह उत्तराखण्डके पाँच प्रयागोंमेंसे एक है। अच्छी बड़ी बस्ती है। दूकान भी बहुत हैं। बाबा कालीकमलीवालोंकी धर्मशाला और सदावर्त हैं तथा डाकखाना और तारघर भी हैं।

नन्दप्रयागके पास ही कण्वाश्रम है। यहाँ कण्व मुनिने श्रीविष्णुभगवान्‌का तप किया था और उनसे यहाँ स्थिर रहनेका वर प्राप्त किया था। नन्दप्रयागसे एक पगडण्डा गया है। उसपर सात मीलकी दूरीपर वैरासकुण्ड है। यहाँ एक प्राचीन शिवमन्दिर [illegible] मनोहर।

[illegible] ।

वाले लोग काठगोदाम स्टेशनपर अथवा श्रीकोटद्वार धाम रामनगर तक मोटर सवार हो जाते हैं। पहले मार्गका उल्लेख हो चुका है। इसलिये अब दूसरे मार्गका वर्णन किया जाता है। इसमें जानेमें भी अधिकांश यात्री रामनगरतक मोटरसे ही जाते हैं इसलिये उसीका वर्णन किया जायगा।

कर्णप्रयागसे मेहलचौरी (३६॥ मील)

कर्णप्रयागसे ३॥ मीलपर सेमला चट्टी है। यहाँ पिण्डर नदी है तथा डाकघर भी जङ्गल है। ठहरनेके लिये स्थान पर्याप्त है। यहाँसे ढाई मीलपर नौटी चट्टी है और उसके आगे साढ़े चार मीलपर आदिबदरी है। यहाँ श्रीआदिनारायणका प्राचीन मन्दिर है। उसके आस-पास अन्यान्य देवी देवताओंके दश मन्दिर और हैं। ये सभी प्राचीन हैं। धर्मशाला यहाँ है। दुकानें भी काफी हैं।

आदिबदरीसे साढ़े चार मीलकी चढ़ाई चढ़नेपर जौंकाराना चट्टी आती है। उसके दो मील आगे दिवालीखाल चट्टी है। यहाँ एक कुआँ और पौसाला है तथा पञ्चायती सरकारी धर्मशाला और सदावर्त हैं। इससे एक मील आगे काण्डीगाड़ चट्टी है। यहाँ यद्यपि एक ही दूकान है तो भी ठहरनेके लिये पर्याप्त स्थान है। यहाँसे तीन मील आगे गनाई चट्टी है। फिर डेढ़ मीलपर धुनारघाट है। यहाँ रामगंगा है। यात्रियोंके ठहरनेके लिये धर्मशाला है तथा डाकखाना और पुलिसस्टेशन है। इस ओर रास्ता बहुत चढ़ाई-उतराईका है तथा बीचमें बड़ा सघन वन पड़ता है।

धुनारघाटसे पाँच मीलपर मेलचौरी चट्टी है । यह बहुत बड़ी चट्टी है, परन्तु यहाँ यात्रियोंके लिये विशेष सुविधा नहीं है । केवल एक धर्मशाला है । दूकानें बहुत-सी हैं, परन्तु डाकखाना नहीं है । बस्तीके बीचमें होकर नदी बहती है । उसके ऊपर झूलेका पुल है । यहाँ कुली-एजेंसी भी है । आवश्यकता होनेपर कुली, डाँडी, झपान, खच्चर और घोड़ा आदि मिल सकते हैं । ऋषिकेशसे जो कुली आदि किये जाते हैं वे यात्रियोंको यहीं छोड़ देते हैं । इस चट्टीसे एक मील आगे चलनेपर गढ़वालकी सीमा समाप्त होकर जिला अल्मोड़ा आरम्भ हो जाता है ।

मेलचौरीसे चौखुँटिया (७॥ मील)

मेलचौरीसे डेढ़ मीलपर अनुआगवाल नामकी छोटी-सी चट्टी है । उससे डेढ़ मील आगे सेमलखेत है और सेमलखेतसे साढ़े चार मीलपर चौखुँटिया है । यहाँतकका मार्ग रामगंगाकी घाटीमें होकर ही आता है । यहाँ डाकखाना, पुलिसस्टेशन, डाकबँगला और अस्पताल आदि हैं तथा एक धर्मशाला भी है । आगे दो मार्ग जाते हैं । एक रामनगरको, दूसरा रानीखेतको । रानीखेतवाले मार्गकी प्रधान चट्टियाँ चित्रेश्वर, द्वाराहाट, चण्डेश्वर, गगास और रानीखेत हैं । यहाँसे रानीखेत प्राय ४० मील है । आगे जानेके लिये काठगोदामतक मोटरसे जा सकते हैं । रामनगरके मार्गका विवरण आगे दिया जाता है ।

चौखुँटियासे भिकियासैंण (२१॥ मील)

चौखुँटियासे दो मीलपर भटकोंट चट्टी है । यहाँ झरनेका जल है और मोदीकी दूकानें हैं । यहाँसे एक मीलपर तिपारा चट्टी है, जिसे गणेश चट्टी भी कहते हैं । यहाँपर

धर्मशाला, सदावर्त, बावड़ी और बगीचा आदि हैं। इससे आधा मील आगे नर्मदेश्वर महादेवका मन्दिर है फिर ७ मीलपर मासी चट्टी है। यहाँ डाकखाना है तथा पास ही श्रीरामगंगाजी हैं।

मासीसे चार मीलपर वृद्धकेदार चट्टी है। वृद्धकेदारजीका मन्दिर रामगंगाके दूसरे तटपर है। उनके दर्शनोंके लिये नदीको तैरकर पार करना होता है। यहाँसे पाँच मील दूर भौता चट्टी है। यहाँ एक धर्मशाला और बावड़ी है। इससे दो मील आगे भिकियासैण है। यह अच्छी बड़ी चट्टी है। यहाँ धर्मशाला, सदावर्त, औषधालय, डाकखाना और पुलिसस्टेशन हैं। इस स्थानपर रामगंगासे रंगेश्वरी और नर्मदेश्वरी दो नदियोंका संगम होता है। यहाँसे रामनगरतक बैलगाड़ीसे भी यात्रा की जा सकती है, किंतु गूजरघाटीतक बैलगाड़ीका मार्ग २२ मील है और पैदलका १० मील। इससे आगे चौड़ी सड़क मिलती है। नीचे गूजरघाटीतक पैदलके मार्गका विवरण दिया जाता है।

भिकियासैणसे गूजरघाटी (१० मील)

भिकियासैणसे दो मीलपर शेरकोट है। यहाँतक चढ़ाई पड़ती है। जलके लिये एक पहाड़ी नाला है। शेरकोटसे दो मीलपर बाँसकोट है और उससे तीन मीलपर खेलगाम है। यहाँ एक छोटी सी धर्मशाला है। इससे तीन मील आगे गूजरघाटी है। यहाँतक चढ़ाई पड़ती है और जलकी भी कमी है। इस चट्टीपर रामनगरके लिये घोड़े और बैल भी किरायेपर मिल सकते हैं।

गूजरघाटीसे रामनगरमण्डी (३० मील)

गूजरघाटीसे दो मील कपूरनौला है। यहाँतक मार्ग अच्छा नहीं है। केवल एक दूकान है, और जल भी दूर है। कपूरनौली

से ढाई मील देवगाना है और उससे दो मील गोदी चट्टी है। यहाँ सरकारी धर्मशाला है तथा जलका नल लगा हुआ है। इस स्थानसे दो मील टूटाआम है। यहाँ एक डाकबँगला भी है। टूटाआमसे दो मील सौराल चट्टी है। यह अच्छा बड़ा पड़ाव है और जल भी समीप ही है। सौराल चट्टीसे चार मील कुमरिया चट्टी है। यहाँ जलकी कमी है। आधा मील दूर कोसी नदीसे लाना होता है। इससे तीन मील मोहन चट्टी है। यह कोसी नदीके समीप है। यहाँसे चार मीलपर गर्जिया चट्टी है। यहाँ डिस्ट्रिक्टबोर्डकी ओरसे एक स्कूल है। जल भी पास है। गर्जियासे दो मीलपर ढिकली चट्टी है। यहाँ धर्मशाला, सदावर्त और बगीचा लगा हुआ है।

ढिकली चट्टीसे चार मीलपर रामनगर है। यहाँ भगवान् रामचन्द्रका मन्दिर है। यात्रीलोग धर्मशाला और मन्दिरमें ठहरते हैं। बहुत लोग वृक्षोंकी छायामें भी विश्राम करते हैं, पीनेके लिये कोसीका जल है। वर्षाऋतुमें यह जल अच्छा नहीं रहता। इसलिये उन दिनोंमें बहुत से दूकानदार अपनी दूकानें उठा लेते हैं। यहाँ पहुँचनेपर पर्वतीय यात्रा समाप्त हो जाती है। इसलिये बहुत से यात्री यहाँ ब्राह्मण भोजन कराकर रेल्वेद्वारा अपने गन्तव्य स्थानको चले जाते हैं। यहाँ डाकखाना, तारघर, पुलिसस्टेशन और औषधालय आदि हैं। यह रुहेलखण्ड कमाऊँ रेल्वे (R K R) का स्टेशन है। यहाँसे काशीपुर होकर मुरादाबाद आते हैं और फिर जहाँ इच्छा हो वहाँ जा सकते हैं।

उपसंहार

यहांतक भिन्न भिन्न तीर्थोंका वर्णन किया गया। संसारमें सभी सम्प्रदायोंके अपने-अपने उपासनास्थान नियत हैं। सभी सम्प्रदाय अपनी अपनी भावनाके अनुसार भगवान्‌की उपासना करते हैं। संसारमें उस एक ही अनादिशक्तिकी भिन्न भिन्न प्रकारसे आराधना की जाती है। इन सम्प्रदायोंकी संख्या प्रायः सोलह सहस्र बतलायी जाती है। भगवान्‌के विषयमें इन सबकी एक ही धारणा होनी सर्वथा असम्भव है। इससे यह नहीं मानना चाहिये कि यदि अन्य मतावलम्बियोंकी धारणा हमारे मतके अनुसार नहीं है तो उन्हें भगवान्‌के दरबारमें स्थान ही नहीं मिल सकता। वास्तवमें तो प्रत्येक प्राणी अपने अपने विश्वासके अनुसार भगवान्‌का चिन्तन करते हुए ही परमगति प्राप्त कर सकता है। भगवान्‌की प्राप्तिके लिये तो हमें भगवान्‌का अनन्य भक्त होनेकी आवश्यकता है। तीर्थदर्शनसे तो केवल सामयिक शान्ति मिलती है। जिस प्रकार किसी देवालयमें जानेपर वहाँकी स्वाभाविक पवित्रतासे चित्तको एक प्रकारकी प्रसन्नताका अनुभव होता है उसी प्रकार तीर्थदर्शनसे भी तात्कालिक शान्ति अवश्य मिलती है। हाँ, यदि हम भगवदाराधनामें लग जायँ तो वह अवश्य स्थायी हो सकती है।

प्रत्येक तीर्थसे किन्हीं-न-किन्हीं महापुरुष एवं अवतार आदिका सम्बन्ध रहता है। उनके कारण ही उसे तीर्थत्व प्राप्त होता है। इसलिये तीर्थयात्रा करनेपर हमें ऐसे महापुरुषोंका स्मरण करके उनके चरित्रसे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये और उनके चरण-चिह्नोंका अनुसरण कर अपने जीवनको सफल करना चाहिये। यदि तीर्थदर्शन करके हमारे जीवनमें किसी प्रकारका सुधार न हुआ तो वह यात्रा चलनीमें दूध दुहनेके समान निष्फल ही है।

यदि परमपद-प्राप्तिकी इच्छा है तो वह तो अपने हृदयरूपी सिंहासनपर भगवान्‌को विराजमान करानेसे ही होगी। वस्तुतः विशुद्ध मन ही परमतीर्थ है और मनकी शुद्धिके लिये ही तीर्थ-दर्शनादि सारे बाह्य साधन हैं।

ज्ञानं तीर्थं धृतिस्तीर्थं पुण्यं तीर्थमुदाहृतम्।
तीर्थानामपि तत्तीर्थं विशुद्धिर्मनसः परा॥*

इसलिये सब प्रकारके मत-मतान्तर-सम्बन्धी झंझटोंको छोड़कर मनुष्यको अपनी धारणाके अनुसार सच्ची लगनके साथ भगवद्भजनमें लग जाना चाहिये। भगवान्‌की लीलाका रहस्य किसीकी समझमें नहीं आ सकता। इसलिये संसारमें दिखायी देनेवाली विचित्रताओंमें उलझनमें न पड़कर भगवद्भजनमें लग जाना ही सच्ची बुद्धिमानी है। यदि किसी बगीचेकी सुन्दरताको देखकर कोई यह निर्णय

* [ज्ञान] तीर्थ है, धैर्य तीर्थ है तथा पुण्य भी तीर्थ कहा गया है; [किंतु मनकी जो] उत्कृष्ट शुद्धि है वह तीर्थोंका भी तीर्थ है।

वगनेमें लग जाय कि इसे किसने लगाया, इसमें कितने वृक्ष हैं, उनकी जड़ें कहाँतक गयी हैं और फल कैसे लगते हैं? इत्यादि— तो उस जिज्ञासुका जीवन तो इन उलझनोंके सुलझानेमें ही समाप्त हो जायगा। उसकी अपेक्षा तो वही पुरुष विशेष बुद्धिमान् है जो इस प्रकारके मायाजालमें न पड़कर चुपचाप उसके मधुर फल खाने लगता है। इसी प्रकार जो व्यर्थ तर्क वितर्कोंको छोड़कर भगवद्भक्तिरूप अमृतमय रसका पान करनेमें मग्न है वही सच्चा बुद्धिमान् है, क्योंकि समस्त सम्प्रदायोंका चरम लक्ष्य तो एकमात्र श्रीभगवान् ही हैं। हमने देखा था कि प्रयागके कुम्भपर्वपर भिन्न भिन्न सम्प्रदायोंके साधु गृहस्थ लाखोंकी संख्यामें एकत्रित हुए थे, किन्तु कुम्भपर्वके समय उन सबका एकमात्र लक्ष्य त्रिवेणीस्नान ही था। उसी प्रकार विभिन्न सम्प्रदायोंमें ऊपरसे कितना ही भेद क्यों न रहे उनका आन्तरिक लक्ष्य तो एकमात्र भगवत्प्राप्ति ही है।

इसलिये कल्याणकामी महानुभावोंको चाहिये कि निरन्तर शुभ कर्ममें लगे रहकर अपनी जीवन नौकाका पतवार भगवान्के हाथमें सौंप दें। उनके नाविक हो जानेपर आजतक किसीको भी संसारसागरमें डूबते नहीं देखा गया।

इस प्रकार जैसा कुछ बना है यह भगवान्के धामोंका वर्णन भगवद्भक्त पाठकोंकी सेवामें समर्पण किया जाता है। मेरेमें लेखक होनेकी किसी प्रकारकी पात्रता नहीं है। इसलिये इसमें बहुत-सी त्रुटियाँ रह जानी स्वाभाविक हैं। आशा है, उदार पाठक उनके लिये मुझे क्षमा करेंगे।

परिशिष्ट खण्ड

लेखक महोदयने इस ग्रन्थमें केवल उन्हीं तीर्थोंका विवरण दिया है जो उनकी यात्रामें आये हैं। इनसे अतिरिक्त जो अन्य तीर्थ रह गये हैं उनमेंसे कुछ-कुछ स्थानोंका संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जाता है। इसमें अधिकतर कल्याणके शिवाङ्क और शक्ति-अङ्कके परिशिष्टाङ्कोंसे सहायता ली गयी है।

द्वादश ज्योतिर्लिङ्गोंके अतिरिक्त भगवान् शङ्करकी आठ मूर्तियाँ और भी बहुत प्रतिष्ठित हैं। वे पञ्चमहाभूत, सूर्य, चन्द्र और यजमानमूर्तियाँ कहलाती हैं। सूर्यविग्रह भी भगवान् शंकरकी ही मूर्ति है। काठियावाड़के सोमनाथ और बंगालके चन्द्रनाथ भगवान्की चन्द्रमूर्तियाँ हैं। नैपालके पशुपतिनाथ यजमानमूर्ति हैं। शिवकाञ्चीके एकाम्रेश्वर क्षितिलिङ्ग हैं। मदरास प्रान्तके जम्बुकेश्वर जलमूर्ति हैं। तिरुवण्णमलैके अरुणाचलम् तेजोलिङ्ग हैं। आर्काट जिलेके कालहस्तीश्वर वायुलिङ्ग हैं और चिदम्बरम्के नटराज आकाशलिङ्ग हैं। इनमेंसे सोमनाथ, एकाम्रेश्वर, जम्बुकेश्वर और नटराजका विवरण पहले दिया जा चुका है। शेष पशुपतिनाथ, कालहस्तीश्वर और अरुणाचलम्का विवरण इस प्रकरणमें यथास्थान दिया जायगा। पहले श्रीपशुपतिनाथजीका वर्णन किया जाता है।

पशुपतिनाथ

श्रीपशुपतिनाथ नैपालकी राजधानी काठमाण्डूमें वागमती नदीके तटपर विराजमान हैं। यह पञ्चमुखी महादेवजीकी सुवर्णमयी मूर्ति है और केवल कटिप्रदेशसे उपरका ही भाग है। मूर्तिके आसपास चाँदीका जँगला है, जिसमें पुजारीके सिवा और किसीके भी प्रवेश करनेकी आज्ञा नहीं है। यहाँतक कि स्वयं नैपालसम्राट् भी उसके भीतर नहीं जा सकते। श्रीपशुपतिनाथ ही नैपालके वास्तविक सम्राट् हैं। नैपालनरेश उनके प्रधान मन्त्री कहे जाते हैं। नैपाल राज्यमें बिना पासपोर्टके बाहरका कोई मनुष्य नहीं जा सकता, केवल महाशिवरात्रिके अवसरपर एक सप्ताहके लिये यह नियम नहीं रहता। उसी समय देश देशान्तरकी जनता काठमाण्डू जाकर श्रीपशुपतिनाथके दर्शनोंसे अपने नेत्रोंको कृतार्थ करती है। यहाँ जानेके लिये यात्रियोंको रक्साल स्टेशनपर उतरना चाहिये। रक्सौलसे तीन दिनका पैदलका मार्ग है।

गुह्येश्वरी

श्रीपशुपतिनाथसे दो फर्लांगकी दूरीपर नैपालराज्यकी अधिष्ठात्री श्रीगुह्येश्वरीदेवी हैं। ये भी वागमती नदीके तीरपर ही विराजती हैं। नैपालराज्य इनका अनन्य भक्त है और नवरात्रके दिनोंमें स्वयं महाराज सपरिवार नित्यप्रति वागमतीमें स्नान करके इनके दर्शन करते हैं। यह भारतके प्रधान शक्तिपीठोंमेंसे एक है।

हरिहरक्षेत्र

बिहार प्रान्तके सारन जिलेमें श्रीगङ्गा और गण्डकीके सङ्गमपर सोनपुरनामक एक स्थान है। इसीको हरिहरक्षेत्र कहते हैं। यहाँ प्रत्येक कार्तिकी पूर्णिमापर दस दिनतक बहुत बड़ा मेला होता है। इतना बड़ा मेला उत्तर भारतमें सम्भवतः अन्यत्र नहीं होता। इस समय यहाँ हाथी, घोड़े, ऊँट, गाय, भैंस आदि जीवजन्तु तथा कपड़े, बरतन एवं अन्यान्य सब प्रकारकी चीजोंका व्यवसाय होता है।

कहते हैं, इसी स्थानपर श्रीविष्णुभगवान्‌ने ग्राहके मुखसे गजेन्द्रका उद्धार किया था तथा जिस समय भगवान् राम सीताजीके स्वयंवरमें जनकपुर पधारे थे उस समय इसी स्थानपर उन्होंने मुनिवर विश्वामित्रजीसे श्रीगङ्गाजीकी उत्पत्तिकी कथा सुनी थी। उसी समय उन्होंने यहाँ एक विष्णुमन्दिरकी स्थापना की थी। यह स्थान बी० एन० डब्ल्यू० आर० का स्टेशन है।

नवद्वीप

सुशोभमान रहता है। गौडीय सम्प्रदायके वैष्णव इसे श्रीवृन्दावन धामके समान पवित्र मानते हैं।

यह नगर बहुत दिनोंसे विद्याका केन्द्र रहा है। श्रीचैतन्यदेवके समय यहाँ सैकड़ों टोल थे, जिनमें विभिन्न देशोंके सहस्रों विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते थे। उसी समय श्रीरघुनाथशिरोमणिने मिथिलाके पक्षधरमिश्रको शास्त्रार्थमें परास्त कर यहाँ न्यायका प्राधान्य स्थापित किया था। तबसे आजतक यह नगर न्यायका प्रधान पीठ रहा है। यहाँ भिन्न भिन्न प्रान्तोंसे बहुत से विद्वान् न्यायकी उच्चकोटिकी शिक्षा प्राप्त करने आते हैं। भारतवर्षमें न्यायका प्रधान केन्द्र नवद्वीप ही है।

नवद्वीपका वर्तमान नाम नदिया है। किसी समय यह सेनवंशीय राजाओंकी राजधानी थी। इस समय इसकी वह पूर्वश्री तो नहीं है, तो भी भावुक भक्त और विचारशील नैयायिकोंके हृदयमें आज भी इसके लिये वैसा ही आदर है। इसकी जनसंख्या प्राय दस हजार है। यहाँ प्राय १४ १५ टोल हैं, जिनमें सैकड़ों विद्यार्थी विद्योपार्जन करते हैं।

गोहाटी

यह आसाम प्रान्तका एक प्रसिद्ध नगर है। यहाँसे दो मील पश्चिमकी ओर नीलगिरि अथवा नीलकूटनामक पर्वतपर एक प्रधान

सिद्धपीठ है, जो भगवती कामाख्या या कामाक्षाके नामसे प्रसिद्ध है। कालिकापुराणके अनुसार यहा देवी सतीकी योनि गिरी थी। यह भारतके प्रधानतम शक्तिपीठोंमें है। यहाँके समान शक्तिसम्बन्धी अनुष्ठानोंकी सिद्धि अन्यत्र कहीं नहीं होती। प्रधान तीर्थ एक अँधेरी गुफाके भीतर है। इस स्थानपर एक कुण्ड-सा है जो पुष्पोंसे आच्छादित रहता है। इस योनिपीठके पास ही एक मन्दिरमें देवीकी मूर्ति भी है। यात्रियोंको यहाँ पण्डोंके घरोंमें ही ठहरना होता है।

तिरुवण्णमलै

यह स्थान चिदम्बरम्‌के उत्तर पश्चिममें विल्लुपुरमसे आगे कटपडी जानेवाली लाइनपर है। यहाँ श्रीमहादेवजीकी सुप्रसिद्ध अष्टमूर्तियोंमेंसे अरुणाचलम् नामका तेजोलिङ्ग विद्यमान है। यहाँ श्रीपार्वतीजीने तपस्या की थी। उस समय अरुणाचल पर्वतमें अग्नि-शिखाके रूपमें एक शिवलिङ्ग प्रकट हुआ। वही वर्तमान तेजोलिङ्ग है। यह स्थान भारतके प्रधान तीर्थोंमेंसे एक है। इसे दक्षिणका कैलाश कहते हैं।

तञ्जौर

यह दक्षिण भारतका बहुत प्राचीन नगर है। यहाँका बृह-दीश्वर महादेवका मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है। मन्दिरके बाहर नन्दीश्वर की बहुत विशाल मूर्ति है, जो सोलह फीट लंबी, सात फीट चौड़ी [illegible] १२ फीट ऊँची है। यह मन्दिर प्रायः एक सहस्र

त पुराना है। इसकी ऊँचाई दो सौ फीटके लगभग है। मन्दिरके चार और खिड़की-सी मार्ग हैं। प्रधान द्वारके गोपुरकी ऊँचाई प्राय सत्र फीट है। इस मन्दिरके पास ही सुब्रह्मण्य स्वामी अर्थात् श्रीस्वामिकार्तिकेयजीका मन्दिर है। उसकी शोभा भी अतुलनीय है।

तञ्जौरके राजमहल और पुस्तकालय भी दर्शनीय हैं। इस पुस्तकालयमें संस्कृतकी प्राय १८ हजार हस्तलिखित पुस्तकें हैं, जिनमेंसे ८ हजारके लगभग ताड़पत्रपर लिखी हुई हैं।

कालहस्तीश्वर

तिरुपति बालाजीसे कुछ ही दूर उत्तर आरकट जिलेमें सुवर्णमुखी नदीके तटपर कालहस्तीश्वरका शिवलिङ्ग है। मन्दिर बहुत ऊँचा और सुन्दर है तथा रेलवे स्टेशनसे प्राय एक मीलकी दूरीपर है मन्दिरके गर्भगृहमें वायु और प्रकाशका अभाव रहता है। दर्शन भी दीपकके प्रकाशमें होते हैं। लोगोंका विश्वास है कि यहाँ भगवान् शंकर एक वायुके विशेष झोंकेके रूपमें सर्वदा विराजते रहते हैं। यह शिवलिङ्ग गोल नहीं है, चौकोर है। शिवलिङ्गके सामने ही कण्णप्प भीलकी मूर्ति है। यह एक अनन्य शिवभक्त हो गया है, इसने अपने दोनों नेत्र निकालकर शिवजीको अर्पण कर दिये थे। इससे प्रसन्न होकर जब भगवान्ने वर माँगनेको कहा तो इसने यही वर माँगा कि मैं आपकी सेवाके लिये सर्वदा आपके समीप ही रहूँ।

सुवर्णमुखी नदीका सम्बन्ध शालग्राममूर्तिसे माना जाता है। अब जिन यात्रियोंके पास शालग्रामकी मूर्ति रहती है वह यहाँ

एक रात्रि अनन्य निवास करते हैं। दाक्षिणात्यलोग इस तीर्थको काशीके समान ही मोक्षदायक मानते हैं। यहाँ एक मणिकुण्डेश्वर नामका मन्दिर है। इसमें लोग मरणासन्न व्यक्तिको सुला देते हैं। उनका विश्वास है कि काशीके समान यहां भी श्रीमहादेवजी मरणासन्न पुरुषको तारक मन्त्रका उपदेश करके मुक्त कर देते हैं। यहाँ शिवरात्रिके अवसरपर सात दिनतक बड़ा मेला लगता है। पास ही एक पहाड़ीपर भगवती दुर्गाका भी मन्दिर है।

मल्लिकार्जुन

मद्रास प्रान्तके कृष्णा जिलेमें कृष्णानदीके तटपर श्रीशैल नामका एक पर्वत है। उसके ऊपर मल्लिकार्जुन नामका ज्योतिर्लिङ्ग विराजमान है। कहते हैं, किसी समय इस पर्वतके समीप चित्रगुप्त-नामक एक राजाकी राजधानी थी। उसकी कन्या एक विशेष विपत्तिसे बचनेके लिये राजमहलसे भागकर श्रीशैलपर चली आयी। उसके पास एक श्यामा गौ थी। कोई अज्ञात व्यक्ति रोज चुपचाप उस गायका दूध दुह लेता था। एक दिन संयोगवश राजकन्याने उस चोरको दूध दुहते देख लिया। वह उसे मारनेको दौड़ी। परंतु वहाँ एक सुन्दर शिवलिङ्गके अतिरिक्त और कुछ दिखायी न दिया। उस राजकन्याने वहां एक सुन्दर मन्दिर बनवा दिया। वही शिवलिङ्ग मल्लिकार्जुनके नामसे प्रसिद्ध हुआ।

दक्षिणमें इस स्थानका बहुत मान है। श्रीशैलको कैलाशके समान पवित्र समझा जाता है तथा भगवान् मल्लिकार्जुनके दर्शनार्थ दूर से राजा महाराजा भी आते रहते हैं। यह मन्दिर प्राय

ना हजार वर्ष पुराना है। इसकी कारीगरी अद्भुत दर्शनीय है। अबसे चार सौ वर्ष पूर्व यहाँ विजयनगरके राजा कृष्णराय आये थे। उन्होंने यहाँ एक सुवर्णशिखरमण्डित मण्डप बनवाया था। इनके पीछे महाराज शिवाजीने भी यहाँकी यात्रा करके एक धर्मशाला बनवायी थी। यहाँ शिवरात्रिके अवसरपर बड़ा भारी मेला लगता है। मन्दिरके समीप पार्वतीजीका एक अलग स्थान है। उन्हें यहाँ भ्रमराम्बा कहते हैं।

यहाँ जानेके लिये एम० एस० एम० रेलवेके वाल्टेयर स्टेशनसे मद्रास और दक्षिण मराठा रेलवेद्वारा बेजवाड़ा जाना चाहिये। वहाँसे गुण्टकल जानेवाली लाइनसे चलकर नन्द्याल स्टेशनपर उतरें। नन्द्यालसे मोटरद्वारा आत्माकूर ग्राम जायँ। वहाँसे बारह मील दूर बैलगाड़ीद्वारा नागालूटी जायँ तथा महानन्दि और वीरभद्र स्वामीके मंदिर एवं कई झरनोंके दर्शन करें। इस स्थानसे मल्लिकार्जुन पचीस मील दूर है। दुर्गम पहाड़ी मार्ग है परन्तु है रमणीय। बीच-बीचमें विश्रामस्थान भी मिलते हैं। रास्तेमें लुटेरोंका भय और जलका कष्ट रहता है इसलिये आत्माकूरसे अपने साथ भोजन जल भी ले लेना चाहिये। लुटेरोंसे बचानेके लिये निजामसरकारकी ओरसे पुलिसका प्रबन्ध रहता है। मल्लिकार्जुनसे पाँच मीलकी उतराई उतरनेपर कृष्णानदीमें स्नान कर सकते हैं। यहाँ कृष्णामें स्नान करनेका शास्त्रोंमें बड़ा माहात्म्य बताया है। इस जगह कृष्णाको पातालगंगा कहते हैं। हैदराबादकी ओरसे निजाम स्टेट-रेलवेद्वारा कुरनूल स्टेशनसे भी आत्माकूर जा सकते हैं।

घुश्मेश्वर

घुश्मेश्वरको घृष्णेश्वर तथा घुसृणेश्वर भी कहते हैं । इनकी गणना भी द्वादश ज्योतिर्लिङ्गोंके अन्तर्गत है। निजामराज्यमें निजाम-स्टेट रेल्वेके मनमाड स्टेशनसे ६६ मीलकी दूरीपर दौलताबाद स्टेशन है । वहाँसे १२ मीलकी दूरीपर वेरूलगाँवके पास भगवान् घुश्मेश्वरका सुविशाल मन्दिर है । स्टेशनसे बग्गाडीद्वारा वहाँ जा सकते हैं। यदि मोटरसे जाना हो तो दौलताबाद न उतरकर औरङ्गाबाद उतरना चाहिये । औरङ्गाबादसे घुश्मेश्वर जाते समय मार्गमें दौलताबाद या देवगिरिका सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक किला मिलता है । यह किला एक पहाड़ीकी चोटीपर है । यहां धारेश्वर शिवलिङ्ग और श्रीएकनाथ महाराजके गुरुदेव श्रीजनार्दन महाराजकी समाधिके दर्शन करने चाहिये । यहांसे आगे एलोराकी गुफाएँ आती हैं । एलोरा जानेके लिये इलोरारोड स्टेशनपर उतरना चाहिये । एलोरा इतना सुन्दर स्थान है कि बौद्ध, जैन और मुसलमानोंने भी इसकी रमणीयतासे आकर्षित होकर यहाँ अपने अपने स्थान बनवाये हैं । कुछ लोग तो यहाँके कैलासमन्दिरको ही घुश्मेश्वरका असली स्थान मानते हैं । वर्तमान घुश्मेश्वर और देवगिरिके बीचमें सहस्रलिङ्ग, पातालेश्वर, सूर्येश्वर, सूर्यकुण्ड और शिवकुण्ड आदि कई प्राचीन स्थान हैं ।

घुश्मेश्वर ज्योतिर्लिङ्गके प्राकट्यके विषयमें ऐसी कथा प्रसिद्ध है कि पूर्वकालमें देवगिरिपर्वतके पास सुधर्मा नामका एक ब्राह्मण था। उसकी सुदेहा और घुश्मा नामकी दो पत्नियाँ थीं । ये बहिनें थीं और अपने कोई सन्तान न होनेपर सुदेहाने

था। आग्रहपूर्वक अपने पतिका घुश्माके साथ पाणिग्रहण कराया था। इस कारणसे आरम्भमें तो बड़ा स्नेह रहा, परन्तु पीछे सुदेहाके हृदयमें ईर्ष्यानल सुलगने लगा। घुश्मा भगवान् शङ्करकी उपासिका थी और प्रतिदिन १०१ पार्थिव लिङ्ग बनाकर उनका पूजन करती थी। कालान्तरमें उसके पुत्र उत्पन्न हुआ और जब वह वयस्क हो गया तो उसका विवाह होनेपर घरमें पुत्रवधू भी आ गयी। यह सब देखकर सुदेहाकी ईर्ष्या विशेष बढ़ने लगी और उसने एक दिन रात्रिमें सोये हुए उस बालककी हत्या करके उसे उसी तालाबमें डाल दिया जिसमें घुश्मा शिवलिङ्गोंका विसर्जन करती थी। प्रातःकाल होनेपर जब उसकी वधूने देखा कि उसका पति शय्यापर नहीं है तथा उसका बिछौना खूनसे लथपथ हो रहा है तो वह चीख मारकर रोने लगी। बस, थोड़ी ही देरमें घरमें कुहराम मच गया। परन्तु घुश्माके चित्तपर उसका कुछ भी प्रभाव न हुआ, वह सदाकी भाँति ही भगवान्‌के ध्यान-पूजनादिमें लगी रही। जब पूजनके पश्चात् वह शिवलिङ्गोंका विसर्जन करनेके लिये तालाबपर आया तो वह लड़का जीवित होकर बाहर निकल आया और उसने अपनी माताकी इस प्रकार वन्दना की जैसे वह सर्वदा विदेशसे आकर किया करता था। इससे भी उसे कोई विशेष हर्ष न हुआ, किन्तु इसे भगवान् शङ्करकी लीला समझकर वह आनन्दमग्न हो गयी। उसकी तन्मयता देखकर भगवान् प्रकट हो गये और अपने त्रिशूलद्वारा सुदेहाका शिर छेदन करनेको उद्यत हुए। किन्तु धर्मपरायणा घुश्माने उनसे हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि प्रभो! आप मेरी बहिनको क्षमा करें। अवश्य ही उससे यह भयङ्कर पाप

वा गया है, परन्तु आपका दर्शन होनेपर तो बड़े-से-बड़ा पाप भी नहीं ठहर सकता । इसलिये आप ऐसी कृपा कीजिये कि मैं किसी प्रकार उसके अमङ्गलका कारण न बनूँ ।' घुश्माकी ऐसी उदारता देखकर भगवान् बहुत प्रसन्न हुए और उससे वर माँगनेको कहा । तब घुश्माने प्रार्थना की कि 'प्रभो ! आप सर्वदा यहीं विराजकर अपने दर्शनोंसे संसारका कल्याण करें—यही मेरी इच्छा है ।' बस, भगवान् शङ्कर 'एवमस्तु' कहकर वहाँ ज्योतिर्लिङ्गके रूपमें विराजने लगे और घुश्मेश्वर नामसे प्रसिद्ध हुए । भगवान् घुश्मेश्वरकी बड़ी महिमा है । शिवपुराणमें कहा है—

ईदृशं शैवलिङ्गं च दृष्ट्वा पापैः प्रमुच्यते ।
सुखं संवर्धते पुंसां शुक्लपक्षे यथा शशी ॥

अर्थात् ऐसे शिवलिङ्गका दर्शन करके पुरुष सब पापोंसे मुक्त हो जाता है और शुक्लपक्षमें चन्द्रमाके समान उसके सुखकी वृद्धि होती है ।

इलोराकी गुफाएँ

इलोराकी गुफाएँ दौलताबाद स्टेशनसे प्रायः सात मीलकी दूरीपर स्थित हैं । यहाँ जानेके लिये इलोरारोड स्टेशनपर भी उतर सकते हैं । गुफाओंतक पक्की सड़क बनी हुई है । ये गुफामन्दिर पहाड़ी काटकर बनाये गये हैं । इनके निर्माणमें किसी प्रकारके चूने आदि मसालेका प्रयोग नहीं किया गया है । इनकी संख्या ३५-३० के लगभग है । इनमें कैलास नामका मन्दिर सबसे बड़ा और सुंदर है । कुछ लोगोंके मतमें यह संसारका आठवाँ आश्चर्य है । यह प्रायः हजार-बारह सौ वर्षका पुराना है । इसमें भगवान्

[illegible] मन्दिर है तथा इसकी भीतरी दीवारपर [illegible] हैं। [illegible] मूर्तियोंको खण्डित करके [illegible] दिया है तो भी इनकी [illegible] पर बनी है। इसका प्राचीन नाम [illegible] बताया जाता है। कहते हैं इसे [illegible] था। यहाँ बौद्ध और जैनोंके भी [illegible] हैं।

एलिफेण्टाकी गुफाएँ

एलिफेण्टाकी गुफाएँ बम्बईसे प्राय: ६ मीलकी दूरीपर एक टापूमें हैं। वहाँ जानेके लिये नौका या स्टीमरसे जाते हैं। यहाँ दो पहाड़ोंके ऊपर पत्थरोंको काटकर कई मन्दिर बनाये गये हैं। इनका निर्माणकाल लगभग हजार वर्ष पूर्व जान पड़ता है। इन मन्दिरोंमें भगवान् शङ्कर, श्रीपार्वती, अर्धनारीश्वर तथा भगवान् विष्णु, महेशकी मूर्तियाँ विशेष दर्शनीय हैं। प्राय: तीन सौ वर्ष पूर्व यहाँ आसपासका प्रान्त पुर्तगालवालोंके अधीन था। उस समय ईसाइयोंने यहाँके मन्दिर और मूर्तियोंको खण्डित करके नष्ट कर दिया है, तो भी एलिफेण्टाकी शिल्पकला संसारमें अपना एक विशेष स्थान रखती है। चित्र तथा शिल्पकलाप्रेमी इसे बड़े आदरकी दृष्टिसे देखते हैं। गुफाओंके नीचे एक स्वच्छ जलका कुण्ड बनाया गया है तथा समुद्रसे गुफाओंतक जानेके लिये सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। बम्बईनिवासी इस स्थानको घारापुरी कहते हैं।

श्रीभीमशंकर

भीमशङ्कर ज्योतिर्लिङ्ग बम्बईसे पूर्वकी ओर करीब ७० मील की दूरीपर पूनासे प्राय ४३ मील उत्तरकी ओर भीमानदीके उद्गम-स्थानपर स्थित है। वहाँ जानेके लिये बम्बईसे पूना जानेवाली जी० आई० पी० रेलवेके नेरालनामक स्टेशनपर उतरना चाहिये। वहाँसे भीमशङ्कर प्राय १६ मील पूर्वकी ओर है। दश मीलतक बैलगाड़ीका रास्ता है, फिर पैदल चलना पड़ता है। पहाड़ी मार्गकी कठिनतासे बचनेके लिये कुछ लोग नेरालसे ४४ मील आगे तलेगाँव स्टेशनपर उतरते हैं। वहाँसे भीमशङ्कर २४ मील है और सीधा बैलगाड़ीका रास्ता है।

यहाँ शङ्करजी सह्याद्रिपर विराजमान हैं। यहींसे भीमानदी निकलती है। स्वयं शिवलिङ्गसे भी थोड़ा थोड़ा जल झरता रहता है। मन्दिरके पास प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ नाना फड़नवीसके बनवाये हुए दो कुण्ड हैं। निकट ही एक छोटी सी बस्ती है। कहते हैं, यहाँ भीमक नामका एक सूर्यवंशी राजा तप करता था। जब भगवान् शङ्करने त्रिपुरासुरको मारकर इस पर्वतपर विश्राम किया तो उसकी तपस्यासे प्रसन्न होकर उसे दर्शन दिया तथा राजा भीमकके वर मांगनेपर वे यहां ज्योतिर्लिङ्गके रूपमें निवास करने लगे।

शिवपुराणकी एक कथाके अनुसार यह ज्योतिर्लिङ्ग आसाम प्रान्तके कामरूप जिलेमें गोहाटीके पास ब्रह्मपुर पहाड़ीपर स्थित बताया जाता है। तथा कुछ लोग नैनीताल जिलेके उज्जनकनामक स्थानमें जो विशाल [illegible] है उसे श्रीभीमशङ्करका स्थान बताते हैं।

पूना

यह महाराष्ट्र प्रान्तका प्रधान नगर है। यह मूठानदीके दाहिने किनारेपर समुद्रके धरातलसे प्राय साढ़े अठारह सौ फीटकी ऊँचाईपर स्थित है, इसकी जन संख्या डेढ़ लाखके लगभग है। यहाँका जलवायु बहुत स्वास्थ्यप्रद समझा जाता है। यह समुद्रतटसे प्राय ३१ कोसकी दूरीपर है। जुलाईसे नवम्बर मासतक बम्बई गवर्नमेण्टका दफ्तर यहीं रहता है। यह दक्षिण भारतमें अंग्रेजी सेनाका भी प्रधान स्थान है। सारा नगर सफेद पत्थरके परकोटेसे घिरा हुआ है।

पूना मरहठाराज्यका प्रधान शासनस्थान रहा है। उन वीर पेशवाओंके बहुत से स्मृतिचिह्न विद्यमान हैं। यहाँका पार्वती मन्दिर समस्त महाराष्ट्र प्रांतमें मान्य है। यह पार्वतीहिल्के तीरपर पार्वतीशिखरके ऊपर सुशोभित है। इसके सिवा और भी बहुत से मन्दिर और राजप्रासाद नगरकी शोभा बढ़ाते हैं, जिनमें रुद्रेश्वर, भैरव, पाञ्चालेश्वरका गुहामन्दिर, ओङ्कारेश्वर, हरिहरेश्वर, नागेश्वर, सोमेश्वर, सङ्गमेश्वर, खण्डोबाजी, मुरलीधर, रासस्पुरके विष्णु, तुलसीबागके राम, बेलबागके विष्णु और लकड़ीपुलके विठोबा तथा भवानी, योगेश्वरी और गणपतिके मन्दिर विशेष उल्लेखनीय हैं। मन्दिरोंके सिवा यहा कृषि और इञ्जिनियरिङ्गका एक विश्वविद्यालय, मिलिटरी डेरी, पागलखाना, गोराबागान, होल्करसेतु तथा पुस्तकालय आदि और भी बहुत से दर्शनीय स्थान हैं।

इसका संस्कृत नाम 'पुण्यपुर' है। प्राचीन कालमें यहाँ प्रधानतया ब्राह्मणलोग निवास करते थे। वर्तमान समयमें भी

तिलक, गोखले आदि महाराष्ट्रीय नेताओंका कार्यक्षेत्र होनेका सौभाग्य इसी नगरको प्राप्त हुआ है। इस नगरके आसपासका पर्वतीय प्रान्त बड़ा ही मनोरम है।

इसी जिलेके प्रतापगढ नामक स्थानमें महाराज शिवाजीकी इष्टदेवी भगवती भवानीका मन्दिर है। कहते हैं, महाराज शिवाजीसे प्रसन्न होकर भगवतीने उन्हें एक अमोघ खड्ग दिया था। उसीसे वे यवनोंपर विजय प्राप्त करनेमें समर्थ हुए थे। अभीतक महाराज शिवाजीके वंशधर कोल्हापुरनरेशोंकी कुलदेवी भवानी ही है तथा उनके राज्यका निशान खड्ग है। उसके नीचे 'जय भवानी' लिखा रहता है। कोल्हापुरमें श्रीमहालक्ष्मीजीका मन्दिर है। यह इस प्रान्तका सबसे बड़ा शक्तिपीठ समझा जाता है।

महाबलेश्वर

महाबलेश्वर बम्बई प्रान्तका पहाड़ी स्थान है। ग्रीष्म ऋतुमें प्रायः गवर्नमेण्टका आफिस और गवर्नर यहाँ रहते हैं। यह बम्बईसे प्रायः दो सौ मील दक्षिण पश्चिमीघाट पर्वतमालाके ऊपर बना हुआ है। रास्ता पूना होकर जाता है। पहले रेलसे और फिर मोटरद्वारा जाना होता है। यहाँका दृश्य बड़ा ही मनोहर है। इसी जगह कृष्णानदीका उद्गमस्थान है। जहाँसे कृष्णा निकलती है वहींपर महादेवजीका एक प्राचीन मन्दिर बना हुआ है। यहाँसे प्रतापगढ़ और सिंहगढ़के किले भी पास ही हैं। अफजल खाँको मारनेके पश्चात् महाराज शिवाजी इस स्थानपर आये थे। उस समय उस विजयकी उपलक्ष्में उन्होंने इस मन्दिरका शिखर सुवर्णसे मढ़वा दिया था। यह स्थान जलवायुकी दृष्टिसे बहुत अच्छा है।

पण्ढरपुर

श्रीक्षेत्र पण्टरपुर बम्बईसे २६७ मील दक्षिण है। यहा पूना होकर जाना होता है। मार्गमें बड़े ही मनोरम पहाडी दृश्य पडते हैं। कई स्थानोंपर रेलगाड़ी सुरंगके भीतर होकर जाता है। कुडुवाडी पहुंचकर गाड़ी बदलनी पड़ती है। दो-तीन मील दूरसे ही चन्द्रभागाके तटपर बसे हुए इस पुण्य क्षेत्रकी शोभा यात्रियोंके चित्तोंको अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। स्टेशनसे क्षेत्र मील-डेढ़ मील दूर है।

महाराष्ट्र देशमें इस क्षेत्रकी बड़ी महिमा है। यह वारकरी सम्प्रदायका प्रधान तीर्थ है। भावुक भक्तगण इसे भूवैकुण्ठ या दक्षिणकी द्वारका कहते हैं। यहा प्रतिवर्ष लाखों यात्री विभिन्न प्रान्तोंसे जाकर श्रीविठ्ठल भगवान्‌के दर्शनोंसे अपने नेत्रोंको सफल करते हैं। बहुत से वारकरी साष्टाङ्ग दण्डवत् करते हुए इस पुण्य क्षेत्रकी यात्रा करते है।

वारकरी सम्प्रदायके आदिप्रवर्तक पुण्डरीक ऋषि माने जाते हैं। उनकी पितृसेवा लोकविख्यात है। एक बार उनके माता पिता उनकी गोदमें शिर रखकर सोये हुए थे। उसी समय भगवान् उनके पास पधारे। परन्तु यह सोचकर कि इस समय उठनेसे माता पिता-की नींद टूट जायगी, उन्होंने उसी प्रकार बैठे-बैठे ही भगवान्‌को प्रणाम किया और एक पासमें पडी हुई ईंट उठाकर उसपर बैठनेके लिये भगवान्‌से प्रार्थना की। भगवान् उनकी ऐसी पितृभक्ति देखकर बहुत प्रसन्न हुए और उनके आन्तरिक प्रेमवश श्रीविठ्ठलमूर्तिके रूपमें

आजतक एक ईंटपर ही खड़े हुए हैं। भगवान् विट्ठल ही वारकरी सम्प्रदायके प्रधान उपास्यदेव हैं। पुण्डरीक ऋषिके पीछे श्रीज्ञानेश्वर, नामदेव, एकनाथ, तुकाराम एवं रामदास आदि महात्माओंने इस धर्मका बड़ा प्रचार किया है।

इस सम्प्रदायके अनुयायियोंका नियम है कि आषाढ़ी और कार्तिकी एकादशियोंपर अवश्य पण्ढरपुरकी यात्रा करें। इन यात्रायोंको 'वारा' कहते हैं। इससे इस सम्प्रदायका नाम 'वारकरी' पड़ गया है। पण्ढरपुर पहुँचनेपर यात्रीका सबसे पहला कर्तव्य यह है कि तीर्थ पुरोहितके यहाँ अपना सामान रखकर नंगे पैर जाकर श्रीभगवान्के दरबारमें हाजिरी दे। बहुत लोग तो सारा यात्राभर जूता नहीं पहनते।

श्रीविट्ठलभगवान्का मंदिर बहुत प्राचीन है। इसका जीर्णोद्धार सं० १२२० में हुआ था। अतः अपने वर्तमान रूपमें भी यह प्रायः साढ़े छः सौ वर्ष पुराना है। यह अत्यन्त सुदृढ़ और कलापूर्ण है। इसमें आठों दिशाओंमें आठ द्वार बने हुए हैं। मुख्य द्वार पूर्वकी ओर है। चन्द्रभागासे मुख्य द्वारतक पक्की सड़क बनी हुई है, जिसके दोनों ओर पुष्पमाला, मिश्री, पेड़े एवं नारियल आदि पूजन सामग्रीकी दूकानें हैं। भगवान्के सिंहासनवाली कोठरीमें कोई झरोखा नहीं है। इसलिये उसमें प्रकाशके लिये दिन रात सात दीपक जलते रहते हैं। मूर्ति श्यामवर्ण है और प्रायः ढाई तीन हाथ

भगवान् कटिप्रदेशपर हाथ रखे एक ईंटपर खड़े हुए हैं। दक्षिणा पगड़ा है, अगपर धोती एवं

गज है तथा मन्दिरपर चन्दनका लेप लगा है। भगवान्के शिखर पर लक्ष्मीके रूपमें श्रीगरुड़जी विराजमान हैं।

जिस समय यात्री मन्दिरमें प्रवेश करते हैं वे 'द्वारकानाथ की जय' के घोषसे उसे गुञ्जायमान कर देते हैं। उस समय तीर्थयात्रीके चित्तमें एक प्रकारके आनन्दमय उल्लासकी लहर-सी उठने लगती है। भगवान्की छवि देखते ही बनती है। इस ठाकुर मन्दिरपर महाराष्ट्रके अनेकों भावुक भक्त प्रभुको अपना सर्वस्व समर्पण कर चुके हैं। दशहरा, दिवाली, मकरसंक्रान्ति और रामनवमीको आपका विशेष शृंगार होता है। इस समय आपको जो आभूषण पहनाये जाते हैं उनका मूल्य दस पन्द्रह लाखके लगभग बताया जाता है।

भगवान्की सेवा पूजाका बड़ा सुन्दर प्रबन्ध है। विशेष आज्ञा लेनेपर यात्री स्वयं भी पूजा कर सकता है। इसके लिये दो आनेका टिकट लगाकर सरकारी मामलतदार (तहसीलदार) से आज्ञा लेनी पड़ती है। यह पूजा षोडशोपचारसे वेद मन्त्रोंद्वारा होती है। इसमें प्रायः पचास साठ रुपये लगते हैं। द्विजातियोंको तो स्वयं पूजा करनेका अधिकार मिल जाता है, परन्तु शूद्रोंको ब्राह्मणोंद्वारा करानी पड़ती है।

भगवान्के मन्दिरके पीछे उसी अहातेके भीतर रुक्मिणी, सत्यभामा, राधिका तथा महालक्ष्मीके मन्दिर हैं। रुक्मिणीको यहाँ 'रखुमाई' कहते हैं। यह मूर्ति बड़ी ही भावोत्पादक है। भगवान्के दाहिनी ओर श्रीबलरामजीका मन्दिर है। रुक्मिणीजीने मन्दिरके

जगमोहनमें ही तुलजाभवानीकी मूर्ति है। मन्दिरके बाहर जो प्रथम सीढ़ी है उसे 'नामदेव पायरी' कहते हैं। नामदेवजी निरन्तर भगवान्‌के सामने मन्दिरके द्वारपर ही रहते थे। यहीं उनकी समाधि भी बनी है। यहीं भक्तवर चोखामेलाकी भी समाधि है। मन्दिरमें भीतर प्रवेश करते ही एक वृक्षके नीचे कान्होपात्राकी समाधि है।

पण्ढरपुर भीमानदीके तटपर बसा हुआ है। उसे यहाँ चन्द्रभागा कहते हैं। यहाँकी जनसंख्या पचास हजारके लगभग है। शहरमें बिजलीकी रोशनी और जलकल आदिकी सुव्यवस्था है। यहाँकी इमारतोंमें अधिकतर पत्थर लगे हुए हैं। यहाँ पण्डोंकी संख्या दो-तीन सहस्रके लगभग है। ये लोग बहुत शान्त हैं, अन्य स्थानोंके समान यहाँ पण्डोंसे यात्रियोंको कोई कष्ट नहीं पहुँचता। नगरमें श्रीज्ञानेश्वर, एकनाथ भानुदास आदि महात्माओंकी समाधियोंकी प्रतिनिधिरूपा समाधियाँ बनी हुई हैं। उनपर प्रतिवर्ष असली समाधिस्थानोंसे इन महात्माओंकी पालकियाँ आती हैं। उनके साथ आनेवाली बहुत सी कीर्तन मण्डलियाँ अपनी सुमधुर ध्वनिसे नामामृतकी वर्षा करके श्रोताओंको कृतार्थ कर देती हैं। नवद्वीपके समान इस पुण्यधाममें भी हर समय हरिनामसंकीर्तनकी ध्वनि होती रहती है।

नागेश्वर

नागेश्वरज्योतिर्लिङ्ग गोमतीद्वारकासे बेटद्वारका जाते समय बारह तेरह मील पूर्वोत्तरकी ओर मार्गमें पड़ता है। इसके आविर्भावके विषयमें शिवपुराणमें ऐसी कथा आती है कि एक सुप्रिय नामका [illegible] और शिवभक्त वैश्य था। वह एक बार नौकामें कहीं-

की यात्रा कर रहा था कि इसी समय अकस्मात् दारुक नामका एक राक्षस उसे उसके अन्य साथियोंके सहित उठाकर अपनी पुरीमें ले आया और कारागारमें बन्द कर दिया। सुप्रिय वहाँ भी भगवान् शंकरका आराधना करता रहा और अपने साथियोंमें भी शिवभक्तिके संस्कार डालने लगा। धीरे-धीरे यह समाचार दारुकके कानोंतक पहुँचा। उसने आकर देखा तो सुप्रियको ध्यानावस्थित पाया। तब उसने उसे धमकाकर कहा, 'रे मूढ! यह आँख मूँदकर न क्या षड्यन्त्र रच रहा है?'

किन्तु इसपर भी सुप्रियकी समाधि भङ्ग न हुई। तब उसने अपने सेवकोंको उसका वध करनेकी आज्ञा दी। भगवान् शंकर यह अत्याचार न देख सके, उन्होंने ज्योतिर्लिङ्गरूपमें प्रकट होकर सुप्रियको अपना पाशुपतास्त्र प्रदान किया। वह उससे समस्त राक्षसोंका संहार कर शिवलोकको चला गया। भगवान्‌के आदेशानुसार उस ज्योतिर्लिङ्गका नाम 'नागेश्वर' पड़ा। इसके दर्शनोंका बड़ा माहात्म्य है। कुछ लोगोंके मतमें यह ज्योतिर्लिङ्ग निजामराज्यान्तर्गत औढ़ाग्राममें है, जो चौंडी स्टेशनसे १२ मीलके लगभग है, तथा कोई अल्मोड़ामें १७ मील उत्तरपूर्वमें स्थित यागेश या जागेश्वरशिवलिङ्गको नागेश्वरज्योतिर्लिङ्ग मानते हैं।

आबू

आबू पर्वत या माउण्ट आबू राजपूताने और गुजरातका प्रधान पर्वतीय स्थान है। यहाँ राजपूतानेकी रियासतोंके ब्रिटिश प्रतिनिधि (A G G) का दफ्तर है। अपने प्राकृतिक सौन्दर्य-

की दृष्टिसे इस प्रान्तमें यह स्थान अनुपम है। ऊँचे-ऊँचे पर्वतोंकी गोदमें सुविशाल नक्की तालकी शोभा बड़ी ही मनोमोहक है। यह ताल यहाँका प्रधान तीर्थ है। कहते हैं इसे नखमऋषिने नखोंसे खोदा था, इसीसे इसका नाम नक्की या नखी ताल हुआ है। इस तालका घेरा एक मीलके लगभग है। इसके आस पासकी पर्वतमालापर बड़ी दूरतक राजपूतानेकी विभिन्न रियासतोंके राजकीय बँगलोंकी शोभा देखते ही बनती है। जिस प्रकार यह स्थान राजनैतिक और प्राकृत दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण है उसी प्रकार धार्मिक दृष्टिसे भी इसका महत्त्व कम नहीं है। बहुत प्राचीन कालसे यह महात्माओंकी तपोभूमि और एक पवित्र तीर्थके रूपमें सम्मानित रहा है।

माउण्ट आबू जानेके लिये यात्रियोंको अहमदाबादसे दिल्लीकी ओर जानेवाली बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवेके आबूरोड स्टेशनपर उतरना चाहिये। यहाँसे यह स्थान प्रायः १८ मीलकी दूरीपर है। यात्राके लिये नियमित मोटरसर्विसकी व्यवस्था है। मोटर-द्वारा माउण्ट आबू पहुँचनेपर यात्रियोंको होटल या कुछ निर्दिष्ट स्थानोंपर ठहरना होता है। यहाँ कोई धर्मशाला नहीं है। किंतु ऐसे कुछ मन्दिर हैं जिनमें यात्रियोंके ठहरनेकी सुव्यवस्था है। इनमें श्रीरघुनाथजीका मन्दिर और दूलेश्वर महादेवका मन्दिर प्रधान हैं।

श्रीरघुनाथजीका मन्दिर—यह मन्दिर नक्की तालके तटपर सुशोभित है। इसमें प्रायः २०० यात्री बड़ी सुविधापूर्वक ठहर सकते हैं। मन्दिरके अधिकारी यात्रियोंकी सब प्रकारकी सुविधाओं-

का ध्यान रखते हैं। श्रीरघुनाथजीकी मूर्ति बड़ी ही मनामोहिनी है। इस मन्दिरके अधीन कुछ गुफाएँ भी हैं, जिनमें एकान्तप्रेमी महात्मागण या भजनानन्दी पुरुष ठहर सकते हैं। यह रामानन्दी वैष्णवोंका स्थान है।

श्रीदूलेश्वर महादेवका मन्दिर—यह स्थान भी रघुनाथ मन्दिरके समीप ही है। यह दशनामी सन्यासियोंका अखाड़ा है। इसमें ७० ८० यात्रियोंके ठहरनेका स्थान है। कुछ गुफाएँ इस मन्दिरके भी अधीन हैं।

इनके सिवा राजपूताना-होटल तथा कई छोटे-छोटे विश्राम-भवन भी हैं, जिनमें यात्री सुभीतेसे ठहर सकते हैं। यहाँके प्रधान तीर्थोंका विवरण इस प्रकार है—

अर्बुदादेवी—आबूका असली नाम अर्बुदगिरि है। अर्बुद-गिरिके प्रधान शिखरपर श्रीअर्बुदादेवीका स्थान है। यह देवीके ५१ प्रधान पीठोंमेंसे है। मन्दिरतक पहुँचनेके लिये पत्थरकी सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। भगवतीकी मूर्ति एक अँधेरी गुफाके भीतर है, जिसमें मनुष्य बैठकर ही घुस सकता है। गुफामें हर समय दीपक जलता रहता है, यहाँसे बस्तीका दृश्य बड़ा सुहावना जान पड़ता है।

वसिष्ठाश्रम और गोमुख—यह स्थान बस्तीसे प्रायः चार मीलकी दूरीपर है। यहाँ पहुँचनेके लिये प्रायः आधे मील नीचे उतरना पड़ता है। इसके लिये पत्थरकी सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। यहाँ श्रीवसिष्ठजीका मन्दिर है और एक कुण्डमें गोमुखमेंसे जलकी धारा गिरती है।

अचलेश्वर–यह शिवमंदिर प्राय [illegible]
समझा जाता है । इसके आस-पास और [illegible] ।

दिलवाड़ा–दिलवाड़ाका जैन [illegible]
समस्त भारतमें प्रसिद्ध है । यह स्थान [illegible]
दूरीपर है । यहाँ ३-४ जैनमन्दिर हैं । [illegible]
सुन्दर हैं । इनकी संगमरमरकी [illegible]
शिल्पज्ञ भी आश्चर्यचकित रह जाते हैं । [illegible]
अठारह करोड़ इक्यावन लाख और [illegible]
लाख लिखी हुई है ।

गुरुशिखर–यहाँ भगवान् [illegible]
होते हैं । यह स्थान आबूसे [illegible]
शिखरपर बना हुआ है । इसके [illegible]
भी है ।

इनके सिवा सनसैट ([illegible]) [illegible]
पॉइण्ट आदि और भी कई [illegible]
हैं । यहाँ छावनी, स्कूल, [illegible]
संस्थाएँ हैं ।

हाजर गया है। मवाराके लिये बैलगाड़ी और ताँगे आदिके सिवा नियमित मोटरसर्विसका भी प्रबन्ध है। बारह मीलकी दूरीपर एक बस्ती आती है, जिसे श्रीअम्बिकाजीका नगर कहते हैं। इसमें प्रवेश करते ही श्रीहनुमान्‌जी और भैरवजीके मन्दिर मिलते हैं।

आरासुर पर्वत मफेद पत्थरका है। इसलिये श्रीअम्बिकाजीको आरासुरवाली कहते हैं। भगवतीका मन्दिर सगमरमरका है और बहुत प्राचीन है। मन्दिरके आस-पास ५०-६० धर्मशालाएँ हैं जिनमें पलग, बिछौना और बरतन आदिका भी प्रबन्ध है। अम्बिकाजी गुजरात प्रान्तकी आराध्य देवी हैं। सारे प्रान्तके बालकोंका मुण्डनसंस्कार प्राय यहीं होता है। कहते हैं, भगवान् कृष्णका मुण्डन भी यहीं कराया गया था। गुजरातमें शायद ही ऐसा कोई ग्राम हो जहाँ अम्बाजीके उपासक न हों। इनके उपासकोंमें हिन्दू ही नहीं, अपि तु पारसी, जैन और मुसलमान आदि भी हैं। इनकी कृपासे इनके भक्तोंकी सब प्रकारकी कामनाएँ पूर्ण होती रहती हैं।

माताजीके दर्शन सबेरे ८ बजेसे दोपहरको बारह बजेतक होते हैं। भोजनका थाल रखनेके बाद दरवाजा बन्द कर दिया जाता है। फिर सूर्यास्तके समय बड़े ठाटके साथ आरती होती है। मन्दिरमें अगणित छत्र और घण्टे लटके हुए हैं। आरतीके समय यात्रीलोग उन घण्टोंकी ध्वनिमें ध्यानमग्न हो जाते हैं। माताजीको तीनों समय तीन प्रकारकी पोशाकें पहनायी जाती हैं, जिससे वे प्रात काल बाला, मध्याह्नमें युवती और सायाह्नमें वृद्धा जान पड़ती

है। वास्तवमें माताजीका कोई आकृति नहीं है। केवल एक बीसा यन्त्र है, जो शृंगारकी विभिन्नताके कारण वैसा दिखायी देता है।

यहाँ आनेपर यात्री खाने, जलाने और शरीरमें लगानेमें तेल का व्यवहार नहीं करते। सब काम घृतसे ही होते हैं। सपत्नीक होनेपर भी उन्हें ब्रह्मचर्यसे रहना होता है। मन्दिरके पास एक विशाल चौक है, इसे चाचर कहते हैं। यहाँ एक बड़ा तवा घीसे भरकर जलाया जाता है। रजस्वला स्त्री, सूतक लगे हुए लोग तथा अधर्मावलम्बी चाचरमें नहीं जा सकते। यदि कोई ऐसा करता है तो तवेमें जलते हुए घीमें धड़ाका होने लगता है।

साधारणतः प्रत्येक पूर्णिमाको श्रीअम्बिकाजीके यहाँ मेला लगता है, परन्तु भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक और चैत्रकी पूर्णिमाको विशेष भीड़ होती है।

मन्दिरके पृष्ठभागकी ओर थोड़ी दूरपर मानसरोवर नामका एक स्वच्छ जलका ताल है। उसके दक्षिण पार्श्वमें अजाईमाताका स्थान है। यहाँसे एक कोशकी दूरीपर पहाड़के ऊपर गब्बर (गह्वर) नामका स्थान है। गब्बरके शिखरपर तीन स्थान और भी हैं। एक माताजीके खेलनेकी जगह, दूसरा पारसपीपला कहलाता है और तीसरा श्रीकृष्ण भगवान्का झूला है। यहीं श्रीयशोदाजीने भगवान्का मुण्डन कराया था। कहते हैं, इसी स्थानपर भगवान् कृष्णने रुक्मिणीजीका हरण किया था।

श्रीअम्बाजीसे प्रायः तीन मीलकी दूरीपर उदुम्बरवन है। यहाँ भगवान् कोटीश्वर शंकरका मन्दिर है। यहींसे सरस्वती नदी निकल

है, जो मिट्टीका बना होता है जिसके ऊपर श्रीराम लिखा है। पास ही एक श्रीसम्भवनाथ मन्दिर और एक झरना भी है जो एक कुण्डमें गिरता है। इसे कोटीतीर्थ कुण्ड कहते हैं। यहाँ जाड़ा प्रतिवर्ष आता है। इस स्थानपर जैन पुराण एवं हरिवंश पुराणका बड़ा माहात्म्य है। श्रीअम्बाजीके मन्दिरके पासवाली पहाड़ीपर सफेद पत्थरके बनाये हुए जैनमन्दिर हैं, जिन्हें कुंभारियाजी कहते हैं। कुंभारियाजी और दिलवाड़ेके मन्दिरोंके निर्माणमें जो प्रचुर संगमरमर व्यय हुआ है वह निर्माताको श्रीअम्बाजीकी कृपासे यहाँके निकटवर्ती आरासुर पर्वतशिखरसे मिला था। इसकी स्मृतिमें इन मन्दिरोंमें श्रीअम्बाजीकी मूर्तियाँ भी पधरायी गयी हैं।

श्रीअम्बिकाजीका स्थान दाँता राज्यके अन्तर्गत है। विशेष अवसरोंपर राज्यकी ओरसे बड़ा सुन्दर प्रबन्ध होता है। यहाँ भीड़की प्रधानता है, परंतु राज्यके सुप्रबन्धके कारण किसीकी कोई हानि नहीं होती।

श्रीएकलिंगजी

राजस्थानके इतिहासमें मेवाड़ प्रान्तका नाम बड़े आदरसे लिया जाता है। उसकी वर्तमान राजधानी उदयपुरसे प्रायः साढ़े तेरह मील उत्तरकी ओर श्रीएकलिंगजीका सुप्रसिद्ध स्थान विराजमान है। इस बस्तीको कैलासपुरी भी कहते हैं। यह बस्ती बहुत प्राचीन और रमणीय है। भगवान् एकलिंगजीकी स्थापना मेवाड़के महाराणाओंके पूर्वज श्रीबापा रावलने विक्रमी सं० ८०० के लगभग की थी।

श्रीसेठिया ... पुस्तकालय।

उस समय वे नागदामें राज्य करते थे। नागदाके पास एक बाँसके झुण्डमें यह स्वयम्भू मूर्ति छिपी हुई थी। उस जगलमे हारीतराशि-नामक एक तपस्वी ऋषि रहते थे। सबसे पहले उन्हें ही इस मूर्तिका दर्शन हुआ और वे इसकी पूजा करने लगे। उन्हाका कृपासे बापाको इसका दर्शन हुआ और उन्होंने उस स्थानपर एक मंदिर बनवा दिया। फिर हारीतराशिके द्वारा श्रीएकलिंगजीका वर पाकर उन्होंने चित्तोड़पर चढाइ कर दी और वहाँके मौर्यवंशी राजा मानको मारकर अपना आधिपत्य स्थापित किया। तबसे उन्हाके वंशज मेवाड़पर राज्य करते आ रहे हैं। ये लोग श्रीएकलिंगजीको अपना इष्टदेव और मेवाड़का वास्तविक अधिपति मानते हैं तथा अपनेको उनका दीवान समझते हैं। श्रीएकलिंगजीकी महिमा द्वादशज्योतिर्लिंगोंके समान है, मुसलमानी शासनकालमे जैसे यवनोंका बहुत से हिंदू-मन्दिरोंपर आक्रमण होता रहा है वैसे ही इसपर भी हुआ है, किंतु तत्कालीन मेवाड़ाधिपति इसका जीर्णोद्धार कराते रहे हैं।

श्रीएकलिंगजीकी मूर्ति श्याम पाषाणकी एव चतुर्मुख है। इसके चार मुख क्रमश ब्रह्मा, विष्णु, महेश और सूर्यके हैं। जलहरीके सहित इसकी ऊँचाई प्राय ढाई फुट हैं। मन्दिरकी ऊँचाइ प्राय ५० फीट और व्यास प्राय ६० फीट है। इसके दो प्रधान द्वार हैं। पश्चिमी द्वार सर्वसाधारणके लिये है तथा दक्षिणी द्वारसे अंगरेज, मुसलमान आदि अन्य धर्मावलम्बी दर्शन कर सकते हैं। पूर्वीय द्वारके पार्श्वोंमें श्रीराधा और पार्वतीनाथकी मूर्तियाँ हैं, वायव्यकोणमें गणेशजी एव स्वामिकार्तिकेयजी विराजमान हैं तथा

पारकमाम पूर्वका आर श्रीगंगाजीकी मूर्ति है। मंदिरके पश्चिममें आर सभामण्डपमें चाँदीके नन्दीश्वर हैं।

श्रीएकलिंगजीके मन्दिरके आस पास और भी बहुत से देवालय और स्थान आदि हैं, जिनमें मीराबाईका मंदिर, अम्बिकामाता, कालिकामाता, नाथनाथ तथा चारभुजा एवं गणेशजीके मंदिर प्रधान हैं। मन्दिरके पास ही इन्द्रसागर नामका एक विशाल ताल है। उसके तटपर भी कई शिखरबंद मंदिर हैं। ईशान कोणमें देलवाड़की सड़कपर हारीतराशिकी गुफा, विन्ध्यवासिनीदेवी और भैरवके प्राचीन मन्दिर हैं। यहा यात्रियोंके लिये राज्यकी ओरसे बनवायी हुई एक सराय है। उससे थोड़ी दूर एक झरना है। जहाँ धारेश्वर महादेवका मंदिर और तक्षककुण्ड है। कहते हैं, तक्षकनागने राजा जनमेजयके यज्ञमें भागकर यहा अपने प्राण बचाये थे। इस कुण्डका एक अञ्जलि जल पीनेसे सर्पका विष उतर जाता है। इसके पास ही बाघेल ताल है। फिर थोड़ी दूर चलनेपर प्राचीन नागदा बस्ती आरम्भ हो जाती है। यहा बाप्पा रावलकी समाधि तथा कई प्राचीन मंदिर हैं, जो शिल्पकलाकी दृष्टिसे बहुत सुन्दर हैं। इस जगह जैनतीर्थंकर श्रीअद्भुतजीकी भी एक विशाल मूर्ति है।

भगवान् एकलिंगजीकी पूजा वैदिक और तान्त्रिक विधिसे प्रतिदिन तीन बार होती है। आपकी सेवा एवं राग भोगके लिये राज्य की ओरसे प्राय एक लाख रुपया वार्षिकका बजट बना हुआ है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक सोमवार और प्रदोषको भगवान्की विशेष रूपमें पूजा होती है। तथा श्रावण शु० १४, दीपमालिका, अन्न

कूट, मकरसक्रान्ति, वसन्तपञ्चमी एवं महाशिवरात्रिको विशेष उत्सव होते हैं। चैत्र कृ० १३ को भगवान् फाग खेलते हैं। वैशाख कृ० १ को आपकी स्थापना हुई थी। इसलिये उस दिन भी विशेष उत्सव होता है। इनमेंसे अधिकांश उत्सवोंपर महाराणा स्वयं पधारते हैं। भगवान्के लिये लाखों रुपयोंकी लागतके रत्नजटित आभूषण हैं, जो उन्हें विशेष अवसरोंपर धारण कराये जाते हैं। इस स्थानपर दो सदावर्त भी हैं, जिनमें साधु महात्मा और अभ्यागतोंको सीधे दिये जाते हैं।

यहाँका दृश्य भी बड़ा ही मनोहर है। आस पासकी पर्वत-मालाने इसे साक्षात् कैलासपुरीहीकी शोभा प्रदान कर दी है। जलवायुकी दृष्टिसे भी यह स्थान बहुत अच्छा है। उदयपुरसे एकलिङ्गजीके स्थानतक पक्की सड़क बनी हुई है, जो नाथद्वारेतक चली गयी है। श्रीनाथद्वारा जानेवालोंको इस स्थानके दर्शन भी अवश्य करने चाहिये। उदयपुरसे पश्चिमकी ओर पाँच मीलपर एक नन्देश्वर महादेवका स्थान है। उसके पास ही एक कुण्ड है। इसका जल सर्वदा एकरस रहता है तथा यहाँ एक बड़े आश्चर्यकी बात है कि इस कुण्डमें एक महादेवजीका लिंग स्वयं ही चारों ओर घूमता रहता है।

काँगड़ा

काँगड़ाका सुरम्य प्रदेश पंजाब प्रान्तके पर्वतीय भागमें शिमला और जम्मूके मध्यमें स्थित है। महाभारतमें इस भूभागको त्रिगर्त्त और कुलूत कहा है। कुलूतका अपभ्रंश ही कुलू है। यह

प्रान्त जलवायुका दृष्टिसे बहुत ही स्वास्थ्यप्रद है। इसमें अनेक प्रकारके नाड़ फलोंके उत्पत्तिस्थान हैं तथा सेब, नासपाती और अनार आदि इस प्रदेशके फल भी बहुतायतसे होते हैं। स्थानीयके बटाल नामक स्थानपर व्यास नदीके प्रवाहको एक कृत्रिम सुरंगद्वारा लौटाकर मार्ग हटाकर एक ऊँचे स्थानसे गिराया है। इससे स्वर्ग धजानेके लिये बिजली पैदा की जायगी। इस कार्यमें प्राय चौदह करोड़ रुपया व्यय हो चुका है। इस स्थानतक आवश्यक सामान ले जानेके लिये पठानकोटसे योगीन्द्रनगरतक एक सौ आठ मील लम्बी रेल निकाली गयी है। इसी लाइनपर ज्वालामुखीरोड और कांगड़ा नामक स्टेशन हैं, जहाँसे यात्री इस प्रदेशके प्रधान तीर्थोंको जाते हैं। इस प्रान्तमें ज्वालाजी, नगरकोट, चिन्तपूर्णी और वैद्यनाथ—ये चार प्रमुख तीर्थ हैं। आगे इनका संक्षिप्त परिचय दिया जाता है—

ज्वालाजी—यह स्थान ज्वालामुखीरोड स्टेशनसे पन्द्रह मीलकी दूरीपर है। मोटर लारी जाने योग्य सुरम्य पर्वतीय सड़क बनी हुई है। इसमें प्राय १) प्रति व्यक्ति भाड़ा लगता है। ज्वालामुखीका मन्दिर एक १५-१६ मील लम्बे पर्वतकी तराईमें बना हुआ है, जिसे कालीधर पर्वत कहते हैं। ज्वालाजीको जो पुराना मार्ग जालन्धर होकर गया है, उससे इस पर्वतका दृश्य बड़ा ही चित्ताकर्षक जान पड़ता है। यह दूरसे एक विशाल दुर्गकी दीवार-सा दिखायी देता है।

यह स्थान भारतके सुप्रसिद्ध शक्तिपीठोंमेंसे है। यहाँ सती देवीकी जीभ गिरी थी। पर्वतके ढालपर प्राय ४०-५० सीढ़ी चढ़नेपर एक विशाल मन्दिर बना हुआ है, जिसका मुख्य शिखर

श्रीकाशीविश्वनाथ-मन्दिरके समान सुवर्णसे मढ़ा हुआ है । इसके पास ही एक तास चालीस फीट लम्बा सुवर्णमण्डित त्रिशूल है । इस मन्दिरका प्राय हजार-बारह सौ वर्ष पूर्व कांगड़ेके राजा ससार-चन्द्रने बनवाया था तथा इसपर सुवर्णपत्र महाराज रणजीतसिंहका लगवाया हुआ है । मन्दिरके आंगनमें गर्भगृहके सामने एक चबूतरेपर दो सुवर्णमण्डित सिंह भी रखे हुए हैं ।

मन्दिरमें प्रवेश करते ही एक ओर झरनोंके शीतल जलसे भरा हुआ एक तालाब-सा है । इसमें हाथ पैर धोकर गर्भगृहमें जाना होता है । गर्भगृहके रजतमण्डित द्वार बड़े ही सुन्दर हैं । इसके बीचमें एक छोटा-सा कुण्ड सा बना हुआ है । इसके सामने दीवारमें पत्थरकी दराजमें होकर एक प्रचण्ड अग्निशिखा निकलती है, जो प्राय एक हाथ मोटी और इतना ही ऊँची है । यह नीचेसे तो कर्पूरके समान श्वेत वर्ण है किन्तु ऊपरकी ओर उत्तरोत्तर नील-वर्ण होती गया है । ये ही श्रीज्वालाजी हैं । इन्हें दूध, पेड़ा और हलुआका भोग लगाया जाता है । हलुआ या पेड़ा ज्योतिसे लगा दिया जाता है, इससे उसका कुछ अंश झुलस जाता है । दूधका लोटा भी ज्योतिसे लगाकर ही भोग लगाया जाता है । इससे वह ज्योति लोटेमें आ जाती है और अलग हटानेपर भी कुछ देर उसीमें घूमती रहती है । इससे दूध कुछ कम हो जाता है । ज्योतिके समीप हल्की-सी गर्मी जान पड़ती है किन्तु इसका स्पर्श करनेसे हाथ नहीं जलता । इस मन्दिरमें ४-५ जगह और भी ज्योतियां निकल रही हैं तथा एक कुण्डमें दूधके समान श्वेतवर्ण जल भरा हुआ है ।

कहते हैं कि एक बार इस पीठकी परीक्षाके लिये सम्राट् अकबरने इस ज्योतिके ऊपर लोहेके तवे लगवाये, किंतु उनमें ज्वाला दबी नहीं। फिर एक स्रोतसे नहर लाकर ज्वालापर जल छुड़वाया पर भी यह इसी प्रकार जलती रही। ऐसा करनेमें अकबरके नेत्रोंकी ज्योति नष्ट हो गयी। तब उसने नंगे पैरों भगवतीकी यात्रा करके एक छत्र समर्पण किया। यह छत्र चाँदीका है और अभीतक मन्दिरमें रखा हुआ है।

भगवती ज्वालाजीकी शयन आरती बड़ी दर्शनीय होती है। ऐसा भावमय दृश्य अन्यत्र बहुत कम देखनेको मिलेगा। इस तीर्थकी स्थिति बड़ी ही रमणीय है। यहाँ ठहरनेके लिये स्थानकी भी कमी नहीं है। रेलवेका मार्ग एक मनोहर घाटीमें होकर गया है। यहाँकी यात्रा करनेवालोंको पहले मार्गमें अमृतसर भी पड़ता है। वहाँका सुवर्णमन्दिर संसारभरमें प्रसिद्ध है। उसके दर्शन अवश्य करने चाहिये। ज्वालाजीका धूप बहुत प्रसिद्ध है।

विद्येश्वरी—ज्वालामुखीसे अट्ठाईस मीलकी दूरीपर भगवती विद्येश्वरीका सुप्रसिद्ध मन्दिर है। इन्हें नगरकोट या कोट काँगड़ाकी देवी भी कहते हैं। यहाँ जानेके लिये काँगड़ा स्टेशनपर उतरना चाहिये। देवीजीका पुराना मन्दिर सन् १९०५ के भूकम्पमें गिर गया था। अब दूसरा मन्दिर तैयार हो गया है। यहाँ सतीजीका मुण्ड गिरा था तथा मूर्ति भी मुण्डकी ही है। उसके ऊपर सुवर्णमय छत्र सुशोभित है। भगवतीके सामने एक चाँदीसे मढ़े हुए स्थानमें यन्त्र रखा हुआ है। यह भारतवर्षके सुप्रसिद्ध सिद्धपीठोंमेंसे है। प्रतिवर्ष लाखों यात्री यहाँ माताजीके दर्शनार्थ आते

है। पंजाब और युक्तप्रान्तमें इसी देवीपीठकी प्रतिष्ठा सबसे अधिक है। मन्दिरके अहातेमें एक कुण्ड भी है, जिसमें बहुत-से प्राचीन धूपस्तम्भ रखे हुए हैं।

चिन्तपूर्णी—जालन्धरसे पुराने रास्तेद्वारा ज्वालाजीको जाने पर होशियारपुरसे ३० मीलकी दूरीपर चिन्तपूर्णीजीका प्रसिद्ध मन्दिर है। यह मन्दिर मुख्य सड़कसे प्रायः डेढ़ मीलकी दूरीपर है। यहाँसे ज्वालाजी प्रायः २८ मील हैं। इसके आस-पास बड़ा सघन पार्वत्य प्रदेश है। श्रीज्वालाजी, चिंतेश्वरी और चिन्तपूर्णीजी ये तीनों पीठ काँगड़ेकी घाटीके सुप्रसिद्ध शक्तित्रिकोणके तीन सिरोंपर विराजमान हैं। इन तीनोंहीके दर्शनार्थ प्रतिवर्ष लाखों यात्री आते हैं।

वैद्यनाथ—श्रीवैद्यनाथ महादेवका मन्दिर पठानकोट-योगीन्द्रनगर लाइनपर कीरग्राम नामक गाँवमें है। यह प्रायः हजार डेढ़ हजार वर्ष पुराना है। शिल्पकलाकी दृष्टिसे यह मन्दिर बहुत ही सुन्दर है। इसे पंजाब प्रान्तके शिवमन्दिरोंमें सर्वोत्तम कहा जा सकता है। इसमें भगवान् शंकरका लिङ्गविग्रह विराजमान है। ज्वालाजीकी यात्रा करनेवाले प्रायः सभी यात्री इनके दर्शनार्थ भी आते हैं। इनके पास श्रीसिद्धनाथ महादेवका एक और भी मन्दिर है, जो इस मन्दिरकी अपेक्षा भी अधिक प्राचीन माना जाता है। इसमें श्रीमहादेवजीका अनगढ़ लिङ्ग विराजमान है।

अमरनाथ

काश्मीरके पूर्वीय भागमें समुद्रतलसे प्रायः पन्द्रह हजार फीट ऊँचे पर्वतपर भगवान् अमरनाथका गुहामन्दिर स्थित

इसे लोग यहाँका अमरेश्वरनामक ज्योतिर्लिङ्ग मानते हैं। इसमें विशेष ध्यान बात यह है कि यहाँका शिवलिंग और मन्दिर दोनों ही मनुष्यकृत न होकर प्रकृतिकी कृति हैं। इस स्थानकी यात्रा वर्षमें केवल एक दिन श्रावण शु० १५ को होती है।

यह स्थान काश्मीरकी राजधानी श्रीनगरसे ८५ मीलकी दूरीपर है। इसका दो तिहाई मार्ग मोटरद्वारा आरामसे कट जाता है, शेष रास्ता दुर्गम है और उसे पैदल ही पार करना होता है। इसमें क्रमशः चन्दनवाड़ा, शेषनाग और पञ्चतरणी तीन पड़ाव पड़ते हैं। श्रावण शु० १४ को शामतक यात्रियोंका दल पञ्चतरणी पहुँच जाता है। यह स्थान अमरनाथपर्वतकी तलहटीमें उसके द्वारके समान है। पूर्णिमाको सबेरे ही यहाँसे पर्वतपर चढ़कर गुफामें भगवान्‌के दर्शन कर सब यात्री उसी दिन पञ्चतरणी लौट आते हैं। इस चढ़ाईमें प्रायः एक मील बर्फके ऊपर चलना पड़ता है। गुफासे प्रायः एक मील इस ओर यह बर्फीला रास्ता समाप्त हो जाता है। वहाँ एक पानीका नाला है। इसमें स्नान करनेका एक विशेष नियम है। यात्रियोंको चाहिये कि अपने सब वस्त्र उतारकर केवल लँगोट पहनकर इसमें स्नान करें और फिर भीगे हुए शरीरसे ही भगवान्‌के दर्शन करके फिर इसी स्थानपर लौटकर वस्त्र धारण करें। बहुत से श्रद्धालु पुरुष ऐसा करते भी हैं। इससे वहाँ सर्दी नहीं लगती। इस जलमें कोई ऐसा पदार्थ है जिससे शरीर सूखने पर ऐसा मालूम होता है मानो देहमें भस्म लगी हुई है। गुफाके भीतर तीन हिमलिङ्ग दिखायी देते हैं, जो श्रीमहादेव, पार्वती और गणेशजीके प्रतीक बताये जाते हैं। ये स्वयं ही बनते

हैं। गुफाकी छतसे बूँद-बूँद जल टपकता है, उससे शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे चन्द्रमाकी कलाओंके साथ क्रमशः ये लिङ्ग भी बढ़ते रहते हैं तथा पूर्णिमाके पीछे इनका आकार घटने लगता है। यहाँ-तक कि अमावस्याको ये बिल्कुल गल जाते हैं। यही क्रम प्रतिमास चलता रहता है।

यात्राके अवसरपर गुफामें एक ब्राह्मण वहाँके पुजारीरूपसे पूजाका सामान ग्रहण करते हैं। ये यात्रियोंके साथ श्रीनगरसे ही उनके अग्रणी होकर जाते हैं और उनके साथ ही श्रीनगर लौट आते हैं। इनके हाथमें एक चाँदीकी छड़ी रहती है, जो श्रीनगर लौटनेपर वहाँके मन्दिरमें रख दी जाती है।

यमुनोत्तरी-गङ्गोत्तरी

उत्तराखण्डके तीर्थोंका वर्णन करते समय मूलग्रन्थमें केवल बदरी, केदार और उनके रास्तेमें आनेवाले तीर्थोंका ही वर्णन किया है। परंतु यमुनोत्तरी और गङ्गोत्तरीकी महिमा भी कुछ कम नहीं है, इनके बिना तो वह वर्णन अधूरा ही है। अधिकांश यात्री तो इन सब स्थानोंकी यात्रा एक साथ ही करते हैं, कोई अलग-अलग भी करते हैं। अस्तु, अब हम संक्षेपमें इन दोनों महातीर्थोंका इनके मार्गवर्ती तीर्थोंसहित वर्णन करते हैं।

यमुनोत्तरी गङ्गोत्तरी जानेके लिये आरम्भमें तीन प्रधान मार्ग हैं—(१) ऋषिकेशसे देवप्रयाग टेहरी-धरासू होकर, (२)

ऋषिकेशसे नरेन्द्रनगर टहरी भल्डियाना होकर और (३) देहरादूनसे मसूरी-भल्डियाना होकर। इनमें उत्तरोत्तर परवर्ती मार्ग छोटा है। पहले दो मार्ग टहरीमें मिल जाते हैं। इनमें प्रथम मार्गसे ऋषिकेशसे टेहरी ८० मील है और द्वितीय मार्गसे प्राय ४० मील है। इन दोनों मार्गोंसे भल्डियाना क्रमशः ९१½ और ५१½ मील हैं तथा तीसरे मार्गसे देहरादूनसे भल्डियाना ४६ मील है। फिर भल्डियानासे यमुनोत्तरी ५९½ मील तथा गङ्गोत्तरी ८८½ मील है। अब इन मार्गोंका क्रमशः वर्णन किया जाता है—

ऋषिकेशसे देवप्रयागतक मोटरका मार्ग तैयार हो गया है इसका वर्णन मुख्यग्रन्थमें किया जा चुका है। देवप्रयागसे टेहरी ३५ मीलके फासलेपर है। बीचमें ७-८ चट्टियाँ पड़ती हैं देवप्रयागसे ४ मीलकी कड़ी चढ़ाईके बाद **सौंवेगाँव** चट्टी आती है। उससे १ मीलपर **धौलारघाटका झरना** और वहाँसे २ मीलपर **सिड़कोट** नामकी चट्टी है। इन तीनों पड़ावोंमें ठहरने और भोजन बनानेका सुभीता नहीं है। जलकी भी बहुत दिक्कत है। सिड़कोटसे ८ मीलकी दूरीपर **खरसाड़चट्टी** है। यहाँ यात्रियोंके ठहरने और रसोई बनानेकी सुविधा है। इससे १ मीलपर **नागो,** फिर ४ मीलपर **कैन्थोली** और उससे ५ मीलके अन्तरपर **खालीचट्टी** है। यहाँ भी ठहरने और भोजन बनानेका सुपास है। यहाँसे १० मील आगे टेहरी है।

दूसरे रास्तेसे ऋषिकेशसे **नरेन्द्रनगर** प्राय ५ मील है। रास्ता पगदण्डीका और कड़ी चढ़ाई है। नरेन्द्रनगरतक मोटरका

रास्ता भी है उसमें यह १० मील पड़ता है। नरेन्द्रनगर टेहरी नरेशका बसाया हुआ नवीन नगर है। यहां डाकखाना और छोटा-सा बाजार भी है। यहांसे १० मीलपर फकोटचट्टी है। बीचमें ६ मीलपर एक दूकान और भी पड़ती है परन्तु वहां ठहरनेका विशेष सुभीता नहीं है। फकोटसे ५ मीलपर एक और चट्टी है। और उससे ५ मीलपर चमुआँचट्टी है। यह चट्टी इस मार्गमें सबसे ऊँचे स्थानपर स्थित है। यहांसे दस मीलकी उतराईके बाद टेहरी राजधानी है

टेहरी—टेहरीतक दोनों मार्ग बहुत चढ़ाई उतराईके हैं, इनमें पहला गंगाजीकी घाटीमें होकर आता है किन्तु दूसरा किसी नदीकी घाटीका अनुसरण नहीं करता। टेहरी नगर श्रीभागीरथी और भिलंगनाके संगमपर बसा हुआ है। संगमस्थानको गणेशप्रयाग कहते हैं। यहाँ राजमहल, कचहरियां और मन्दिर आदि अनेक प्रकारकी इमारतें हैं। बाजार भी काफी बड़ा है तथा ठहरनेके लिये कई धर्मशालाएँ हैं। गंगोत्री यमुनोत्री जानेवाले यात्रियोंके अतिरिक्त हैं। क्षेत्रपालकी स्थिति यह विशाल युक्त प्रान्तमें सबसे बड़ा है। परन्तु इसकी वार्षिक आय केवल अठारह लाख है। यहाँसे ७ मीलपर पीपलचट्टी है और इससे आगे ५ मील आगे मल्टियाना है। यहाँ भवानदुनकी सड़क, गंगोत्रीकी सड़कसे मिल जाती है। अतः यहाँतक, भवानदुनवाली सड़कसे, यात्रीलोग भी निकलते करते हैं।

इससे ७ मीलकी दूरीपर सुआखोली, फिर एक मीलपर झालसी और उससे ५ मील आगे कौड़लीचट्टी है। इसके पास एक पगडण्डीका मार्ग धनसूतर गया है। उससे प्राय १० मीलका दूर बच जाता है। परन्तु रास्ता अपेक्षाकृत कठिन पड़ता है। इसकी और कौड़ियामें भोजनकी दूकानें और ठहरनेके स्थान भी हैं। कौड़लीसे ६ मीलकी दूरीपर धनौल्टी है। यहाँ कुछ महाजनोंकी दूकानें और बाबा कालीकमलीवालेकी धर्मशाला तथा सदावर्त हैं। जलका भी सुभीता है। टेहरी स्टेटकी ओरसे एक डाकबंगला भी है। यहाँका प्राकृतिक दृश्य बड़ा ही मनोहर है। धनौल्टीसे चार मील आगे रुहवार नामका एक पहाड़ है। इस लाइनमें यह सबसे ऊँचा स्थान है। इससे चार मील आगे कानाताल है। यहाँ भी पंचायती धर्मशाला और सदावर्त हैं। भोजन बनानेका भी सुभीता है। यहाँसे भण्डियानातक प्राय दस मीलकी उतराई है। बीचमें थौलधार और बड़वासगाँव नामकी दो चट्टी आती हैं।

भंडियानाम बाबा कालीकमलीवालाकी धर्मशाला और सदावर्त है। धर्मशालासे प्रायः ५० गज नीचे गंगाजीकी धारा बहती है। यहाँ दोनों सड़कोंका संगम होनेके कारण लोग प्रायः ठहरते हैं। यहाँसे ५ मीलके अन्तरपर **छामगाँव** है। यहाँ नैपाल स्टेटकी एक धर्मशाला है। उसमें ठहरनेका सुपास है। उससे ५ मील आगे **नगुणचट्टी** है। यहाँ गंगाजी पास ही आ जाती हैं। इस रास्तेमें पहले-पहल गंगास्नानका सुभीता यहीं मिलता है। इससे ७ मील आगे **धरासू** है। यहाँ ठहरने और भोजन बनानेका विशेष सुभीता है। बाबा कालीकमलीवालोंकी धर्मशाला और सदावर्त है तथा पास ही भागीरथीकी धारा प्रवाहित होती है। धरासूसे नौ मील आगे **डुण्डाचट्टी** है। यहाँ भी धरासूके समान ही सब प्रकारका सुपास है परन्तु गंगाजी दूर हैं। एक झरनेके जलसे निर्वाह करना पड़ता है। इससे ७ मील आगे **लक्कड़घाट** चट्टी है। यह बिल्कुल गंगाजीके किनारे है और इससे २ मील आगे **उत्तरकाशी** है।

धरासूसे बायें हाथको यमुनोत्तरीकी सड़क गयी है। जो यात्री यमुनोत्तरी गंगोत्तरी दोनों तीर्थोंकी यात्रा करनेवाले होते हैं वे धरासूसे सीधे उत्तरकाशी न आकर यमुनोत्तरी होकर एक दूसरे रास्तेसे उत्तरकाशी आते हैं। नीचे उस मार्गका विवरण दिया जाता है।

धरासूसे बायें हाथकी ओर एक पहाड़ी नालेके किनारे ऊपरकी ओर सड़क चढ़ती है। यह बराबर ऊँची ही चढ़ती गयी है। इस सड़कपर धरासूसे तीन मीलपर **कल्याणी** उससे पाँच मील आगे **कुमण्डा** और फिर तीन मीलपर **सिलक्याराचट्टी**

है । यहाँ पास ही एक झरना है और एक झोपड़ीमें मोदीकी दुकान तथा दूसरीमें यात्रियोंके ठहरनेका स्थान है । इधर रात्रिके समय शीत अधिक रहता है । इससे आगे चार मीलकी कड़ी उतराई चढ़ाईके बाद **रानीका डाँडा** आता है । यहाँसे एक सड़क नइकोटको गया है और एक उत्तरकाशीको । इस ओर लकड़ी चीरनेका व्यापार अधिक किया जाता है । फिर आठ मीलके उतार-चढ़ावके पश्चात् **गङ्गणानीचट्टी** आती है । यहाँ शीत कुछ कम है । यात्रियोंके ठहरनेके लिये बाबा कालीकमलीवालेकी धर्मशाला है । मोदियोंकी दूकानें तथा सदावर्त भी है । यहाँका दृश्य बहुत सुन्दर है । इससे छः मील आगे **यमुना या कुथनौरचट्टी** है । उससे चार मीलपर **ओजरीचट्टी**, फिर तीन मीलके बीहड़ रास्तेके पश्चात् **राणागाँव** और उससे तीन मील आगे **हनुमानचट्टी** आती है । यहाँसे चार मील आगे **खरसालीचट्टी** है । यह अच्छा बड़ा और सुन्दर कस्बा है । यहाँ यात्रियोंके ठहरने आदिका भी बहुत सुभीता है । पास ही मार्कण्डगंगा और यमुनाजीका सङ्गम तथा शनैश्चरका मन्दिर है । यहाँसे आगे चार मीलकी कड़ी उतार-चढ़ाव पार करनेपर श्रीयमुनोत्तरीजीके दर्शन होते हैं ।

यमुनोत्तरी—यमुनोत्तरी श्रीयमुनाजीका उद्गमस्थान है । यह बन्दरपुच्छपर्वतकी एक घाटी है । यहाँसे कैलासका दक्षिणी भाग प्रायः १४ मील दूर है, परन्तु बर्फकी अधिकताके कारण वहाँ कोई जा नहीं सकता । यमुनाजीका प्रवाह जलकी कई धाराएँ मिलकर बनता है । इनमेंसे कोई-कोई तो इतनी गर्म हैं कि उनमें कुछ देरतक आलू या चावलकी पोटली डालनेसे वे उबल

जाते हैं। यहाँ शीतकी बहुत अधिकता है। यमुनाजीका छोटा-सा मन्दिर है तथा दो तीन धर्मशालाएँ हैं। इनके सिवा अग्निकुण्ड, गौरीकुण्ड, सूर्यकुण्ड आदि चार-पाँच कुण्ड और एक गुफा भी है। भोजनकी साधारण सामग्री यहाँ मिल जाती है।

यमुनोत्तरीसे उत्तरकाशी जानेके लिये राणागाँव लौटकर आना होता है। यहाँसे ७ मील **कुयनोर**, फिर १० मील **उपरिकोट** और उससे ६-७ मीलकी दूरीपर उत्तरकाशी है। यह रास्ता बहुत उतारका है।

उत्तरकाशी—यह इस प्रान्तका एक प्रधान तीर्थ और कस्बा है। यहाँ गंगाजीपर पक्काघाट बना हुआ है जिसे मणिकर्णिका कहते हैं। उसके पास ही बाबा कालीकमलीवालोंकी विशाल धर्मशाला और सदावर्त है। इसके सिवा यहाँ पञ्जाबक्षेत्र, जयपुरकी राजमाताका सदावर्त तथा दण्डीक्षेत्र—ये तीन सत्र और भी हैं। कस्बाके बीचमें एक खुले मैदानमें श्रीविश्वनाथजीका प्राचीन मन्दिर है। इसके सामनेकी ओर अष्टधातुका बहुत प्राचीन त्रिशूल लगा हुआ है। इसके सिवा श्रीमटेश्वर, लक्षेश्वर, अन्नपूर्णाजी शङ्कराचार्यजी और भरतजी आदिके कई छोटे-बड़े मन्दिर और भी हैं। राजमाता जयपुरका एकादश शिवलिङ्गका मन्दिर बहुत सुन्दर है। इसके सिवा यहाँ साधु-महात्माओंके आश्रम और कुटियाँ भी बहुत अधिक हैं। ग्रीष्मऋतुमें तो यहाँ महात्माओंकी संख्या दो हजारके लगभग हो जाती है। भजननिष्ठ, एकान्तसेवी और तपस्वी पुरुषोंके लिये यह स्थान बहुत अच्छा है।

उत्तरकाशी उत्तर गढ़वाल जिलेका स्थान है। यहाँ इस समय एक डिप्टी व सिटी मजिस्ट्रेट रहता है। उत्तरकाशीमें तारघर नहीं है। गङ्गोत्तरीकी डाक यहींसे थोड़ी जाती है। इस नगरमें सरकारकी ओरसे एक मिडिलस्कूल, अस्पताल और पुलिसस्टेशन भी है। यहाँकी बस्ती बड़ी है। प्रायः १५-२० दूकानें हैं जिनपर अधिकांश आवश्यक सामग्री मिल जाती है।

उत्तरकाशीसे नौ मील आगे **मनेरीचट्टी** है। यहाँ भी बाबा कालीकमलीवालोंकी धर्मशाला और सदावर्त है। इससे आगे आठ मीलपर **भटवारीचट्टी** है। यहाँ भास्करेश्वर महादेवका प्राचीन मंदिर है। कहते हैं इस स्थानपर सूर्यभगवान्‌ने तप किया था। यहाँ भी पंचायती धर्मशाला और सदावर्त है तथा मोदियोंकी दूकानें हैं। इस स्थानसे दाहिने हाथको गंगाजी पार करके एक ६० मील लम्बी सड़क त्रियुगीनारायणको गया है। गंगोत्तरीकी यात्राके बाद केदारनाथ-बदरीनाथके दर्शनोंके लिये जानेवाले यात्री इसी मार्गसे जाते हैं। भटवारीसे १० मील आगे **गंगणानीचट्टी** है। यहाँतक रास्ता बहुत उतार-चढ़ावका है। यहाँ एक ४०-५० फीट ऊँचा जलप्रपात है तथा सड़कसे कुछ ऊँचाईपर एक उष्ण जलका कुण्ड तथा पराशरमुनिका मंदिर है। इस चट्टीपर भी ठहरने और भोजन बनानेका खूब सुभीता है।

गंगणानीसे पाँच मील आगे **गाँडाचट्टी** है और उससे चार मीलकी दूरीपर कड़ी चढ़ाईके पश्चात् **सूकीचट्टी** मिलती है। यहाँसे गंगाजी बहुत दूर रह जाती हैं। परन्तु इस चट्टीकी धर्मशाला

बहुत सुन्दर है तथा दृश्य भी बहुत सुन्दर है। बाबा कालीकमलीवालेकी कृपासे यहाँ भी सब प्रकारका सुभीता है। यहाँसे पाँच मील आगे **हरसिलचट्टी** है। इस स्थानमें नन्दनवन-सा सुन्दर दृश्य और कहीं नहीं मिलता। थोड़ी-थोड़ी दूरीपर श्याम गंगा, हरिगंगा और नीलगंगा आदि ३-४ नदियाँ उतरती हुई आकर श्रीभागीरथीजीसे अभिन्न हो जाती हैं। इस स्थानको हरि-प्रयाग कहते हैं। यहाँ तिब्बती व्यापारियोंका पड़ाव है। श्रीभागीरथीके तटपर सुन्दर धर्मशाला और मन्दिर सुशोभित हैं। ठहरनेका अच्छा सुभीता है।

हरसिलसे दो मील आगे **धरालीचट्टी** है। रास्ता बिल्कुल समान है, चढ़ाई-उतराई नहीं है। आस-पासकी पर्वतमाला देवदारुके वनसे आच्छादित है। यहाँका दृश्य बड़ा सुन्दर है। धरालीमें श्रीगंगाजीकी तीन धाराएँ हो गयी हैं। छोटा-सा पक्का घाट है, उसपर आमने-सामने शिवजी और पार्वतीजीके मन्दिर हैं। इसके सामने दूसरे तटपर मार्कण्डेय ऋषिका आश्रम है। गाँवका नाम मुखावा या मुखागाँव है। इसे मुखीमठ भी कहते हैं। यहाँ गंगोत्तरी जीके पण्डोंके घर हैं। शीतकालमें श्रीगंगाजीकी चलमूर्तिको यहीं ले आते हैं, फिर अक्षयतृतीयाको गंगोत्तरीजीके पट खुलनेपर उसे वहाँ ले जाते हैं। धरालीसे ढाई मील आगे **जाँगलचट्टी** है यह जह्नु ऋषिकी तप स्थली है। इससे चार मील आगे बहुत चढ़ाईके बाद **भैरोंघाटीचट्टी** आता है। यहाँ शीत बहुत पड़ता है। गंगाजी बहुत नीचे रह जाती हैं। जल ब…

नन्दद्वारा लाया गया है। बाबा कालीकमलीवालोंकी धर्मशाला और सदावर्त भी है तथा एक छोटा सा भैरोंजीका मन्दिर है। यहाँसे छ मीलकी चढ़ाई उतरनेके बाद गङ्गोत्तरीजीके दर्शन होते हैं।

गङ्गोत्तरी—यह राजा भगीरथका तप स्थान है। गङ्गाजीके तटपर भगीरथशिलाके दर्शन होते हैं। श्रीगङ्गाजीका बड़ा सुन्दर छोटा सा मन्दिर है, जिसमें श्रीगङ्गाजीकी सुवर्णमयी मूर्ति और उसके आस-पास यमुनाजी, सरस्वतीजी, भगीरथ और श्रीशङ्कराचार्यजीकी मूर्तियाँ हैं। यात्रीगण गर्भगृहमें प्रवेश नहीं कर सकते, पण्डालोग उनकी पूजा ग्रहण करते हैं। यहाँ बाबा कालीकमलीवालोंकी ओरसे धर्मशाला और सदावर्त है। उसके सिवा और भी कई धर्मशालाएँ हैं। बस्तीके पास ही गङ्गाजीमें केदारगङ्गा नामकी एक नदी मिलती है। गङ्गाजीको पार करनेके लिये यहाँ एक छोटा-सा पुल भी है। उसके दूसरी ओर कुछ साधुओंकी कुटियाएँ हैं। इधरके मकानोंकी छत और दीवार प्रायः देवदारुकी लकड़ीकी होती है। यहाँके बाजारमें भोजनकी सभी आवश्यक सामग्री मिल जाती है। परन्तु उत्तरकाशीसे इधर सब चीजें उत्तरोत्तर महँगी होती जाती हैं, क्योंकि यहाँतक सामान लानेके लिये बड़ी कठिनाई पड़ती है।

गङ्गोत्तरीसे श्रीगङ्गाजीका उद्गमस्थान प्रायः अठारह मील आगे है। उसे **गोमुख** कहते हैं। वहाँतक जानेके लिये पगडण्डीका रास्ता है जो केवल वैशाख मासके लगभग खुला रहता है। उससे पहले बर्फकी अधिकताके कारण और पीछे गङ्गाजीमें जल बढ़ जानेके कारण उस मार्गसे जाना सर्वथा असम्भव है।

मानसरोवर—कैलास

मानसरोवर और कैलास—ये दोनों नाम भारतीय जनतामें अच्छी तरह परिचित हैं। जो लोग विशेष पढ़े लिखे नहीं हैं वे भी कुछ-न-कुछ दन्तकथा इनके विषयमें सुना लेंगे। भारतवर्षमें इतने प्रसिद्ध होनेपर भी ऐसे बहुत कम लोग हैं जिन्होंने इन महातीर्थोंके दर्शन किये हों, अधिकांश भारतीयोंको तो इनकी स्थितिका भी पता नहीं है। ये दोनों तीर्थ भारतकी सीमासे बाहर हिमालयपर्वतके उत्तर तिब्बत देशमें विद्यमान हैं। वहाँतक जानेके लिये प्रायः तीन सौ मील लम्बा दुर्गम पर्वतीय मार्ग पैदल पार करना होता है। फिर इतनी ही दूर लौटकर आना होता है। इस यात्रामें कम-से-कम दो मासका समय लग जाता है। मार्गमें भी कुछ कम कष्ट नहीं है। ऐसे बहुत कम स्थान हैं जहाँ ठहरनेका सुभीता है। यात्रियोंको अन्य आवश्यक सामग्रीके सिवा एक छोटा-सा डेरा, मिट्टीका तेल और स्टोव ले जाना भी परम आवश्यक है, क्योंकि तिब्बतकी सीमामें प्रवेश करनेपर जलानेके लिये लकड़ी या कोयला मिलना बहुत ही कठिन है।

मानसरोवर और कैलासके लिये चार मार्ग गये हैं। (१) सतलज-की घाटीमें होकर (२) गङ्गोत्तरीसे प्रायः दो मील नीचेसे एक रास्ता ऊपरकी ओर जाता है, (३) बदरीनारायणकी ओर होकर और (४) अल्मोड़ा धारचूला होकर। इनमें पहला मार्ग सबसे लम्बा और सबकी अपेक्षा कठिन है तथा अन्तिम सबसे सुगम है। अधिकांश यात्री इसी मार्गसे जाते हैं।

अल्मोड़ा जानेके लिये यात्रियोंको आर० के० आर० लाइनके काठगोदाम स्टेशनपर उतरना चाहिये। वहाँसे अल्मोड़ा ८४ मील है। वहाँतक जानेके लिये नियमित मोटरगाड़ियोंका प्रबन्ध है। पहाड़की टेढ़ी मेढ़ी और उतार-चढ़ाववाली सड़कपर मोटरमें यात्रा करते हुए तरह-तरहके विचित्र दृश्य आते हैं, जिससे इतना लम्बा मार्ग कटनेमें कुछ विशेष कष्ट नहीं होता। किंतु किन्हीं किन्हींको इस घुमाव फिरावमें चक्कर भी आने लगता है और वमन हो जाता है। ऐसे लोगोंको यथासम्भव भोजन कम करना चाहिये। काठगोदामसे अल्मोड़ातक भवाली और रानीखेत—ये दो प्रसिद्ध पर्वतीय स्थान मार्गमें आते हैं। जो लोग नैनीताल देखना चाहें उन्हें काठगोदामसे नैनीतालके लिये बदलना चाहिये और वहाँसे अल्मोड़ाके लिये। नैनीताल संयुक्त प्रान्तका सर्वोत्कृष्ट पर्वतीय नगर है। यहाँका दृश्य बड़ा ही सुन्दर है। यहाँ ग्रीष्मकालमें प्रान्तीय गवर्नरका दफ्तर रहता है। इस स्थानपर नैनादेवीका मंदिर है। यह भारतके प्रधान शक्तिपीठोंमें गिना जाता है। यह एक विशाल तालके तटपर स्थित है। इस तालके कारण ही इस नगरका नाम 'नैनीताल' हुआ है।

अल्मोड़ासे मानसरोवरतकका मार्ग तीन विभागोंमें विभक्त किया जा सकता है। इनमेंसे प्रत्येक विभागके आरम्भमें नये कुली करने पड़ते हैं। पहले अल्मोड़ासे धारचूलातकके लिये कुलियोंका प्रबन्ध करना चाहिये। अल्मोड़ामें श्रीरामकृष्ण विवेकानन्द मिशनसे इस यात्राके विषयमें बहुत सी उपयोगी बातें मालूम हो सकती हैं तथा

गर्वियाका रास्ता भारतवर्ष और तिब्बतकी सीमापर है। यहाँसे आगे घोड़े या झब्बू नामक एक पहाड़ी पशुपर चढ़कर यात्रा की जा सकती है। बबूका आकार भैंसके समान होता है तथा इसके शरीरपर बहुत लम्बे-लम्बे बाल होते हैं। इसे चँवरगाय भी कहते हैं। सामान भी इन्हींकी पीठपर लादकर ढोया जाता है। गर्वियासे आगे तिब्बत देश है इसलिये वहाँ भारतीय भाषा समझनेवालोंका भी अभाव सा है। अतः यहाँसे यात्रियोंको एक दुभाषिया भी साथमें लेना पड़ता है। अब आगे मार्ग यद्यपि चढ़ाई-उतराईका नहीं है सर्वथा समतल भूमि है, परन्तु उसमें वृक्षोंका प्राय अभाव ही है तथा वायु भी बहुत शीत और तीक्ष्ण चलता है। इसके सिवा लुटेरोंका भी भय है। अन्य देश होनेके कारण उसमें प्रवेशकी आज्ञा लेनी पड़ती है तथा सिक्का भी बदलना होता है। ये दोनों कार्य तारक्याकोट मण्डी पहुँचनेपर किये जा सकते हैं। तारकलाकोट से मानसरोवरतक पहुँचनेमें चार दिन लगते हैं।

मानसरोवर हृदके पश्चिममें रावणताल है। इन दोनोंके बीचमें जो भूखण्ड है उसकी चौड़ाई प्रायः १ मीलसे २ मीलतक होगी। इसके उत्तरी सिरेपर एक नाला है, जो इन दोनों महाहृदोंको मिला देता है। यह विशेष गहरा नहीं है। इन दोनों सरोवरोंकी परिधि ६० मीलके लगभग है। इनका प्रशान्त गम्भीर नील वक्षःस्थल हृदयमें अद्भुत भावोंको जाग्रत् कर देता है। इतनी लम्बी और विकट यात्राके पश्चात् इन शान्त सरोवरोंके दर्शन करके चित्त अत्यन्त विश्रान्त हो जाता है। ये सरोवर चार महानदियोंके उद्गमस्थान हैं।

इनमेंसे पूर्वको ओर ब्रह्मपुत्र, दक्षिणमें कर्णाली, पश्चिममें सतलज और उत्तरमें सिन्धुनदी प्रवाहित होती है। इन सरोवरोंकी स्थिति समुद्रतलसे प्राय पन्द्रह सहस्र फीट ऊँची है।

मानसरोवर और रावणतालके उत्तरी भागसे प्राय २० मीलकी दूरीपर कैलासपर्वत है। यह भगवान् शङ्करका निवासस्थान है। इसका आकार-प्रकार देखनेसे यह स्वयं भी एक विशाल शिवलिङ्ग-सा जान पड़ता है। इसकी ऊँचाई समुद्रतलसे प्राय बाईस हजार फीट बतायी जाती है। इसका शिखर सदा हिमाच्छादित रहता है। यात्रीलोग इसकी परिक्रमा और पूजनादि करते हैं। परिक्रमामें ४ ५ दिन लग जाते हैं। यहाँ शीतका साम्राज्य है, कहीं-कहीं बर्फके ऊपर होकर भी चलना पड़ता है। परिक्रमामें कुछ गुफाएँ और कुण्ड मिलते हैं। इनमें गौरीकुण्ड सबसे अधिक प्रसिद्ध है। यह समुद्रतलसे प्राय अठारह सहस्र फीटकी ऊँचाईपर है। इसकी परिधि आध मीलके लगभग है तथा इसके अधिकांश भाग सदैव बर्फकी तरह जमा रहता है। कैलास पर्वतके शिखरसे इस कुण्डतक अर्धगोलाकार हिमाच्छादित ढाल दिखायी पड़ता है। इसे कैलासका पिनाक (धनुष) कहते हैं। भगवान् शङ्करका प्रसिद्ध शस्त्र पिनाक प्रसिद्ध ही है, जिसके कारण वे 'पिनाकपाणि' कहे जाते हैं। यह मानो उसीका प्रतीक है।

इस प्रकार श्रीकैलासका दुर्लभ दर्शन करके यात्रियोंको फिर उपर्युक्त मार्गसे ही लौटकर आना होता है। क्योंकि इसके इतना दुर्गम स्थान और कोई नहीं है। अतएव यहाँ जानेके

गर्वियाकी बस्ती भारतवर्ष और तिब्बतकी सीमापर है। यहाँसे आगे घोड़े या झब्बू नामक एक पहाड़ी पशुपर चढ़कर यात्रा की जा सकती है। झब्बूका आकार भैंसके समान होता है तथा इसके शरीरपर बहुत लम्बे-लम्बे बाल होते हैं। इसे चँवरगाय भी कहते हैं। बोझा भी इन्हींकी पीठपर लादकर ढोया जाता है। गर्वियाँसे आगे तिब्बत देश है, इसलिये वहाँ भारतीय भाषा समझनेवालोंका भी अभाव-सा है। अतः यहाँसे यात्रियोंको एक दुभाषिया भी साथ लेना पड़ता है। अब आगे मार्ग यद्यपि चढ़ाई-उतराईका नहीं है, सर्वथा समतल भूमि है, परंतु उसमें वृक्षोंका प्रायः अभाव ही है तथा वायु भी बहुत शीत और तीक्ष्ण चलती है। इसके सिवा लुटेरोंका भी भय है। अन्य देश होनेके कारण उसमें प्रवेशकी आज्ञा लेनी पड़ती है तथा सिक्का भी बदलना होता है। ये दोनों कार्य ताकलाकोट मण्डी पहुँचनेपर किये जा सकते हैं। ताकलाकोटसे मानसरोवरतक पहुँचनेमें चार दिन लगते हैं।

मानसरोवर ह्रदके पश्चिममें रावणताल है। इन दोनोंके बीचमें जो भूखण्ड है उसकी चौड़ाई प्रायः १ मीलसे ८ मीलतक होगी। इसके उत्तरी सिरेपर एक नाला है, जो इन दोनों महाह्रदोंको मिला देता है। यह विशेष गहरा नहीं है। इन दोनों सरोवरोंकी परिधि ६० मीलके लगभग है। इनका प्रशान्त गम्भीर नील जल हृदयमें अद्भुत भावोंको जाग्रत् कर देता है। इतनी लम्बी और विकट यात्राके पश्चात् इन शान्त सरोवरोंके दर्शन करके चित्त अत्यन्त विश्रान्त हो जाता है। ये सरोवर चार महानदियोंके उद्गमस्थान हैं।

इनमेंसे पूर्वकी ओर ब्रह्मपुत्र, दक्षिणमें करनाली पश्चिममें सतलज और उत्तरमें सिन्धनदी प्रवाहित होती हैं। इन सरोवरोंकी स्थिति समुद्र-तलसे प्राय पन्द्रह सहस्र फीट ऊँची है।

मानसरोवर और रावणताल्के उत्तरी भागसे प्राय १० मील-की दूरीपर कैलासपर्वत है। यह भगवान् शङ्करका निवासस्थान है। इसका आकार-प्रकार देखनेमें यह स्वयं भी एक विशाल शिव लिङ्ग-सा जान पड़ता है। इसकी ऊंचाई समुद्रतलसे प्राय बाईस हजार फीट बतायी जाती है। इसका शिखर सर्वदा हिमाच्छादित रहता है। यात्रीलोग इसकी परिक्रमा और पूजनादि करते हैं। परिक्रमामें ४५ दिन लग जाते हैं। यहाँ शीतका साम्राज्य है, कहा कहीं बर्फके ऊपर होकर भी चलना पड़ता है। परिक्रमामें कुछ गुफाएँ और कुण्ड मिलते हैं। इनमें गौरीकुण्ड सबसे अधिक प्रसिद्ध है। यह समुद्रतलसे प्राय अठारह सहस्र फीटकी ऊँचाईपर है। इसकी परिधि आधे मीलके लगभग है तथा इसके जलका ऊपरी भाग सर्वदा बर्फकी तरह जमा रहता है। कैलास पर्वतके शिखरसे इस कुण्डतक अर्धगोलाकार हिमाच्छादित ढाल दिखायी देता है। इसे कैलासका पिनाक (धनुष) कहते हैं। भगवान् शङ्करका प्रसिद्ध शस्त्र पिनाक प्रसिद्ध ही है, जिसके कारण वे 'पिनाकपाणि' कहे जाते हैं। यह माना उसीका प्रतीक है।

इस प्रकार श्रीकैलासका दुर्लभ दर्शन करके यात्रियोंको फि उपर्युक्त मार्गसे ही लौटकर आना होता है। हिन्दुओंके तीर्थों इतना दुर्गम स्थान [illegible] नहीं है। इसलिये यहाँ जानेवाले

इन दिनों कम ही होते हैं। किंतु वृद्ध, दुर्बल या सुकुमार पुरुषोंको तो इसकी यात्राका साहस ही नहीं करना चाहिये। यहाँ पहुँचकर किसी मन्दिर या महात्माजीके दर्शन भी नहीं होते। कुछ बौद्ध गुम्फा अवश्य मिलते हैं। परन्तु इनमें भी साधुताकी अपेक्षा धूर्तता अधिक देखी जाती है। यह सब होते हुए भी इस शान्त, पवित्र और दिव्य स्थानकी यात्रा निष्फल हो ऐसी बात नहीं है। अदृष्ट फलके अतिरिक्त ऐसे शान्त और प्राकृत सौन्दर्यपूर्ण स्थानोंके दर्शनसे हृदयको जो कुछ कम शान्ति नहीं मिलती। अतः जिनमें सामर्थ्य है उन्हें एक बार पृथिवीके स्वर्गरूप इस मानसरोवरकी अवश्य यात्रा करनी चाहिये।